देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयताम्।। ऋ० १/८९/२

ISSN : 2395-7115
Sept.. 2026
Vol.-24, Issue-3

Impact Factor
8.642

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES PRINT RESEARCH JOURNAL



Editor :
Dr. Naresh Sihag, Advocate

Publisher :
Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)
#202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

स्व. चौ. गुगनराम सिहाग व उनकी छोटी बहन स्व. श्रीमती गीना देवी के शुभाशीर्वाद से प्रकाशित

JOURNAL OF HUMANITIES, COMMERECE, SCIENCE, MANAGEMENT & LAW

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES PRINT RESEARCH JOURNAL

https://bohalshodhmanjusha.com/

Vol. 24 ISSUE-3, Part-2 (सितम्बर 2026) ISSN : 2395-7115

प्रेरणा :

चौ. एम. सिहाग

सम्पादक :

डॉ. नरेश सिहाग 'बोहल', एडवोकेट

एम.ए. (समाजशास्त्र, लोक प्रशासन, हिन्दी शिक्षा शास्त्र, पत्रकारिता),
एम.फिल (समाजशास्त्र, हिन्दी) एम. लिब., एल-एल.बी. (ऑनर्स),
डिप्लोमा पंचायती राज (रजत पदक विजेता), पी.एच.डी. (हिन्दी)
डी.लिट् (मानद उपाधि), काठमांडू, नेपाल

कार्यकारी सम्पादक :

प्रो. शकुन्तला चौहान

शामली, उत्तर प्रदेश।

प्रकाशक :

गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वैलफेयर सोसायटी (रजि.)

202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड, भिवानी-127021 (हरियाणा)

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL REFEREED/REVIEWED AND INDEXED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES PRINT RESEARCH JOURNAL
ISSN 2395-7115

सम्पादकीय सम्पर्क :
डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट
202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड,
भिवानी-127021 (हरियाणा)
Email : nksihag202@gmail.com
मो. 09466532152

Published by :
Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)
202, Old Housing Board,
Bhiwani-127021 (Haryana) INDIA
Email : grsbohal@gmail.com
Facebook.com/bohalshodhmanjusha
Website : www.bohalsm.blogspot.com
WhatsApp : 9466532152

All Right Reserved by Publisher & Editor

Price

Individual/Institutional : 1100/-

Disclaimer :

1. Printing, Editing, Selling and distribution of this Journal is absolutely honorary and non-commercial.
2. All the Cheque/Bank Draft/IPO should be sent in the name of Gugan Ram Educational & Social Welfare Society payable at Bhiwani.
3. Articles in this journal do not reflect the Views or Policies of the Editor's or the Publisher's. Respective authors are responsible for the originally of their views/opinions expressed in their articles.
4. All dispute will be Subject to Bhiwani, Hry. Jurisdication only.

Printed by : Manbhawan Printers, Old Bus Stand Road, Naya Bazar, Bhiwani (Hry.)

बोहल शोध मंजूषा परिवार*

मानद संरक्षक

डॉ. कैलाश चन्द्र शर्मा 'शंकी'
पूर्व शिक्षा अधिकारी,
साहित्यकार,
चरखी दादरी (हरियाणा)

डॉ. विश्वबंधु शर्मा
पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
बाबा मस्तनाथ वि.वि.
रोहतक (हरियाणा)

डॉ. विनोद तनेजा
पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
गुरूनानक वि.वि. अमृतसर
पंजाब।

सम्पादक मण्डल

सह सम्पादिका :
डॉ. रेखा सोनी
उप प्राचार्या, शिक्षा विभाग
टाटिया वि.वि. श्रीगंगानगर।

सह सम्पादिका :
डॉ. सुशीला आर्या
हिन्दी विभाग, चौ. बंसीलाल
विश्वविद्यालय, भिवानी।

प्रबंध सम्पादक :
समुन्द्र सिंह
भिवानी, हरियाणा।

विधि विशेषज्ञ

डॉ. रामफल दलाल, एडवोकेट
जिला न्यायालय
भिवानी, हरियाणा।

अजीत सिहाग, एडवोकेट
पंजाब एवं हरियाणा हाईकोर्ट,
चंडीगढ़।

चरणवीर सिंह, एडवोकेट
जिला न्यायालय
पटियाला, पंजाब।

विषय विशेषज्ञ/परामर्शदात्री/शोधपत्र निरीक्षण समिति

डॉ. कुमारी लक्ष्मी जोशी
हिन्दी विभाग, त्रिभुवन वि.वि.
काठमाण्डू, नेपाल।

डिल्लीराम शर्मा संग्रौला
विभागीय प्रमुख, संस्कृत, पत्रकारिता, हिंदी
पद्मकन्या बहुमुखी कैंपस, काठमांडू, नेपाल।

डॉ. संजय एल. मादार
विभागाध्यक्ष, पी.जी. केन्द्र
द.भा.हिन्दी प्रचार सभा हैदराबाद।

डॉ. गीता दहिया, प्राचार्या,
नैशनल टीटी कॉलेज फॉर गर्ल्स
अलवर, राजस्थान

डॉ. इस्पाक अली
पूर्व प्राचार्य, लाल बहादुर शास्त्री
शिक्षा महाविद्यालय, बेंगलूरू

डॉ. मो. रियाज़ खान
बीएमएस वूमैन कॉलेज आटोनोमेस
बेगलूरू

डॉ. वनिता कुमारी
च. दादरी (हरियाणा)

श्री सहदेव समर्पित
सम्पादक, शान्तिधर्मी, जीन्द

डॉ. अंजली उपाध्याय
उत्तर प्रदेश

डॉ. लता एस. पाटिल
राजीव गांधी बीएड कालेज
धारवाड़, कर्नाटक

प्रो. अमनप्रीत कौर
गुरू तेग बहादुर खालसा कॉलेज
फॉर वूमैन, दसूहा, पंजाब

डॉ. वर्षा रानी
संस्कृत विभाग, डॉ. भीमराम
अम्बेडकर, वि.वि., आगरा

प्रो. कमलेश चौधरी
राजकीय रणबीर महाविद्यालय
संगरूर, पंजाब

डॉ. किरण गिल
दीनदयाल टी.टी. महाविद्यालय
बारी, जिला सीकर, राज.

डॉ. सविता घुड़केवार
पीजी विभाग, दक्षिण भारत
हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास

डॉ. परमजीत कौर
बरेली कॉलेज बरेली,
उत्तर प्रदेश।

डॉ. राजकुमारी शर्मा
श्रीराम कॉलेज,
नई दिल्ली।

डॉ. श्रीविद्या एन.टी.
श्री शंकराचार्य संस्कृत वि.वि.
केरल।

डॉ. बी. संतोषी कुमारी
पी.जी.विभाग, दक्षिण भारत हिन्दी
प्रचार सभा, मद्रास।

श्री राकेश ग्रेवाल
सन जॉस,
कैलिफोर्निया, यू.एस.ए.

डॉ. पंडित बन्ने
भारत महाविद्यालय,
सोलापुर (महाराष्ट्र)

डॉ. करमजीत कौर
प्राचार्या, दशमेश गर्ल्स कॉलेज
चक आला, मुकेरिया, पंजाब।

श्री राकेश शंकर भारती
साहित्यकार व अनुवादक,
यूक्रेन।

डॉ. उमा सैनी
आई.ए.एस.ई. विश्वविद्यालय
सरदारशहर, राजस्थान

डॉ. मनमीत कौर
राधा गोविन्द वि.वि.,
रामगढ़, झारखण्ड।

डॉ. रीना उन्नीयाल तिवारी
शिक्षा संकाय, डी.ए.वी. पीजी
कालेज, देहरादून

डॉ. सुरजीत सिंह कस्वां
डीन फिजिकल एजुकेशन
टांटिया वि.वि., श्रीगंगानगर,

डॉ. शबाना हबीब
गवर्नमेंट कॉलेज फॉर वूमैन
त्रिवन्तपुरम, केरल।

डॉ. शिवकरण निमल
सहायक आचार्य, राजनीति विज्ञान
एसपीसी राजकीय महा. भीम, राजस्थान।

डॉ. राधाकृष्णन गणेशन
भारत कला भवन
वाराणसी, उत्तर प्रदेश।

डॉ. मानसिंह दहिया
संस्कृत विभाग
हरियाणा सरकार।

डॉ. नीलम आर्या
संस्कृत विभाग
उत्तर प्रदेश।

डॉ. रवि सुण्डयाल
हॉयर एजुकेशन डिपार्टमेंट
जम्मू कश्मीर।

प्रो. नरेन्द्र सोनी
सूचना एवं जन सम्पर्क अधिकारी,
हरियाणा सरकार।

डॉ. रोहतास
एस.जी.पी.जी.आई.एम.एस.
लखनऊ, उत्तर प्रदेश।

प्रो. सत्यबीर कालोहिया
पूर्व प्राचार्य,
कैलिफोर्निया।

पठान चिन्ना जानी
सहायक प्राध्यापक
सी.एच.एस.डी. सेंट थेरेसा
महिला महाविद्यालय (ए)
एलुरु, आंध्र प्रदेश

डॉ. वैशाली सिंह
सहायक प्राध्यापक
शिक्षा विभाग, एस.एम.टी. अनार देवी
टी.टी. कॉलेज, बखराना
(कोटपुतली) राजस्थान।

डॉ. रेखा रानी
गवर्नमेंट रणबीर कॉलेज
संगरूर, पंजाब

डॉ. के.के. मल्हौत्रा
पूर्व विभागाध्यक्ष
गवर्नमेंट कॉलेज, गुरदासपुर

डॉ. अंकिता चतुर्वेदी, प्रवक्ता
भीमसेन डिग्री कॉलेज
(आगरा यूनिवर्सिटी)

शिओंग छन श्यू
चीन

*सम्पूर्ण बोहल शोध मञ्जूषा परिवार/सम्पादक मण्डल अवैतनिक है।

शोध–पत्र प्रकाशन के लिए निर्देश मंजूषा

गुगनराम सोसायटी (पंजीकृत) द्वारा शोधार्थियों व अध्येताओं के शोध/अनुसंधान की गतिविधियों को प्रोत्साहित करने हेतू बोहल शोध मंजूषा ISSN 2395-7115 (PRINT) नामक बहुभाषिक अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका का प्रकाशन किया जा रहा है। कला, संस्कृति, विज्ञान, वाणिज्य, मानविकी, प्रबंध, प्रौद्योगिकी, विधि, भूगोल, शिक्षा, पत्रकारिता पर केन्द्रीत इस शोध पत्रिका को विषय विशेषज्ञों तथा मनीषी विद्वानों की सक्रिय सहभागिता प्राप्त है। पत्रिका के एक अंक का शुल्क 1100 रु. है।

आप अपना शोध पत्र कम्प्यूटर से मुद्रित फोन्ट साईज 14, कृतिदेव–10, कृतिदेव–21 में व अंग्रेजी के Arial, Times New Roman में पेज मेकर या माइक्रोसोफ्ट वर्ल्ड में हमारी Email ID : grsbohal@gmail.com पर भेजें। शोध पत्र प्रेषित करने से पूर्व दिये गये सन्दर्भ, मात्रा आदि की पूर्णतया जाँच कर लें।

नोट :– उर्दू, पंजाबी आदि भाषा के शोध पत्र पेपर साईज 7x9.5 पर टाईप कराकर JPG या PDF फाईल हमारी ईमेल आई.डी. पर भेज सकते हैं।

हमारी पत्रिका में शोध पत्र लेखक के फोटो सहित प्रकाशित किये जाते हैं। इसलिए आप अपने शोध पत्र के साथ पासपोर्ट साईज फोटोग्राफ, सम्पर्क सूत्र; टेलीफोन, मोबाईल नं., ई–मेल तथा पिनकोड सहित पत्र व्यवहार का पूरा पता (हिन्दी व अंग्रेजी) कम्प्यूटर द्वारा टाईप करवाकर भेजें।

- शोध पत्र 2000–2500 शब्दों (4–6 पेज) से अधिक नहीं होनी चाहिए, यदि शब्द सीमा अधिक होती है तो सम्पादक को अधिकार होगा यथा स्थान संक्षिप्तीकरण कर दें। अस्वीकृत शोध पत्र की वापसी संभव नहीं है।
- पत्रिका में प्रकाशित श्रेष्ठ शोध पत्र को हमारी सोसायटी/पत्रिका की ओर से बहुउपयोगी श्रीमती गिना देवी शोधश्री सम्मान प्रदान किया जायेगा।
- शोध पत्र में व्यक्त विचार लेखकों के स्वयं के विचार हैं। उनसे सम्पादक, प्रकाशक की सहमति आवश्यक नहीं है। शोध पत्र में प्रयुक्त किए गए तथ्यों के प्रति संबंधित लेखक उत्तरदायी होगा। पत्रिका में शोध आलेख प्रकाशन के लिए भेजने से पहले सम्पूर्ण जानकारी प्राप्त करना लेखक का दायित्व है। प्रत्येक विवाद का न्यायक्षेत्र भिवानी (हरियाणा) होगा।
- सम्पादकीय पद अव्यावसायिक और अवैतनिक हैं। पत्रिका में केवल शोध पत्र ही प्रकाशनार्थ भेजें। शोध पत्र का प्रकाशन योजना एवं व्यवस्था के अनुसार यथा समय व प्रकाशित समस्त शोध पत्रों का सर्वाधिकार समिति/सम्पादक के पास सुरक्षित होगा।

देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयताम्।। ऋ० १/८९/२

ISSN : 2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED & REFEREED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

Publisher : Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Table 2

Methodology for University and College Teachers for calculating Academic/Research Score

(Assessment must be based on evidence produced by the teacher such as: copy of publications, project sanction letter, utilization and completion certificates issued by the University and acknowledgements for patent filing and approval letters, students' Ph.D. award letter, etc,.)

S.N.	Academic/Research Activity	Faculty of Sciences /Engineering / Agriculture / Medical /Veterinary Sciences	Faculty of Languages / Humanities / Arts / Social Sciences / Library /Education / Physical Education / Commerce / Management & other related disciplines
1.	**Research Papers in Peer-Reviewed or UGC listed Journals**	08 per paper	10 per paper
2.	**Publications (other than Research papers)**		
	(a) Books authored which are published by ;		
	International publishers	12	12
	National Publishers	10	10
	Chapter in Edited Book	05	05
	Editor of Book by International Publisher	10	10
	Editor of Book by National Publisher	08	08
	(b) Translation works in Indian and Foreign Languages by qualified faculties		
	Chapter or Research paper	03	03
	Book	08	08
3.	**Creation of ICT mediated Teaching Learning pedagogy and content and development of new and innovative courses and curricula**		
	(a) Development of Innovative pedagogy	05	05
	(b) Design of new curricula and courses	02 per curricula/course	02 per curricula/course

अनुक्रमाणिका – सितम्बर 2026

क्र.	विषय	लेखक	पृष्ठ
1.	सम्पादकीय	डॉ. नरेश सिहाग	10–11
2.	**Biochemical and Geotechnical Structure of Mud Nests with Special Reference to the Indian Cliff Swallow (Petrochelidon fluvicola)**	**Dr. Prem Singh Chouhan**	**12-17**
3.	पंचायतीराज व्यवस्था में महिलाओं पर वैश्वीकरण का प्रभाव	डॉ. रश्मि पाण्डेय	18–29
4.	डिजिटल युग में सोशल मीडिया का युवाओं की सामाजिक पहचान और पारस्परिक संबंधों पर प्रभाव : एक समाजशास्त्रीय विश्लेषण	डॉ. रेखा रावत	30–36
5.	भारतीय कंपनियों में ईएसजी प्रकटीकरण और निवेशकों के विश्वास के बीच संबंध : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन	श्रीमती प्रियंका यादव	37–43
6.	**Influence of Social Media Usage Patterns on Subjective Well-Being and Happiness among Young Adults**	**Amirah Kaisar Parvez Bagwan, Dr. Radha Rani Sain**	**44-50**
7.	हरियाणा में डिजिटल कल्याणकारी शासन और नागरिक–राज्य संबंध : परिवार पहचान पत्र के संदर्भ में एक विश्लेषणात्मक अध्ययन	पूजा शर्मा, डॉ. राकेश रोहिल्ला	51–57
8.	चूरू जिले में ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना की आवश्यकता एवं प्रगति : एक भौगोलिक एवं सामाजिक–आर्थिक विश्लेषण	कुलवीर सिंह, प्रो. डॉ. मनोज कुमार	58–64
9.	प्रेमचंद की रचनाओं में नारी अधिकार एवं स्वाधीनता का अध्ययन	मनोज कुमार यादव, डॉ. विनोद कुमार शर्मा	65–75
10.	भारत–नेपाल सम्बन्ध : राष्ट्रीय सुरक्षा की वर्तमान स्थिति	सतीश कुमार दूबे	76–80
11.	**The Role of Online Customer Reviews in Building Consumer Trust in Indian E-Commerce : A Review-Based Study**	**Dr. Priya Jain**	**81-87**
12.	बौद्धधर्म में प्रतीक महिमा	चुडासमा जयेशकुमार आठमभाई	88–93
13.	'गंगूबाई काठियावाड़ी' : नारी शक्ति की गाथा	आभा एस वी	94–98
14.	कोविड काळातील ग्रामीण व शहरी भागातील माध्यमिक स्तरावरील शिक्षकांच्या मानसिक आरोग्याचा तुलनात्मक अभ्यास	भागवत माणिकराव भांगे, डॉ. तिक्षा म. श्यामकुल	99–107
15.	बेमेतरा जिले की ग्रामीण महिलाओं की वित्तीय साक्षरता एवं वित्तीय निर्णय क्षमता का अध्ययन	डॉ. शारदा वर्मा, अर्चना सिन्हा	108–116

16.	लोकतंत्र का चार सूत्रीय मॉडल वर्तमान राजनीतिक परिप्रेक्ष्य में	डॉ० मौ० मुजफ्फर अंसारी	117–124
17.	झारखण्ड में विस्थापन विरोधी आंदोलन एवं पुनर्वास नीति	प्रेम रोशन एक्का	125–131
18.	सोशल मीडिया का भारतीय राजनीति और मतदाता व्यवहार पर प्रभाव	प्रिया जायसवाल	132–135
19.	**A META-ANALYTIC REVIEW OF INTERVENTIONS FOR THE PREVENTION AND REDUCTION OF BURNOUT AMONG EMPLOYEES IN THE CORPORATE SECTOR**	**Monika Sahai**	**136-142**
20.	युवा और दीर्घकालिक नेतृत्व	डॉ. पुनीता गिरि	143–150
21.	कुरूक्षेत्र के व्यक्तिवाची सांस्कृतिक शब्दों का अर्थतात्विक विवेचन	डॉ० अजय सिंह चौहान, अनूप कुमार	151–160
22.	**Geospatial Delineation of Low-Grade Ore Zones and Their Metallurgical Amenability to Beneficiation : Field and Laboratory Evidence from the Noamundi and Kiriburu Sectors, Jharkhand**	**Aayush Chawla**	**161-172**
23.	**From Mridang to Pakhawaj to Tabla : Tracing the Morphological and Technical Evolution of North Indian Membranophones A Study in Organological and Performance-Practice History**	**Aishvary Arya, Prof. Arti Bhatt Tailang**	**173-178**
24.	'समर शेष है' उपन्यास में अभिव्यक्त युवा–जीवन	आविद खान, प्रो. (डॉ.) मनु	179–182
25.	समाज में व्यंग्यकार की भूमिका	डॉ. दीप्ति सुधीरकुमार देशपांडे	183–185
26.	शासकीय प्राथमिक विद्यालय के बालक एवं बालिकाओं की आत्म –अवधारणा एवं अधिगम अभिप्रेरणा का तुलनात्मक अध्ययन	रूपानंद बारिक, डॉ. सुषमा पांडे	186–193
27.	**Positive Learning Environments and Student Success : A Review of Equity, Diversity, and Inclusion in Education**	**Dimpi Singh**	**194-203**
28.	छायावाद : उद्भव, विकास, प्रमुख प्रवृत्तियाँ और हिंदी काव्य में उसका योगदान	श्याम लाल	204–209
29.	**From Oppression to Awakening : Women's Status and Social Reforms in Colonial India**	**Anjali Sachan, Ashok Kumar Yadav**	**210-216**
30.	**Saptanga Theory and Its Contemporary Relevance in India**	**Yashna Singh**	**217-223**

संपादकीय...

साहित्य : समय की धड़कन और समाज की आवाज

'प्रिय पाठको, शोधार्थियों, रचनाकारों एवं साहित्य–प्रेमियों,'

सादर नमस्कार!

'बोहल शोध मंजूषा' के 'सितंबर 2026 अंक' को आपके समक्ष प्रस्तुत करते हुए हमें अत्यंत हर्ष और संतोष की अनुभूति हो रही है। प्रत्येक अंक हमारे लिए केवल शोध–पत्रों और रचनात्मक रचनाओं का संकलन नहीं, बल्कि विचारों के उस जीवंत संसार का निर्माण है, जहाँ साहित्य, समाज, संस्कृति, शिक्षा और मानवीय संवेदनाएँ एक–दूसरे से संवाद करती हैं।

समय निरंतर बदल रहा है। तकनीक ने हमारे जीवन की गति को अभूतपूर्व रूप से बढ़ा दिया है। आज साहित्य पुस्तकालयों की अलमारियों तक सीमित नहीं है, वह डिजिटल मंचों, ई–पत्रिकाओं, सामाजिक माध्यमों, ऑडियो–विजुअल माध्यमों और नए संचार उपकरणों के द्वारा व्यापक पाठक वर्ग तक पहुँच रहा है। हिंदी साहित्य के सामने यह नया संसार अनेक संभावनाएँ लेकर आया है, लेकिन इसके साथ गुणवत्ता, मौलिकता, संपादन, कॉपीराइट और साहित्यिक मूल्यों की रक्षा जैसी चुनौतियाँ भी उपस्थित हुई हैं।

ऐसे समय में साहित्य की भूमिका और अधिक महत्वपूर्ण हो जाती है। साहित्य केवल मनोरंजन नहीं करता, वह मनुष्य को मनुष्य से जोड़ता है। वह प्रश्न करता है, असहमति को स्वर देता है, पीड़ा को अभिव्यक्ति देता है और समाज को उसके समय का आईना दिखाता है। एक अच्छी कविता किसी मौन व्यक्ति की आवाज बन सकती है, एक कहानी किसी भूले हुए जीवन–संघर्ष को सामने ला सकती है और एक शोध आलेख किसी स्थापित धारणा को नए दृष्टिकोण से देखने की प्रेरणा दे सकता है।

''बोहल शोध मंजूषा' का मूल उद्देश्य भी इसी साहित्यिक और बौद्धिक संवाद को आगे बढ़ाना है।' हमारा विश्वास है कि शोध केवल उपाधि प्राप्त करने का साधन नहीं होना चाहिए। शोध का वास्तविक अर्थ है– प्रश्न करना, तथ्यों की पड़ताल करना, स्थापित धारणाओं को परखना और ज्ञान की नई संभावनाओं को सामने लाना। इसलिए शोध में मौलिकता, प्रमाणिकता, तर्कशीलता और संदर्भबोध को सर्वोच्च स्थान मिलना चाहिए।

आज भारतीय भाषाओं और बहुभाषिकता को लेकर अकादमिक जगत में नए विमर्श सामने आ रहे हैं। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के संदर्भ में भारतीय भाषाओं की भूमिका, मातृभाषा में शिक्षा, अनुवाद, बहुभाषिक शिक्षण और भारतीय ज्ञान परंपरा पर निरंतर चर्चा हो रही है। हाल के अध्ययनों में भी भारतीय भाषाओं को उच्च शिक्षा और साहित्यिक अध्ययन से जोड़ने की संभावनाओं के साथ–साथ संसाधनों और संस्थागत तैयारी जैसी चुनौतियों को रेखांकित किया गया है।

हमें यह समझना होगा कि 'भाषा केवल संप्रेषण का माध्यम नहीं, बल्कि हमारी स्मृति, संस्कृति और सामूहिक चेतना की वाहक है।' भारत की शक्ति उसकी भाषाई विविधता में निहित है। हिंदी का विकास अन्य भारतीय भाषाओं के साथ संवाद से ही समृद्ध होगा। अनुवाद इस संवाद का सबसे महत्वपूर्ण सेतु है। जब एक भाषा का साहित्य दूसरी भाषा के पाठकों तक पहुँचता है, तो केवल शब्दों का नहीं, बल्कि अनुभवों, संस्कृतियों और संवेदनाओं का भी आदान–प्रदान होता है।

आज आवश्यकता इस बात की भी है कि साहित्य के केंद्र में उन आवाजों को स्थान मिले जो लंबे समय तक हाशिए पर रही हैं। दलित, आदिवासी, स्त्री, किसान, श्रमिक, प्रवासी, दिव्यांग, ग्रामीण और अन्य वंचित समुदायों की जीवनानुभूतियाँ साहित्य को अधिक व्यापक और मानवीय बनाती हैं। हिंदी साहित्य में दलित और आदिवासी लेखन ने सामाजिक प्रतिनिधित्व और अस्मिता के प्रश्नों को नई शक्ति प्रदान की है।

इसीलिए साहित्य को केवल सौंदर्य का विषय मानना पर्याप्त नहीं है। साहित्य में 'सौंदर्य भी होना चाहिए और सरोकार भी।' शब्दों में संवेदना होनी चाहिए और संवेदना में मनुष्य के प्रति सम्मान। लेखक का दायित्व केवल सुंदर लिखना नहीं, बल्कि अपने समय की सच्चाइयों को ईमानदारी से पहचानना भी है।

सितंबर का यह अंक इसी व्यापक दृष्टि का प्रतिनिधित्व करता है। इसमें विविध विषयों पर प्रस्तुत शोध आलेख ज्ञान के अलग–अलग क्षेत्रों को जोड़ने का प्रयास करते हैं। हमें विश्वास है कि ये आलेख शोधार्थियों, अध्यापकों और साहित्य के गंभीर पाठकों को नए प्रश्नों पर विचार करने के लिए प्रेरित करेंगे। साथ ही, रचनात्मक साहित्य पाठकों के भावलोक को स्पर्श करेगा और उन्हें अपने आसपास की दुनिया को नए दृष्टिकोण से देखने का अवसर देगा।

हम यह भी मानते हैं कि किसी शोध पत्रिका की सार्थकता केवल उसमें प्रकाशित सामग्री की संख्या से निर्धारित नहीं होती, बल्कि इस बात से होती है कि वह अपने पाठकों के भीतर कितने नए प्रश्न पैदा करती है। 'एक अच्छा शोध उत्तर देने से पहले सही प्रश्न करना सिखाता है। एक अच्छी कविता पढ़ने के बाद मन को कुछ देर शांत नहीं रहने देती। और एक अच्छी कहानी समाप्त होने के बाद भी हमारे भीतर चलती रहती है।'

आज जब सूचना बहुत है, लेकिन चिंतन के लिए समय कम होता जा रहा है, तब साहित्य और शोध दोनों की जिम्मेदारी बढ़ जाती है। हमें सूचना से आगे बढ़कर ज्ञान, ज्ञान से आगे बढ़कर विवेक और विवेक से आगे बढ़कर मानवीय संवेदना की ओर जाना होगा।

'बोहल शोध मंजूषा' इसी यात्रा में आपका सहयात्री बनना चाहती है।

हम अपने सभी लेखकों, शोधकर्ताओं, समीक्षकों, संपादकीय सहयोगियों और पाठकों के प्रति हृदय से आभार व्यक्त करते हैं, जिनके विश्वास और सहयोग से यह साहित्यिक–शोध यात्रा निरंतर आगे बढ़ रही है। आपकी प्रतिक्रियाएँ, सुझाव और आलोचनाएँ हमारे लिए मार्गदर्शक हैं।

आइए, हम मिलकर ऐसी साहित्यिक और शोध संस्कृति का निर्माण करें जहाँ 'मौलिकता को सम्मान मिले, विचारों को स्वतंत्रता मिले, भाषा को गरिमा मिले और मनुष्य को केंद्र में स्थान मिले।'

शब्द तभी सार्थक होते हैं जब वे समाज में कुछ बदलने की क्षमता रखते हों।

'शब्द लिखे ही इसलिए जाएँ कि वे समय की धूल में दबे किसी सत्य को सामने ला सकें।'

इसी विश्वास के साथ –

'सितंबर 2026 अंक के सभी रचनाकारों एवं शोधकर्ताओं को हार्दिक शुभकामनाएँ।'

सादर!

–डॉ. नरेश सिहाग

सम्पादक

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2026 Page No. : 12-17

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES PRINT RESEARCH JOURNAL

Biochemical and Geotechnical Structure of Mud Nests with Special Reference to the Indian Cliff Swallow (Petrochelidon fluvicola)

Dr. Prem Singh Chouhan
Associate Professor,
SPC. GOVT. COLLEGE, BHIM (RAJSAMAND)

Abstract :

The Indian Cliff Swallow (Petrochelidon fluvicola), alternatively categorized under the genus Hirundo, displays an extraordinary evolutionary adaptation in bio-architectural engineering. It constructs intricate, gourd-shaped mud nests against gravity underneath cliffs, dams, and concrete bridge girders. This comprehensive analysis reviews the biochemical composition, mineralogical profile, and biomechanical stability of these structures. The architectural matrix is a hybrid composite containing approximately 99% native riparian mud bound together via an endogenous viscoelastic salivary biopolymer. Quantitative evaluations reveal that water-soluble mucin glycoproteins and mucopolysaccharides interact chemically with specific clay fractions. This creates solid molecular bridges capable of resisting high mechanical shear and structural load. This review clarifies the evolutionary mechanics behind avian masonry and highlights its potential applications in modern sustainable construction and biomimetic 3D-printing technologies.

Keywords :

Petrochelidon fluvicola, Indian Cliff Swallow, Avian Architecture, Biocomposite Matrix, Salivary Biopolymers, Mucin Glycoproteins, Geotechnical Profile, Mechanical Shear Resistance, Biomimetic 3D-Printing, Hydrogen and Ionic Bonding.

Introduction :

The Indian Cliff Swallow (Petrochelidon fluvicola) is a colonial, aerial insectivore found extensively across South Asia that exhibits extraordinary evolutionary adaptations in bio-architectural engineering. Unlike standard open nests, this species constructs intricate, gourd-shaped mud structures

against vertical surfaces like cliffs, dams, and concrete bridge girders. The architectural matrix is a sophisticated biocomposite consisting of approximately 99% native riparian mud bound together by an endogenous salivary biopolymer secreted during mastication. Microscopic and chemical evaluations reveal that water-soluble mucin glycoproteins interact with specific clay fractions to form solid molecular bridges via hydrogen and ionic bonds. This comprehensive structural design enhances chemical stability, provides high-tensile adhesion over 75 kPa, and protects the colony from extreme environmental mechanical stress.

Research Objectives :

To analyze the architectural morphology and behavioral construction blueprint of Petrochelidon fluvicola nests under gravitational loads.

To determine the geotechnical and mineralogical composition of the chosen riparian mud, specifically the balance between cohesive clay fractions and non-cohesive granular sand/silica.

To characterize the biochemical properties of the salivary biopolymers, focusing on how mucin glycoproteins, amino acids, and water-soluble proteins act as a structural adhesive matrix.

To investigate the microscopic bonding mechanisms between salivary organic carbon elements and the silanol groups on clay surfaces using spectroscopy and electron microscopy.

To evaluate the biomechanical properties and failure resistance mechanisms of the consolidated biocomposite wall against shear stress and environmental weathering.

If you need further help, let me know if you would like me to expand the methodology section or format a full literature review structure based on these document pages.

Study Area :-

SPC Govt. College Bhim (Rajsamand) Nandawat (Togi) Latitude: 25.7415° N Longitude: 74.0799° E



2. Geotechnical & Mineralogical Composition :

The selectiveness of Petrochelidon fluvicola toward specific soil textures indicates a deep understanding of soil mechanics. The physical properties of the chosen soil ensure structural integrity during deposition and long-term occupancy.

3. Biochemical Characterization of Salivary Biopolymers :

The true engineering feat of Petrochelidon fluvicola lies in the biochemical addition of salivary

fluid during mastication. Raw mud lacks cohesion when dried, but the organic secretions transform it into a tough, consolidated biocomposite.

PNAS +1

[Incohesive Riparian Mud (99%)] + [Endogenous Saliva Biopolymers (Glycoproteins)]

◦

◦ (Mastication & Evaporative Desiccation)

[Solid Bridging via Hydrogen & Ionic Bonds]

◦

◦

[High-Tensile Biocomposite Wall (Adhesion > 75 kPa)]

1. Organic Matrix Breakdown :

The organic component of the dried nest matrix is higher than that of raw control soil, showing a deliberate investment of bird saliva :

Research Gate :

Mucin Glycoproteins : High-molecular-weight proteins rich in O-linked oligosaccharide chains. These proteins contain high concentrations of serine, threonine, and proline, which provide structural viscosity and chemical stability. ◦

Water-Soluble Proteins : Account for a vital percentage of the total organic dry weight. They act as the primary structural adhesive.

Total Carbohydrates : Present as neutral mucopolysaccharides. They hold moisture during building and form tight, cement-like bonds once dried.

2. The Microscopic Binding Mechanism :

Energy-dispersive X-ray spectroscopy (EDS) and Scanning Electron Microscopy (SEM) reveal that the organic carbon from the saliva envelopes individual silica and clay particles. As evaporation occurs, the biopolymers self-assemble into thin adhesive films. The carboxyl and hydroxyl groups of the glycoproteins form strong hydrogen and ionic bonds with the silanol ( ) groups on the clay surfaces.

4. Biomechanical Properties & Failure Resistance :

Recent mathematical models and physical stress tests published by the National Academy of Sciences (PNAS) shed light on how these structures survive extreme conditions :

Pub Med Central (PMC) (.gov)

Capillary Cohesion to Viscoelastic Bridging : During construction, capillary forces hold the wet mud together. As the water content evaporates, the salivary solute thickens into a viscoelastic paste, forming hard solid bridges between grains.

High Tensile & Adhesion Strength : The macro-tensile strength of the nest walls easily resists environmental shear stresses like heavy wind and rain. The adhesive bond at the substrate boundary routinely exceeds 75 kPa.

The Mass-to-Strength Limit (Lightweight Constraint) : Biomaterial analysis reveals a clear evolutionary limit regarding body mass. Because saliva must dry quickly to anchor the mud granules against gravity, only lightweight bird species ( ) possess the metabolic capability to secrete enough salivary biopolymer to support their own weight and that of their offspring.

Iron ions form critical cross-linkages with organic polymers.

Calcium ( ), Magnesium ( ), and Sodium ( )

: Present as structural salts. They regulate osmotic hydration profiles and help maintain stable internal microclimates.

Research Gate

Phosphorus ( ) and Potassium ( )

: Minor traces that help evaluate changes in chemical weathering post-construction.

3. Biochemical Characterization of Salivary Biopolymers :

The true engineering feat of Petrochelidon fluvicola lies in the biochemical addition of salivary fluid during mastication. Raw mud lacks cohesion when dried, but the organic secretions transform it into a tough, consolidated biocomposite.

PNAS +1

[Incohesive Riparian Mud (99%)] + [Endogenous Saliva Biopolymers (Glycoproteins)]

-
- (Mastication & Evaporative Desiccation)

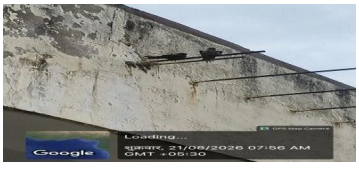
[Solid Bridging via Hydrogen & Ionic Bonds]

-
-

[High-Tensile Biocomposite Wall (Adhesion > 75 kPa)]

Photographs:-







1. Organic Matrix Breakdown :

The organic component of the dried nest matrix is higher than that of raw control soil, showing a deliberate investment of bird saliva :

Research Gate :

Mucin Glycoproteins : High-molecular-weight proteins rich in O-linked oligosaccharide chains. These proteins contain high concentrations of serine, threonine, and proline, which provide structural viscosity and chemical stability.

Water-Soluble Proteins : Account for a vital percentage of the total organic dry weight. They act as the primary structural adhesive.

Total Carbohydrates : Present as neutral mucopolysaccharides. They hold moisture during building and form tight, cement-like bonds once dried.

2. The Microscopic Binding Mechanism :

Energy-dispersive X-ray spectroscopy (EDS) and Scanning Electron Microscopy (SEM) reveal that the organic carbon from the saliva envelopes individual silica and clay particles. As evaporation occurs, the biopolymers self-assemble into thin adhesive films. The carboxyl and hydroxyl groups of the glycoproteins form strong hydrogen and ionic bonds with the silanol ( ) groups on the clay surfaces.

4. Biomechanical Properties & Failure Resistance :

Recent mathematical models and physical stress tests published by the National Academy of Sciences (PNAS) shed light on how these structures survive extreme conditions :

PubMed Central (PMC) (.gov)

Capillary Cohesion to Viscoelastic Bridging : During construction, capillary forces hold the wet mud together. As the water content evaporates, the salivary solute thickens into a viscoelastic paste, forming hard solid bridges between grains.

High Tensile & Adhesion Strength : The macro-tensile strength of the nest walls easily resists environmental shear stresses like heavy wind and rain. The adhesive bond at the substrate boundary routinely exceeds 75 kPa.

The Mass-to-Strength Limit (Lightweight Constraint) : Biomaterial analysis reveals a clear evolutionary limit regarding body mass. Because saliva must dry quickly to anchor the mud granules against gravity, only lightweight bird species ( ) possess the metabolic capability to secrete enough salivary biopolymer to support their own weight and that of their offspring.

5. References :

- Chaya, H. C., Mahesha, G., & Channaveerappa, H. (2019). Composition Analysis of Two

Swallows Nests – Petrochelidon fluvicola and Hirundo rustica. International Journal of Development Research, 09(01), pp. 25112-25115.

- Channaveerappa, H., Chaya, H. C., & Mahesha, G. (2020). Cliff Swallows are good Masons for their Own Plan and Architecture of Nest. Journal of Ravenshaw University, 11(2), pp. 45-52.
- Abdar, M. R. (2014). Breeding Biology of Indian Cliff Swallow Hirundo fluvicola (Passeriformes). Records of the Zoological Survey of India, 114(Part-3), pp. 483-487.
- Jeong, J., Kim, H., Seo, S., & Kim, H. Y. (2021). Avian mud nest architecture by self-secreted saliva. Proceedings of the National Academy of Sciences (PNAS), 118(3), e2018509118.

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2026 Page No. : 18-29

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES PRINT RESEARCH JOURNAL

पंचायतीराज व्यवस्था में महिलाओं पर वैश्वीकरण का प्रभाव

डॉ. रश्मि पाण्डेय

सारांश :-

पंचायती राज के पीछे जो विचारधारा निहित थी, वह यह है कि गांवों के लोग अपने ऊपर शासन करने का उत्तरायित्व स्वंय संभालें। यही एक महान् आदर्श है जिसे प्राप्त किया जाना था। यह आवश्यक है किं गावों में हरने वाले लोग कृषि, सार्वजनिक स्वास्थ्य, शिक्षा सिंचाई पशुपालन, आदि से सम्बन्धित विकास क्रियाओं सें सक्रिय रूप से भाग लें। ग्रामीण लोग न केवल कार्यक्रमों के क्रियान्वयन में ही भाग लें, अपितु उन्हें यह अधिकार भी होना चाहिए कि वे अपनी आवश्यकताओं और अनिवार्यताओं के विषय में स्वयं ही निर्णय की शक्ति भी प्रदान करें। लोग अपने चुने हुए प्रतिनिधियों के माध्यम से स्थानीय नीतियों का निर्धारण करें और जनता की वास्तविक आवश्यकओं का ध्यान रखते हुए उनके अनुसार ही अपने कार्यक्रमों को लागू करें।

इस प्रकार, देश की जड़ो तक लोकतंत्र को प्रवेश कराया गया। इसके अन्तर्गत जनता के नीचे से नीचे स्तर पर स्थित लोग भी देश के प्रशासन से सम्बद्ध हो जाते। वस्तुतः हमारा जनतंत्र इस बुनियादी धारणा पर आधारित है कि शासन के प्रत्येक स्तर पर जनता अधिक से अधिक शासन कार्यो में हाथ बंटाए और अपने पर, राज करनेकी जिम्मेदारी स्वयं झेले। भारत में जनतंत्र का भविष्य इस बात पर निर्भर काता है कि ग्रामीण जनों का शासन से कितना अधिक प्रत्यक्ष और सजीव सम्पर्क स्थापित हो जाता है? दूसरे शब्दों में, ग्रामीण भारत के लिए पंचायती राज ही एकमात्र उपयुक्त योजना है। पंचायतें ही हमारे राष्ट्रीय जीवन की रीढ़ है। दिल्ली की संसद में कितने ही बड़े आदमी बैठें। लेकिन असल में 'पंचायतें' ही भारत की चाल बनाएंगी। पण्डित जवाहर लाल नेहरू ने ठीक ही कहा था कि ''यदि हमारी स्वाधीनता को जनता की आवाज की प्रतिध्वनि बनना है तो पंचायतों को जितनी अधिक शक्ति मिले, जनता के लिए उतनी ही भली है।

मुख्य शब्द :- ग्रामीण विकास, पंचायतीराज, आधारभूत सुविधाएँ।

प्रस्तावना –

पंचायती राज के पीछे जो विचारधारा निहित थी, वह यह है कि गांवों के लोग अपने ऊपर शासन करने का उत्तरायित्व स्वंय संभालें। यही एक महान् आदर्श है जिसे प्राप्त किया जाना था। यह आवश्यक है किं गावों में हरने वाले लोग कृषि, सार्वजनिक स्वास्थ्य, शिक्षा सिंचाई पशुपालन, आदि से सम्बन्धित विकास क्रियाओं सें सक्रिय रूप से भाग लें। ग्रामीण लोग न केवल कार्यक्रमों के क्रियान्वयन में ही भाग लें, अपितु उन्हें यह अधिकार भी होना चाहिए कि वे अपनी आवश्यकताओं और अनिवार्यताओं के विषय में स्वयं ही निर्णय की शक्ति भी प्रदान

करें। लोग अपने चुने हुए प्रतिनिधियों के माध्यम से स्थानीय नीतियों का निर्धारण करें और जनता की वास्तविक आवश्यकओं का ध्यान रखते हुए उनके अनुसार ही अपने कार्यक्रमों को लागू करें।

इस प्रकार, देश की जड़ो तक लोकतंत्र को प्रवेश कराया गया। इसके अन्तर्गत जनता के नीचे से नीचे स्तर पर स्थित लोग भी देश के प्रशासन से सम्बद्ध हो जाते। पंचायती राज की संस्थाओं के माध्यम से स्थानीय लोग न केवल नीति का निर्धारण करते अपितु उसके क्रियान्वयन तथा प्रशासन का नियन्त्रण एवं मार्गदर्शन भी करते। भारत गावों का देश है, इसी कारण से स्वतंत्रता के पश्चात ग्रामीण विकास शासन की प्राथमिकताओं में प्रमुख रहा है। गॉवों के विकास पर ही भारत का विकास निर्भर है। भारत देश में ग्रामीण, नगरीय एवं जनजातीय संस्कृतियॉ पाई जाती है भारत गावों की तथा लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की सफलता के लिए पंचायती राज महत्वपूर्ण साधन है इसीलिए गावों को ज्यादा से ज्यादा अधिकार संपन्न बनाने की आवश्यकता है ग्राम सभा विकास की अपनी जिम्मेदारी अच्छे से निभा सके इसके लिए जरूरी है कि हम सभी समझ लें कि विकास आखिर है क्या? विकास का मतलब है गरीबों और पिछड़े लोगों की स्थिति में सुधार लाना ओर समाज में उनका दर्जा बेहतर बनाना पंचायत एवं ग्रामीण विभाग के अन्तगर्त पंचायत राज संचालनालय की स्थापना का उद्देश्य ग्राम पंचायतों को सशक्त बनाना है। संविधान के अनुच्छेद 40 में लिखा गया है। कि राज्य पंचायतों के निर्माण का कदम उठायेगा और उन्हे शक्ति एवं अधिकार प्रदान करेगा।

वर्तमान में वैश्वीकरण, निजीकरण, मुक्त बाजार व्यवस्था, पूंजी तथा श्रम का पलायन संरचनात्मक, समायोजन, विकेन्द्रीकरण, पुर्नसंरचना विनियमन तथा स्थानीय विकास आदि के युग में जनकल्याणकारी नीतियों का निर्धारण व क्रियान्वन अधिकतर गैर सरकारी संस्थाओं के माध्यम से किया जाता है। अतः प्रशासन के मूलभूत सिद्धांत है–समानता, न्याय, सम्पन्नता, लोकतंत्र तथा इन्हें सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक है सहभागिता, विकेन्द्रीकरण, उत्तरदायित्व एवं पारदर्शिता। पिछले कुछ समय से विश्व बैंक व आर्थिक विकास सहयोग संगठन सुशासन को प्रचारित करने में सबसे आगे हैं। विश्व बैंक ने सुशासन को परिभाषित करते हुए तीन पहलुओं से संबंधित किया।

1. राजनीतिक शासन प्रणाली का रूप।
2. विकास हेतु देश के आर्थिक और सामाजिक संसाधनों के प्रबंधन में प्राधिकार प्रयोग की प्रक्रिया।
3. नीति–प्रारूपण, नीति निर्माण एवं नीति क्रियान्वन में सरकार की योग्यता।

विश्व बैंक की तरह ही आर्थिक सहयोग और विकास संगठन ने भी विकासशील देशों को विकास संबंधी सहायता देने के लिए सुशासन की शर्तें रखी। इन दो संस्थाओं के अलावा वैश्विक सुशासन से संबंधित आयोग, संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम व यूनेस्को जैसी संस्थाओं ने भी सुशासन के तत्वों और लक्षणों को प्रस्तुत किया। 1955 में 'कमीशन ऑन ग्लोबल गवर्नेंस' ने सुशासन को प्रबंधन की संपूर्णता से संबंधित किया तथा स्पष्ट किया कि लोकनीति व्यक्तिगत एवं सार्वजनिक नियमों, संस्थाओं तथा घटनाओं को प्रभावित करती हैं। 1999 में दक्षिण एशिया में मानव विकास पर प्रतिवेदन से स्पष्ट होता है कि वैश्विक स्तर पर सुशासन में परिवर्तन तथा 90 के दशक में उदारीकरण और वैश्वीकरण के प्रभाव से वैश्विक आर्थिक व्यवस्थ में व्यापक परिवर्तन हुआ। परिणामतः वैश्विक संगठन संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा नागरिक घोषणा पत्र के माध्यम से प्रशासन को सरल संवेदनशील, जबावदेह और पारदर्शी बनाने का प्रयास शुरू हुआ।

आज 21वीं सदी में यह मत व्याप्त है कि सुशासन किसी राष्ट्र एवं क्षेत्र विशेष से जुड़ी अवधारणा नहीं बल्कि एक वैश्विक अवधारणा है जो गतिशील तथा परिवर्तित हो रही वैश्विक परिस्थितियों को सकारात्मकता प्रदान करने से संबंधित है। अतः उदारीकरण और वैश्वीकरण के इस वातावरण में संयुक्त समन्वित मानवीय प्रयास के माध्यम से सुशासन को प्राप्त कर वैश्विक गांव को विकसित करने में सफलता प्राप्त होगी और संपूर्ण मानव समाज का विकास संभव होगा।

देश में पंचायतीय राज का शुभारंभ तत्कालीन प्रधानमंत्री द्वारा 2 अक्टूबर 1959 को किया गया था। पंचायतीय राज की 50वीं सालगिरह को भारत सरकार ने वर्ष 2009–10 में ग्राम सभा वर्ष के रूप में मनाने का निर्णय लिया गया संविधान के 73वें संशोधन अधिनियम 1992 के तहत मध्यप्रदेश राज्य मे त्रिस्तरीय पंचायतीय राज व्यवस्था लागू किये जाने के पश्चात पंचायतीय राज संस्थाओं के माध्यम से प्रदेश के ग्रामीण अंचलों के समय विकास की दृष्टि से विभिन्न विभागों द्वारा संचालित योजनाओं/कार्यक्रमों के क्रियान्वयन का दायित्व पंचायतीय राज संस्थाओं को सौंपा गया है। ग्रामीण क्षेत्र की योजनाओं के क्रियान्वयन का दायित्व पंचायतीय राज संस्थाओं को सौंपा गया है। ग्रामीण क्षेत्र की योजनाओं के क्रियान्वयन, पर्यवेक्षण और अनुश्रवण के साथ–साथ बजट और अमला भी पंचायतीय राज संस्थाएँ ग्रामीण क्षेत्र की समस्याओं के निराकरण में अपनी अह्म भूमिका निभा रही है। लोकतंत्र में सत्ता, लोक में निहित होती है, और तंत्र अथवा प्रशासन उसके अधीन होता है। हमारे देश ने आजादी केबाद लोकतंत्र कोअपनाया, लेकिन ने जाने किस तरह इसके विपरीत स्थिति होती चली गयी। सत्ता, प्रशासन के हाथों में केन्द्रित होती चली गयी, और लोक अथवा जनता अपने आप को छला सा महसूस करने लगी। विकास का पहिया तेजी से घूमे, लोगों को उनके हक मिले, अब तक उपेक्षित और वंचित लोग समाज में अपनी जगह बना सकें, प्रशासनिक व्यवस्था सही ढंग से अपना कार्य करें, इसके लिए सत्ता का विकेन्द्रीकरण और विकास योजनाओं में जन सहभागिता एक अनिवार्यता भी है, जिसके लिए समय–समय पर प्रयोग भी किये गये इन्हीं प्रयोगों का परिणाम था –

''पंचायती राज व्ययवस्था, जिसका उल्लेख संविधान में भी किया गया था, और जो भारतीय राजनीतिक व्यवस्था में आदिकाल से ही अपनी महत्वपूर्ण भूमिका भी निभाता रहा था। पंचायती राज व्यवस्था भी अपने मूल स्वरूप में ग्रामीण विकास को गति देने और प्रशासन में जन सहभागिता प्राप्त करने में अपेक्षानुरूप सफलता न प्राप्त कर सकी। इसीलिए समय–समय पर इस व्यवस्था की समीक्षा कीगयी और इसके स्वरूप में परिवर्तन भी होते रहें। 72वें एवं 73वें संविधान संशोधन (1993) के उपरांत पंचायतों के स्वरूप में व्यापक और क्रांतिकारी परिवर्तन हुआ।

इसी प्रकार पंचायती राज संस्थानों और स्थानीय नौकरशाही के बीच सम्बन्धसूत्रता के बारे में भी अधि ानियम चुप्पी साधे हुए है। एक महत्वपूर्ण कमी पंचों एवं सरपंचों के लिए 'साक्षरता' का निर्बन्धन हटा देने की है। पुराने पंचायती राज कानून में सरपंच के प्रत्याशी के लिए साक्षर होना आवश्क था। यह व्यवस्था तर्कसंगत थी। वर्तमान कानून में इेस स्थान नहीं देने के कारण शयद यह हो सकता है कि इसमें अनुसुचित जाति एवं जनजाति के लोगों के लिए स्थान आरक्षित किए गए है और गांवो मे आज भी यह वर्ग सामान्यतः अशिक्षित या निरक्षर है, लेकिन यह व्यवस्था तो की हो जा सकती है कि एक बार कोई व्यक्ति पंच या सरपंच निवंचित हो जाने पर वह दुबारा इस पद के लिए तभी पात्र होगा जब वह पांच वर्षो मे साक्षर हो जाएगा। नये पंचायती राज कानून मे

एक महत्वपूर्ण कमी यह है कि इसमें 'न्याय पंचायतों' की व्यवस्था नहीं की गई है। लेखक की मान्यता है कि 73 वां संविधान संशोधन अधिनियम बन जाने के बावजूद पंचायती रा सम्बन्धों की सफलता राज्य सरकारों की इच्छा पर निर्भर करती है।

साहित्य की समीक्षा :–

पंचायती राज संस्थाओं का ग्रामीण विकास में योगदान जिन–जिन लेखकों का रहा है उसका कुछ स्वरूप निम्न प्रकार है :

जसप्रीत कौर सोनी (2006)[1], ग्लोबलइजेशन : ब्रिजिंग डिवाइड विटवीन सिविल सोसाइटी एण्ड गुड गवर्नेंस प्रस्तुत लेख में लेखक ने सुशासन की महत्ता को स्वीकारा है। सुशासन और नागरिकों के मांगों के संबंध में प्रस्तुत लेख वैश्वीकरण और लोकतंत्र के बीच संबंध को समझने की कोशिश करता है। लेखक के अनुसार लोकतंत्र के तीन मुख्य आधार है, सरकार व्यवसायिक समुदाय और समाज। समाज के उद्देश्यों की पूर्ति व नागरिकों के दैनिक जीवन में आने वाली सामान्य जरूरतों की पूर्ति में स्थानीय नेतृत्व की अहम् भूमिका होती है साथ ही इसमें लेखक ने पंचायतीराज व्यवस्था की महत्ता को भी स्पष्ट किया है।

बी.एम. शर्मा, रूप सिंह बारेठ (2004)[2], गुड गवर्नेंस, ग्लोब्लाइजेशन एण्ड सिविल सोसाइटी प्रस्तुत पुस्तक राष्ट्रीय सेमीनार में प्रस्तुत शोधपत्रों का संकलन है। यह पुस्तक सुशासन वैश्वीकरण और नागरिक समाज इन तीनों अवधारणाओं का भारतीय राजनीतिक परिदृश्य में नवोदित वैश्विक व्यवस्था के संदर्भ में विश्लेषण करने का प्रयास करती है। इस पुस्तक में सुशासन वैश्वीकरण तथा नागरिक समाज की संकल्पनाओं को परिभाषित, परीक्षण व परिष्कृत करने का प्रयत्न किया गया है। विशेष रूप से भारत जैसे विकासशील देश पर इनका प्रभाव तथा इक्कीसवीं शताब्दी की चुनौतियों का इस पुस्तक में विस्तार से वर्णन किया गया है। पुस्तक में इस बात पर विशेष जोर दिया गया है कि किस प्रकार शासन विशेष रूप से शासन में सुधार तथा इसके समाज के संबंध में बात करना आजकल परिपाटी हो गया है। इस पुस्तक में सुशासन के विभिन्न आयामों जैसे–विकास, संगठनात्मक प्रभाव, आमजनता के जीवन स्तर को सुधारने की वचनबद्धता, पारदर्शिता, सहभागिता, सामाजिक न्याय व प्रशासनिक सुधार को बहुत प्रभावशाली व सुरूचिपूर्ण ढ़ंग से प्रस्तुत किया गया है।

सी.पी. बर्थवाल (2003)[3], गुड गवर्नेंस इन इण्डिया प्रस्तुत पुस्तक में लेखक ने 'सुशासन' की अवधारणा पर अत्यधिक बल दिया है। पुस्तक में लेखक ने सुशासन का अर्थ परिभाषित करते हुए उसकी प्रशासन व समाज में उसकी भूमिका को भी स्पष्ट किया है। साथ ही भारत में सुशासन, पंचायतीराज व सुशासन व वैश्वीकरण, सुशासन व लोकतंत्र, सुशासन व मानवाधिकार आदि विषयों को प्रस्तुत किया है।

पूजा शर्मा (2015)[4] इन्होने अपने लघुशोध प्रबंध ''ग्रामीण विकास पंचायतीराज की भूमिका–महमूदपुर विकासखण्ड के विशेष संदर्भ में'' में पंचायती राज से संबंधित पिछले कुछ वर्षो के शासन आदेशों पर अगर गौर किया जाये तो यह स्पष्ट होता है कि कई ऐसे मामलों में सरकार खुद कोई पहल नहीं करना चाहती है और कई मामलों में यदि वह पहल की इच्छुक होती है तो कई बार ऐसा लगता है कि विभिन्न शासनादेश जारी करके सरकार ऐसा दिखाना चाहती है कि वह पंचायतों की उनके अधिकार और विभाग देने के मामले में ज्यादा गंभीर है। इसी लिए जो योजना पंचायत में चलाई जाती है उसका ज्यादा से ज्यादा बी.पी.एल. वालों को लाभ समय से दिया जाना चाहिए। अतः यह कहा जा सकता है कि भारत जैसे देश में जहॉ पंचायती राज व्यवस्था लागू

होती है, यदि पंचायती स्तर पर हमारा विकास होगा तो हम अवश्य ही राष्ट्रीय स्तर पर विकास करेगें क्योकि पंचायती स्तर सबसे छोटा स्तर या विकास की पहली सीढ़ी होती है, यदि पंचायती स्तर पर विकास होगा तो राष्ट्रीय आय, प्रति व्यक्ति आय, इत्यादि में वृद्धि होगी जिससे भारत के विकास में वृद्धि होगी। पंचायती व्यवस्था के अंतगर्त मिलने वाली सेवाओं या योजनाओं का लोगों तक सही से पहुॅचने एवं उसका सही तरह से प्रयोग करने से अवश्य ही पंचायती व्यवस्था विकास करेगी, जिससे भारत विकास करेगा।

बिन्दु सिंह (2014)[5] इन्होने ''भारत में लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण एवं पंचायती राज'' पंचायती राज संस्थाओं के भारतीय संविधान का हिस्सा बन जाने से अब कोई भी पचायतों को दिए गए अधिकरों, दायित्वों और वित्तीय साधनों को उनसे छीन नहीं सकेगा। 73वां संविधान संशोधन न केवल पंचायती राज संस्थाओं मे संरचनात्मक एकरुपता लाने का प्रयास है बल्कि यह सुनिश्चित भी करता है कि इसमें एक ऐसा भी प्रावधान रखा गया है जिसके अन्तर्गत राज्य विधानमण्डल, यदि उचित समझें तो पिछड़ी जातियों के नागरिकों के लिए आरक्षण का प्रावधान रख सकते हैं। अब तक पंचायती राज संस्थाओं की विफलता का कारण उनके चुनाव समय पर न कराना और उन्हे बार–बार भंग या स्थागित किया जाना रहा है वर्तमान अधिनियम में इस समस्या पर समुचित ध्यान दिया गया है और उम्मीद है कि पंचायती राज संस्थान निचले स्तर पर लोकतन्त्र के कारगर उपकरण साबित होंगे क्योंकि उनके निर्वाचनों की निश्चित अवधि पर समयबद्ध व्यवस्था की गई है। इन संस्थानों को अब छह महीने से अधिक समय के लिए भंग या स्थागित नहीं किया जा सकता।

बी. मुखर्जी(1962)[6]**,** ''कम्युनिटी डवलपमेंट एण्ड पंचायती राज, दी इण्डियन जर्नल ऑफ पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन'' वाल्यूम 8 नं. 4 अक्टूबर–दिसम्बर 1962, पृ. 579–80 में बताया गया है कि पंचायती राज को वर्तमान भारत में लोकतंत्र के विकास के लिए आवश्यक प्रक्रिया के रूप में अपनाया जाना है।

जयप्रकाश नारायण(1961)[7]**,** ''स्वराज फॉर दी पीपुल'' वाराणसी, अखिल भारत सर्व सेवा संघ, 1961, पृ. 7–8 में कहा गया है कि पंचायती राज प्रशिक्षण देकर नेतृत्व तैयार करने तक ही नहीं माना जा सकता ना ही सामुदायिक रूप में इसे सर्वोदय कार्यक्रम के रूप में अपनाया गया।

अध्ययन का उद्देश्य –

प्रस्तुत अध्ययन के उद्देश्य निम्नलिखित है :–

- भारत में पंचायती राज व्यवस्था की संरचना, संगठन व कार्यों का अवधारणात्मक व व्यावहारात्मक विश्लेषण तथा अध्ययन करना।
- पंचायती राज के माध्यम् से महिला नेतृत्व की सामाजिक, आर्थिक स्थिति का तुलनात्मक अध्ययन करना।
- पंचायती राज के माध्यम से महिला नेतृत्व की राजनीतिक व प्रशासनिक स्थिति का तुलनात्मक अध्ययन करना।
- पंचायती राज व्यवस्था में महिलाओं के विकास को प्रभावित करने वाले सकारात्मक एवं नकारात्मक कारकों का अध्ययन करना।
- इसके प्रति भ्रान्त धारणा को स्पष्ट करना एवं जनसहभागिता को बढ़ाने का प्रयास करना।
- पंचायतीराज संस्थाओं के बीच समन्वयक स्थापित करते का प्रयास करना एवं उनके बीच पाये जाने वाले अन्य सम्बन्धों के बारे में जानना।

- संविधान के 73वें संशोधन अधिनियम के तहत पारित राज्यों के पंचायती राज अधिनियमों की प्रभावशीलता का महिला नेतृत्व के विकास के संदर्भ में अध्ययन करना।
- पंचायती राज व्यवस्था में महिलाओं के नेतृत्व के समग्र ग्राम पंचायत विकास में दिए जा रहे योगदान के विभिन्न आयामों का अध्ययन करना।
- पंचायती राज व्यवस्था में चुने गये महिलाओं द्वारा अपने वैधानिक कार्यों को करने में सामना की जा रही समस्याओं की पहचान करना।

शोध प्रविधि –

प्रस्तुत अध्ययन प्राथमिक एवं द्वितीयक समंको पर आधारित है। प्राथमिक आंकड़ों के संकलन के लिये विचार पूर्वक निदर्शन प्रविधि का उपयोग किया गया है। चयनित सूचनादाताओं से साक्षात्कार अनुसूची द्वारा सूचनायें संकलित की गयी है तथा सहभागी अवलोकन का भी यथा स्थान उपयोग किया गया है।

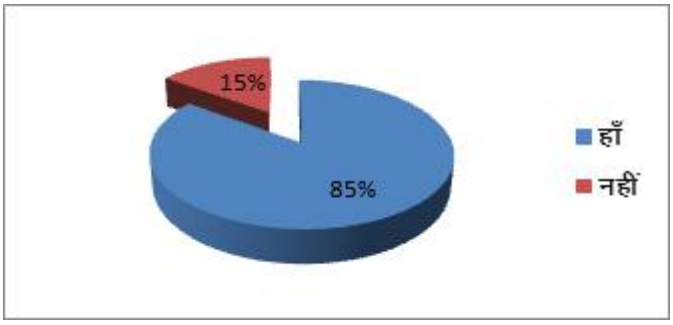
द्वितीयक आंकड़ो के लिये समाचार पत्र पत्रिका, सरकारी, सांख्यिकी आंकड़े, पुस्तके व इन्टरनेट का प्रयोग किया गया है।

तथ्यों का विश्लेषण –

प्रस्तुत शोध पत्र में पंचायतीराज व्यवस्था में अनुसूचित जाति/जनजाति की भूमिका के बारे में जानकारी एकत्र की गयी है –

प्र. 1. क्या आप पंचायतीराज के विषय में जानते है।

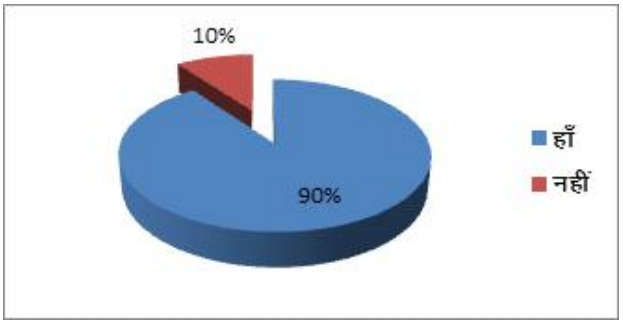
क्र.	उत्तरदाता	संख्या	प्रतिशत
1.	हाँ	85	85%
2.	नहीं	15	15%
	योग	100	100%



उपयुक्त तालिका से यह स्पष्ट होता है कि अनुसूचित जाति/जनजाति के लागों से पंचायतीराज के विषय में पूछने में पता चला कि इस बारे में लोग की 85 प्रतिशत हॉ में और 15 प्रतिशत नहीं में थी।

प्र. 2. पंचायतीराज का गठन होने के बाद गांव का विकास हो रहा है।

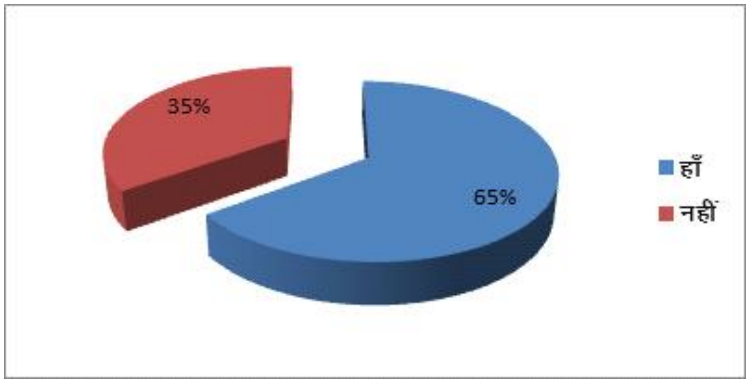
क्र.	उत्तरदाता	संख्या	प्रतिशत
1.	हाँ	90	90%
2.	नहीं	10	10%
	योग	100	100%



उपर्युक्त तालिका में पंचायतीराज का गठन होने के बाद गांव का विकास हो रहा इस बारे में लोगो का 90 प्रतिशत हॉ में जबाब मिला और 10 प्रतिशत नहीं में जबाव प्राप्त हुआ।

प्र. 3. पंचायतीराज के द्वारा प्रदत्त ग्राम पंचायतो के कार्य के बारे में आप जानते है।

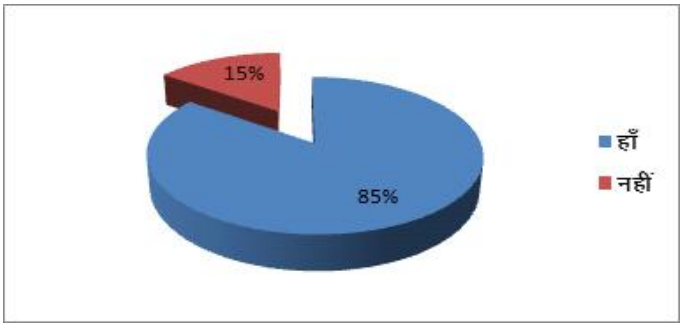
क्र.	उत्तरदाता	संख्या	प्रतिशत
1.	हाँ	65	65%
2.	नहीं	35	35%
	योग	100	100%



उपर्युक्त निष्कर्ष से यह स्पष्ट होता है, कि पंचायती राज के द्वारा प्रदत्त ग्राम पंचायतो के कार्यो के बारे में 65 प्रतिशत लोगों का मत हाँ है और 35 प्रतिशत लोगो का मत नहीं है।

प्र. 4. क्या आप ग्राम पंचायतो को दी गई शक्तियों के बारे में जानते हैं।

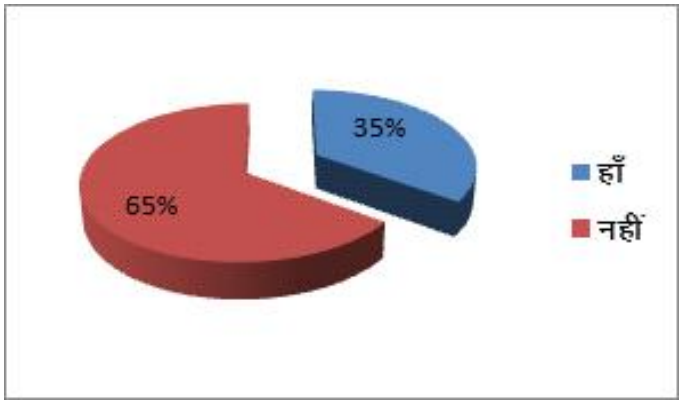
क्र.	उत्तरदाता	संख्या	प्रतिशत
1.	हाँ	85	85%
2.	नहीं	15	15%
	योग	100	100%



उपर्युक्त स्पष्ट होता है कि ग्राम पंचायतो को ही गई शक्तियों के बारे में 85 प्रतिशत लोगों का मत है और 15 प्रतिशत लोगो का मत नहीं है।

प्र. 5. क्या आप ग्राम विकास के लिये बनने वाली योजना में ग्रामीणो से विचार विमर्श करते है।

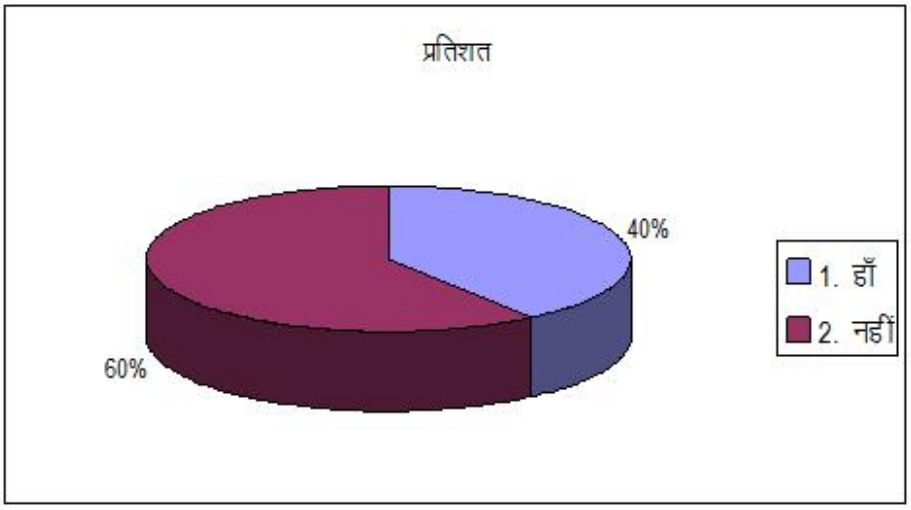
क्र.	उत्तरदाता	संख्या	प्रतिशत
1.	हाँ	65	65%
2.	नहीं	35	35%
	योग	100	100%



उपर्युक्त स्पष्ट है कि ग्राम विकास के लिये बनने वाली योजना में ग्रामीणो से विचार विमर्श करते है, जिसमें 65 प्रतिशत लोगो का मत हाँ है और 35 प्रतिशत मत नहीं है।

प्र. 6. क्या आपने अभी तक ग्राम विकास के लिये कोई योजना तैयार कर विकासखण्ड अधिकारी या जिला अधिकारी को भेजा है।

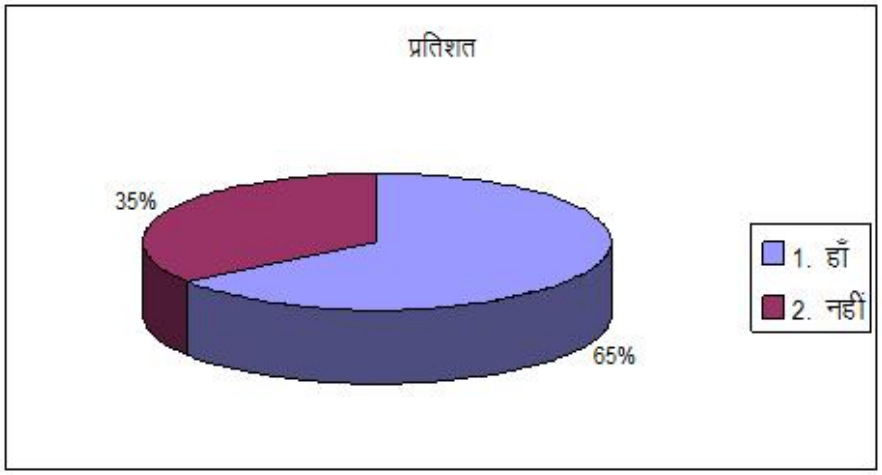
क्र.	उत्तरदाता	प्रतिशत
1.	हाँ	40
2.	नहीं	60
	योग	100%



उपरोक्त सारणी से स्पष्ट है कि अभी तक ग्राम विकास के लिये जो योजनाऐं तैयार कर विकासखण्ड अधिकारी या जिला अधिकारी को भेजा है जिसमें 40 प्रतिशत मत हां है और 60 प्रतिशत मत नहीं है।

प्र. 7. क्या आप ग्राम पंचायत में मौजूद माध्यमिक या प्राथमिक विद्यालय का निरीक्षण या भ्रमण करने जाते है।

क्र.	उत्तरदाता	प्रतिशत
1.	हाँ	65
2.	नहीं	35
	योग	100%



उपरोक्त सारणी से स्पष्ट है कि ग्राम पंचायत में मौजूद माध्यम से या प्राथमिक विद्यालय का निरीक्षण या भ्रमण करने जाते है जिसमें 65 प्रतिशत मत हां है और 35 प्रतिशत मत नहीं है।

चर	न्यादर्शों के मतांतर का सम्मिलित परिदृश्य			
	1	2	3	योग 1, 2, 3
घरेलू शौचालय उपलब्धता	हाँ 90	नहीं 10		90%, 10%
माह में उपयोग की प्रवृत्ति (दिनों में)	प्रत्येक दिन 75	कभी कभी 15	कभी नहीं 10	75%, 15%, 10%
घरेलू शौचालय निर्माण के प्रेरक कारक	कला जत्था 20	स्वच्छता रथ 30	सी.डी/पिक्चर 50	20%, 30%, 50%
ग्राम में घरेलू शौचालय निर्माण न कराने का कारण	आकार छोटा होने का मिथ 57	छत न होना 28	घर गंदा होने का भय 15	57%, 28%, 15%
घर के बच्चों में घरेलू शौचालय उपयोग की प्रवृत्ति	वृद्धि हुई 77	कमी हुई 0	यथावत 23	77%, 0%, 23%
शौचालय उपयोग हेतु प्रत्याकर्षक कारक	समीपता 7	गोपनीयता 17	जागरुकता 76	7%, 17%, 76%

विश्लेषण – उपर्युक्त आंकड़ो के विश्लेषण से निम्न महत्वपूर्ण तथ्य प्राप्त हुये–

- प्रदर्शित ग्रामीणों में 90 प्रतिशत ग्रामीणों के घर में शौचलाय निर्मित है जबकि 10 प्रतिशत ग्रामीणों के घर पर नहीं। चयनित प्रतिदर्शित व्यक्तिक ग्राम पंचायत देवरा में सर्वाधिक 95 प्रतिशत खटखरी – 90 प्रतिशत तथा धरमपुरा में 75 प्रतिशत ग्रामीणों के घर घरेलू शौचालय है। इसी कारण देवरा ग्राम पंचायत को निर्मल ग्राम घोषित किया गया है।
- 75 प्रतिशत प्रतिदर्शित ग्रामीण घरेलू शौचालय का उपयोग प्रतिदिन करते हैं जबकि 15 प्रतिशत कभी–कभी तथा 10 प्रतिशत ग्रामीणों ने घरेलू शौचालय का उपयोग कभी नहीं किया। शौचालय उपयोग न करने वालों में सर्वाधिक 40 वर्ष से अधिक आयु वर्ग के है जिसका प्रमुख कारण जन्म से खुले मैदान में शौचालय जाना बताया गया। शौचालय उपयोग करने वालों मे सर्वाधिक देवरा ग्राम पंचायत के प्रतिदर्शित ग्रामीण है जिसका प्रमुख कारण जागरुकता है।
- घरेलू शौचालय निर्माण के प्रेरक कारक के संबंध में सर्वाधिक 62 प्रतिशत प्रतिदर्शित ग्रामीणों ने सी.डी. या पिक्चर से प्रेरित हुये और सबसे कम 13 प्रतिशत ग्रामीणों ने कला जत्था से प्रेरित होकर शौचालय निर्माण करवाया। लोक स्वास्थ्य यांत्रिकी विभाग द्वारा उपर्युक्त प्रेरक कारकों का उपयोग ग्रामीणों को प्रेरित करने हेतु समय समय पर किया जाता है।
- अध्ययन के सर्वाधिक महत्वपूर्ण प्रश्न के प्रतिउत्तर में 57 प्रतिशत प्रतिदर्शित ग्रामीणों ने शौचालय का आकार (जो 1 वर्ग मीटर निर्धारित है) छोटा होने के कारण ग्राम में अधिकाधिक लोगों ने घरेलू शौचालय का निर्माण नहीं कराना बताया, जबकि 28 प्रतिशत ग्रामीणों ने छत का ना होना (जो हितग्राही द्वारा स्वयं बनाने का प्रावधान है।) तथा 15 प्रतिशत ग्रामीणों ने घर गंदा होने के भय या दुर्गन्ध को घरेलू शौचालय निर्माण न कराने का प्रमुख कारण माना गया। उपर्युक्त तीनों कारकों में कुछ ग्रामीणों के दृष्टिकोण में परिवर्तन स्पष्ट परिलक्षित हुआ। जो शासन की इस महत्वाकांक्षी योजना की सार्थकता इंगित करता है।
- 77 प्रतिशत प्रतिदर्शित ग्रामीण मानते है कि घर के बच्चों में घरेलू शौचालय उपयोग की प्रवृत्ति में वृद्धि हुयी है जबकि 14 प्रतिशत ग्रामीण, बच्चों के शौचालय उपयोग की प्रवृत्ति को यथावत मानते है। ग्रामीण परिवेश के नई पीढ़ी में यह परिवर्तन घरेलू शौचालय की उपयोगिता सिद्ध करता है।

निष्कर्ष एवं सुझाव :–

पंचायती राज व्यवस्था के प्रारम्भ से ही पंचायत प्रतिनिधियों एवं नौकरशाही और पंचायत प्रधासन के पदाधिकारियों के मध्य संबंध, एक ज्वलन्त समस्या के रूप में विद्यमान रहे है। पंचायत व्यवस्था की कमियों के लिए प्रायः दोनों पात्र एक–दूसरे पर दोषारोपण करते आए है। नौकरशाह जन प्रतिनिधियों पर अनभिज्ञता एवं अज्ञानता का दोष लगाते है वही जन प्रतिनिधि नौकरशाहों पर असहयोग और उनमें हाथ से सत्ता जाने के भय के पंचायत राज की असफलता का कारण बतातें है। इसी प्रकार ग्रामीण क्षेत्रों में कार्यरत गैर–सरकारी संगठनों का भी शासकीय मशीनरी तथा पंचायतों द्वारा शंका की दृष्टि से तथा अपने एक प्रतिद्वन्दी के रूप में देखा जाता है। यह माना जाता रहा है कि ग्रामीण क्षेत्रों में विभिन्न कारणों के चलते विकास कार्यो को अंजाम देना एक दुरूह कार्य है।

ऐसे कारणों में नौकरशाहों और प्रवृसकों की अल्परूचि, ग्रामीण समाज में साक्षरता की अल्प दर, मध्यान, गरीबी वे पिछड़ापन आदि उल्लेखनीय है नवीन पंचायत राज व्यवस्था में ग्राम सभी एवं ग्राम पंचायतें बहुत अधिक शक्तिशाली बनाई गई है। पंचायतो को अपने क्षेत्र में अनेक कार्यो से पेशित किया गया है अतः योजना के विभिन्न तत्वों जैसे किसी योजना के उद्देश्यों को और उन्हे लागू करने के ढंग तथा उसके लाभार्थियों के बारे में जानकारी पंचायतों को होना बहुत ही आवश्यक है। गैर सरकारी संगठन इस कार्य में अपने अनुभव से पंचायतों को योजनाओं के निर्माण में सहायता कर सकते है।

इस हेतु ग्राम सभा एवं ग्राम पंचायतों के साथ मिलकर वे वार्षिक, पंच वर्षीय एवं दीर्घकालीक योजनाओं के माडल्स का निर्माण कर पंचायतों को उपलब्ध करा सकते है। स्वंतत्र भारत की आजादी के पश्चात महात्मा गॉधी ने अपने स्वतंत्रता आन्दोलन के अनुभवों के आधार पर अपने चिंतन पर आधारित, उन्होने एक ऐसे देश के रूप में भारत को देखना चाहा था। जिसकी शासन व्यवस्था के संचालन नीति–निर्धारण जैसे अत्यन्त महत्वपूर्ण मुद्दों में ग्रामीण अंचल को प्रभावी, सक्रिय एवं रचान्तमक सहभागिता का समावेश हो।

जनतांत्रिक व्यवस्था में गणों के तंत्र में ग्रामीण के द्वारा निर्वाचित गण अर्थात पंच एवं सरपंच अपने अपने ग्रामों के विकास के मुददो, योजनाओं के निर्माण एवं उनके क्रियान्वयन के प्रति अपनी जिम्मेदारी के प्रति जागृत होकर कार्य करने लगे। यथार्थ में इस पंचायतीराज को विशुद्व पंचायती राज ही बना रहने दिया जाए तो देश के ग्रामीण अंचलों को समुन्नत बनाए जाने की प्रक्रिया को अनवरत रूप से संचालित किया जा सकता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. सोनी, जसप्रीत कौर सोनी, ग्लोबलाइजेशन : ब्रिजिंग डिवाइड बिटवीन सिविल सोसाइटी एण्ड गुड गवर्नेंस, दी इण्डियन जनरल ऑफ पॉलिटिकल साइंस दी इण्डियन पॉलिटिकल साइंस एसोसिएशन, मेरठ, वॉल्यूम–स्मटप्प्ए नं.–2, अप्रैल–जून, पृ.सं. 279–283, 2006
2. बी.एम. शर्मा, रूप सिंह बारेठ, गुड गवर्नेंस ग्लोबलाइजेशन एण्ड सिविल सोसाइटी, रावत पब्लिकेशन, जयपुर, नई दिल्ली, 2004
3. सी.पी. बर्थवाल, गुड गवर्नेंस इन इण्डिया, दीप एण्ड दीप पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 2003
4. पूजा शर्मा (2015)– ग्रामीण विकास पंचायतीराज की भूमिका–महमूदपुर विकासखण्ड के विशेष संदर्भ में'', लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, आगरा।
5. डॉ. गुन्जन शुक्ला (2008) पंचायतीराज में साक्षरता का महत्व, रिसर्च जर्नल ऑफ सोशल एण्ड लाईफ साइन्सेज, सीधी।
6. डॉ0 इकबाल नारायण, सुशील कुमार तथा पी.सी. माथुर की पुस्तक (1970) ''पंचायती राज एडमिनिस्ट्रेशन : ओल्ड कन्ट्रोल एण्ड न्यू चेलैंजेजं''
7. बिन्दु सिंह (2014) ''भारत में लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण एवं पंचायती राज'' अप्रकाशित लघुशोध अवधेश प्रताप सिंह विद्यालय सीधी।
8. डॉ. बसन्तीलाल बाबेल–मानसिंह राष्ट्रवर, राजेन्द्र बाफना, ''वृहद राजस्थान पंचायती राज कोड'', पृ. 248
9. श्री शरण, (2001) ''पंचायती राज, और लोकतंत्र।''

10. आष्टे, प्रभा (1996)– भारतीय समाज में नारी, क्लासिक पब्लिशिंग हाउस, जयपुर।
11. रघुनाथ प्रसाद तिवाड़ी, रामलाल चौधरी, कंचन सिंह चोधरी, (1995) ''राजस्थान में पंचायत कानून'' ऋचा प्रकाशन, जयपुर, 1995 पृ. सं. 8–9
12. भार्गव, बी0 एस0 – पंचायत राज सिस्टम एण्ड पॉलिटिकल पार्टीज, आशीष पब्लिशिंग हाउस 1979 नई दिल्ली।

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2026 Page No. : 30-36

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES PRINT RESEARCH JOURNAL

डिजिटल युग में सोशल मीडिया का युवाओं की सामाजिक पहचान और पारस्परिक संबंधों पर प्रभाव : एक समाजशास्त्रीय विश्लेषण

डॉ. रेखा रावत

सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र)

शासकीय महाविद्यालय, सुल्तानपुर, जिला रायसेन (मध्य प्रदेश)

सारांश :

सस्ते मोबाइल इंटरनेट के विस्तार के साथ भारतीय युवाओं के सामाजिक जीवन का एक बड़ा हिस्सा डिजिटल मंचों पर स्थानांतरित हुआ है। इससे एक समाजशास्त्रीय प्रश्न उठता है : जब पहचान का निर्माण और संबंधों का निर्वाह दोनों सार्वजनिक और अभिलेखित मंचों पर होने लगें, तो उनका स्वरूप कैसे बदलता है। प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य इसी परिवर्तन को समझना है। अध्ययन गुणात्मक और समीक्षात्मक है, इसमें सहकर्मी–समीक्षित शोध–लेखों, प्रमाणित पुस्तकों और आधिकारिक नीति–दस्तावेजों का विषयगत विश्लेषण किया गया है, कोई प्राथमिक आँकड़ा एकत्र नहीं किया गया। विश्लेषण से यह निकलता है कि सोशल मीडिया आत्म–प्रस्तुति के नए साधन और सामाजिक पूँजी के नए स्रोत उपलब्ध कराता है, पर साथ ही निरंतर तुलना, मान्यता पर निर्भरता और दृश्यता के दबाव को भी बढ़ाता है। सबसे महत्त्वपूर्ण निष्कर्ष यह है कि प्रभाव एकरूप नहीं होता – वर्ग, लिंग, भाषा, निवास–स्थान और डिजिटल पहुँच के अनुसार वही मंच भिन्न परिणाम देते हैं।

प्रमुख शब्द :

सोशल मीडिया, युवा, सामाजिक पहचान, आत्म–प्रस्तुति, पारस्परिक संबंध, डिजिटल समाज, सामाजिक पूँजी।

प्रस्तावना :

डिजिटल संचार अब युवाओं के जीवन में कोई अलग गतिविधि नहीं रह गया, जिसे 'ऑनलाइन समय' कहकर बाकी दिनचर्या से काटा जा सके। पढ़ाई, मित्रता, नौकरी की खोज और पारिवारिक संपर्क – सब एक ही उपकरण से होकर गुजरते हैं। इन मंचों का महत्त्व केवल सुविधा का नहीं है। यहाँ युवा अपने बारे में निर्णय लेते हैंरू कौन–सी तस्वीर लगानी है, किस भाषा में लिखना है, किस समूह में दिखना है और किसमें नहीं। ये छोटे चुनाव मिलकर एक सार्वजनिक व्यक्तित्व गढ़ते हैं। इसीलिए सोशल मीडिया को केवल संचार–माध्यम मानना अपर्याप्त है, समाजशास्त्रीय दृष्टि से वह पहचान–निर्माण का मंच है। मित्रता, परिवार और समुदाय की प्रकृति

भी बदली है। मित्रता अब निकटता पर उतनी निर्भर नहीं, पर उसमें निरंतर उपलब्ध रहने की अपेक्षा जुड़ गई है। परिवार दूर रहकर भी जुड़ा रह सकता है, जबकि एक ही कमरे में बैठे सदस्य अलग–अलग स्क्रीन में व्यस्त हो सकते हैं। इस अध्ययन की आवश्यकता इसलिए है कि उपलब्ध अधिकांश लेखन या तो तकनीकी है या मनोवैज्ञानिक। भारतीय संदर्भ में समाजशास्त्रीय विश्लेषण कम है, विशेषकर ऐसा जो सामाजिक असमानताओं को केंद्र में रखे। प्रस्तुत शोध–पत्र का केंद्रीय तर्क यह है कि सोशल मीडिया का प्रभाव तकनीक से नहीं, बल्कि उस सामाजिक संरचना से तय होता है जिसमें वह तकनीक प्रयोग की जाती है।



चित्र 1. मोबाइल फोन के माध्यम से संवाद करते युवाओं का समूह। यह चित्र युवाओं के दैनिक सामाजिक जीवन में डिजिटल संचार की उपस्थिति को दर्शाता है।

छायाकार : Irene Scott; स्रोत : Department of Foreign Affairs and Trade, 28 जून 2013, विकिमीडिया कॉमन्स के माध्यम से। लाइसेंस : CC BY 2.0.

प्रमुख अवधारणाएँ और अध्ययन का दायरा :

युवा से यहाँ अभिप्राय 15 से 29 वर्ष आयु–वर्ग से है – यह परिभाषा राष्ट्रीय युवा नीति 2014 से ली गई है, जिसके अनुसार यह वर्ग जनगणना 2011 के आधार पर जनसंख्या का लगभग 27.5 प्रतिशत है (युवा कार्यक्रम एवं खेल मंत्रालय, 2014)। सोशल मीडिया से आशय उन मंचों से है जहाँ उपयोगकर्ता प्रोफाइल बनाते हैं, अपने संपर्कों की सूची अर्ध–सार्वजनिक रूप से प्रदर्शित करते हैं, और सामग्री बनाकर प्रतिक्रिया प्राप्त करते हैं। सामाजिक पहचान से तात्पर्य उस आत्मबोध से है जो व्यक्ति को अपनी समूह–सदस्यताओं से प्राप्त होता है। पारस्परिक संबंध में मित्रता, पारिवारिक संबंध और सामुदायिक संपर्क सम्मिलित हैं। इस अध्ययन में ऑनलाइन और ऑफलाइन जीवन को दो अलग संसार नहीं माना गया। जिन मित्रों से युवा मंचों पर बात करते हैं, वे प्रायः वही होते हैं जिनसे कक्षा या मुहल्ले में मिलते हैंय और जो झगड़ा ऑनलाइन शुरू होता है, वह विद्यालय तक पहुँचता है।

अध्ययन भारतीय युवाओं पर केंद्रित है और द्वितीयक स्रोतों के विश्लेषण पर आधारित है, यह कोई क्षेत्रीय सर्वेक्षण नहीं है।

शोध पद्धति :

अध्ययन गुणात्मक और समीक्षात्मक प्रकृति का है। इसमें सहकर्मी–समीक्षित शोध–लेखों, अकादमिक पुस्तकों तथा आधिकारिक नीति–दस्तावेजों का विषयगत विश्लेषण किया गया है। विश्लेषण के लिए पाँच श्रेणियाँ

निर्धारित की गईं – सामाजिक पहचान, आत्म–प्रस्तुति, सामाजिक तुलना, सामाजिक पूँजी और पारस्परिक संबंध। कोई अनुभवजन्य प्राथमिक आँकड़ा प्रस्तुत नहीं किया गया। तीन सीमाएँ स्वीकार की जानी चाहिए। पहली, सोशल मीडिया इतनी तेजी से बदलता है कि कुछ वर्ष पुराने अध्ययनों के निष्कर्ष आज के मंचों पर पूरी तरह लागू नहीं होते। दूसरी, उपलब्ध शोध का बड़ा भाग पश्चिमी विश्वविद्यालयी विद्यार्थियों पर आधारित है। तीसरी, द्वितीयक स्रोतों पर निर्भरता के कारण यह अध्ययन युवाओं के अपने शब्दों तक नहीं पहुँचता।

सैद्धांतिक परिप्रेक्ष्य :

गॉफमैन (1959) का तर्क था कि सामाजिक जीवन में व्यक्ति एक प्रदर्शन करता है – 'अग्रमंच' पर छवि प्रस्तुत करता है, 'पृष्ठमंच' पर सहज रहता है। सोशल मीडिया इसे असामान्य रूप से स्पष्ट कर देता है : प्रोफाइल स्थायी अग्रमंच है, और तस्वीर का चयन, कैप्शन का संपादन तथा पोस्ट हटाने का निर्णय – सब प्रभाव–प्रबंधन के उदाहरण। अंतर यह है कि यह प्रदर्शन अभिलेखित रहता है और उसकी प्रतिक्रिया गिनी जा सकती है। कूली (1902) की 'लुकिंग–ग्लास सेल्फ' की अवधारणा यहीं जुड़ती है : व्यक्ति स्वयं को दूसरों की प्रतिक्रिया के दर्पण में देखता है। लाइक और कमेंट इस दर्पण को संख्यात्मक बना देते हैं, जिससे आत्म–मूल्यांकन का आधार अधिक ठोस पर अधिक अस्थिर भी हो जाता है। ताजफेल और टर्नर (1979) के सामाजिक पहचान सिद्धांत के अनुसार आत्मबोध का एक हिस्सा समूह–सदस्यता से आता है। ऑनलाइन समूह – भाषा, क्षेत्र, रुचि या व्यवसाय पर आधारित – यही कार्य करते हैं, कभी–कभी भौगोलिक समुदाय से अधिक प्रभावी ढंग से। बोर्दियो (1986) की सामाजिक पूँजी की अवधारणा बताती है कि संबंध स्वयं संसाधन हैं। मंच इस पूँजी को बढ़ा सकते हैं, पर समान रूप से वितरित नहीं करते।

साहित्य समीक्षा :

आत्म–प्रस्तुति पर हुए अध्ययनों में यह प्रवृत्ति सामान्य रूप से दिखती है कि उपयोगकर्ता अपनी छवि चयनित रूप में प्रस्तुत करते हैं। बॉयड (2014) ने तर्क दिया कि यह चयन धोखा नहीं, सार्वजनिक दृश्यता वाले वातावरण में सामान्य सामाजिक कौशल है। सामाजिक तुलना पर साहित्य अधिक स्पष्ट है। फेस्टिंगर (1954) का मूल तर्क था कि व्यक्ति स्वयं का मूल्यांकन दूसरों से तुलना करके करता है। वोगल और सहयोगियों (2014) ने पाया कि मंचों पर अधिक समय बिताने वालों में आत्म–सम्मान अपेक्षाकृत कम मिला, जिसमें ऊर्ध्वगामी तुलना की भूमिका थी। यह सहसंबंध है, इसे एकतरफा कारण मान लेना उचित नहीं। सामाजिक पूँजी पर एलिसन, स्टाइनफील्ड और लैंप (2007) का अध्ययन प्रायः उद्धृत होता है। पटनम (2000) के 'सेतु–निर्माणकारी' और 'बंधनकारी' पूँजी के भेद का उपयोग करते हुए उन्होंने पाया कि मंचों का उपयोग पहली से सर्वाधिक जुड़ा था – यानी उन कमजोर संपर्कों से, जो नई सूचना और नए दृष्टिकोण देते हैं। नेटवर्क और समुदाय के प्रश्न पर रेनी और वेलमन (2012) का तर्क है कि समुदाय समाप्त नहीं हुआ, उसका आधार बदल गया – स्थान से हटकर व्यक्ति–केंद्रित नेटवर्क की ओर। इन अध्ययनों की एक साझा सीमा है : अधिकांश पश्चिमी और शहरी नमूनों पर आधारित हैं। भारतीय संदर्भ में, विशेषकर हिंदी–भाषी और ग्रामीण युवाओं पर, समाजशास्त्रीय शोध सीमित है – यही इस क्षेत्र का सबसे स्पष्ट शोध–अंतर है।

सोशल मीडिया और युवाओं की सामाजिक पहचान :

पहचान का प्रदर्शन मंचों पर ठोस रूप लेता है। प्रोफाइल चित्र, जीवनी–पंक्ति, भाषा का चुनाव और साझा

सामग्री – ये मिलकर बताते हैं कि व्यक्ति स्वयं को किस रूप में देखा जाना चाहता है। भाषा का चुनाव भारतीय संदर्भ में विशेष रूप से अर्थपूर्ण है : कोई युवा हिंदी में लिखे, अंग्रेजी में, या रोमन लिपि में हिंदी – यह वर्ग और शिक्षा से जुड़ी पहचान का संकेत बन जाता है। इस प्रदर्शन को मान्यता संख्याओं के रूप में मिलती है। लाइक और अनुयायी–संख्या सामाजिक स्वीकृति को मापनीय बना देती हैं। कूली की दृष्टि से यह दर्पण अधिक स्पष्ट हो जाता है, पर अधिक निर्मम भी – क्योंकि प्रतिक्रिया की अनुपस्थिति भी अब दिखाई देती है। एक अतिरिक्त कठिनाई यह है कि मंच पर परिवार, मित्र, शिक्षक और अपरिचित – सब एक ही दर्शक–वर्ग में मिल जाते हैं, जिसे मारविक और बॉयड (2011) ने 'संदर्भ–संकुचन' कहा। एक ही पोस्ट सबके सामने जाती है, जबकि आमने–सामने के जीवन में व्यवहार श्रोता के अनुसार बदलता है। सामूहिक पहचान भी यहीं अभिव्यक्त होती है। जातीय, भाषाई, क्षेत्रीय, लैंगिक और पेशेवर – सभी सामूहिक पहचानें ऑनलाइन समूहों में संगठित रूप ले लेती हैं। यह दोनों दिशाओं में काम करता है : कहीं हाशिए के समूहों को आवाज मिलती है, कहीं समूह–सीमाएँ और कठोर हो जाती हैं। इन्फ्लुएंसर संस्कृति एक और परत जोड़ती है, क्योंकि आदर्शीकृत जीवनशैली का निरंतर प्रदर्शन तुलना का स्थायी संदर्भ–बिंदु बना देता है। पर पूरी तस्वीर नकारात्मक नहीं। इन्हीं मंचों पर युवा वह अभिव्यक्ति भी पाते हैं जो निकट परिवेश में संभव नहीं – रचनात्मक कार्य साझा करना, अपनी रुचि के लोग खोजना, पहचान के साथ प्रयोग करना। तनाव तब उठता है जब गढ़ी हुई छवि और वास्तविक जीवन के बीच दूरी बढ़ जाए।



चित्र 2. एक सामाजिक आयोजन में स्मार्टफोन का उपयोग करते युवा। यह दृश्य प्रत्यक्ष सामाजिक उपस्थिति और डिजिटल संलग्नता के बीच बनते नए संबंध को रेखांकित करता है।
छायाकार : Tomwsulcer, 7 जुलाई 2014, विकिमीडिया कॉमन्स। लाइसेंस : CC0 1.0.

पारस्परिक संबंधों पर प्रभाव :

सकारात्मक पक्ष ठोस हैं। प्रवासी युवाओं के लिए मंच परिवार से जुड़े रहने का सबसे सस्ता साधन हैं। समान रुचि वाले समुदाय – संगीत के, प्रतियोगी परीक्षा के, या किसी बीमारी से जूझ रहे लोगों के – भावनात्मक और सूचनात्मक समर्थन देते हैं, एलिसन और सहयोगियों (2007) का निष्कर्ष यहीं लागू होता है। हाशिए पर स्थित युवाओं के लिए, जिन्हें निकट परिवेश में स्वीकृति नहीं मिलती, ऐसे समुदाय कभी–कभी एकमात्र सहारा होते हैं। चुनौतियाँ भी उतनी ही वास्तविक हैं। जब संबंध सार्वजनिक रूप से प्रदर्शित होने लगें – जन्मदिन की शुभकामना दीवार पर लिखी जाए तो ही गिनी जाए – तो निर्वाह का एक हिस्सा प्रदर्शन में बदल जाता है।

पाठ–आधारित संवाद में स्वर और भाव–भंगिमा अनुपस्थित होते हैं, इसलिए गलत व्याख्या की संभावना बढ़ती है। निरंतर उपलब्ध रहने की अपेक्षा नया दबाव है : संदेश पढ़ा गया दिखे और उत्तर न आए, तो वह स्वयं एक संकेत बन जाता है। साइबर उत्पीड़न और गोपनीयता का संकट इससे अधिक गंभीर हैं, और इनका भार सभी पर समान नहीं पड़ता। एक पद्धतिगत सावधानी आवश्यक है : यह कहना कि सोशल मीडिया अकेलापन 'पैदा करता है', उपलब्ध साक्ष्य से आगे जाना होगा। अधिकांश अध्ययन सहसंबंधात्मक हैं, और यह भी संभव है कि पहले से अकेलापन अनुभव करने वाले युवा मंचों पर अधिक समय बिताते हों।



चित्र 3. मोबाइल फोन साझा करती दो मित्र। एक ही उपकरण पर एक साथ देखना यह दिखाता है कि डिजिटल संचार सदैव संबंधों को तोड़ता नहीं, कभी–कभी उन्हें साझा गतिविधि का रूप भी देता है।
छायाकार : Garry Knight, 11 मार्च 2012, विकिमीडिया कॉमन्स। लाइसेंस : CC BY-S, 2.0.

अवसर, जोखिम और सामाजिक असमानताएँ :

सोशल मीडिया युवाओं को आवाज, भागीदारी और समुदाय देता है। पर यह अवसर समान रूप से वितरित नहीं है। डिजिटल विभाजन अब केवल उपकरण होने या न होने का प्रश्न नहीं। प्रश्न यह है कि उपकरण किसका है, कितनी देर मिलता है, और उस पर निगरानी कौन रखता है। अनेक घरों में एक फोन साझा होता है और उसका नियंत्रण प्रायः पुरुष सदस्य के पास रहता है – इसलिए लड़कियों का ऑनलाइन अनुभव आरंभ से ही भिन्न होता है। इसमें उत्पीड़न का भय और पारिवारिक निगरानी जुड़ जाए, तो अंतर और बढ़ता है। भाषा एक और विभाजक है। जहाँ सामग्री का बड़ा हिस्सा अंग्रेजी में है, वहाँ हिंदी या अन्य भारतीय भाषाओं में सहज युवा सूचना और अवसर के मामले में पीछे रह जाते हैं। ग्रामीण–शहरी अंतर संपर्क की गुणवत्ता और डिजिटल कौशल, दोनों में दिखता है। मंचों की अपनी संरचना भी तटस्थ नहीं। एल्गोरिद्म तय करते हैं कि किसकी सामग्री किस तक पहुँचेगी – यह दृश्यता का असमान वितरण है, और गोपनीयता के प्रश्न इसी संरचना का हिस्सा हैं। इसीलिए 'स्क्रीन पर कितना समय' किसी युवा के बारे में बहुत कम बताता है। अधिक महत्त्वपूर्ण यह है कि वह वहाँ क्या कर रहा है, किसके साथ, और किस सामाजिक स्थिति से।

चर्चा :

शोध–प्रश्नों को सीधे संबोधित करें तो पाँच भेद उभरते हैं।

पहला, संपर्क की मात्रा और संबंध की गुणवत्ता एक नहीं – सैकड़ों संपर्क कुछ गहरे संबंधों की जगह नहीं लेते। दूसरा, ऑनलाइन लोकप्रियता और सामाजिक समर्थन अलग हैंय कठिन समय में सहायता प्रायः उन

थोड़े लोगों से आती है जो सूची में सबसे ऊपर नहीं होते। तीसरा, चुनी हुई छवि और बहुआयामी वास्तविक पहचान के बीच अंतर स्वाभाविक हैय समस्या तब है जब पहली को बनाए रखने का श्रम दूसरी पर भारी पड़ने लगे। चौथा, नेटवर्क का विस्तार भावनात्मक निकटता की गारंटी नहीं। पाँचवाँ, डिजिटल भागीदारी समान डिजिटल अवसर नहीं – यही इस अध्ययन का सबसे महत्त्वपूर्ण बिंदु है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि परिणाम तकनीक से निर्धारित नहीं होते। पारिवारिक वातावरण, मित्र–समूह, शिक्षा, वर्ग, लिंग, भाषा और मंच की अपनी संरचना – ये सब मिलकर तय करते हैं कि वही ऐप किसी के लिए अवसर बनेगा और किसी के लिए दबाव।

निष्कर्ष एवं सुझाव :

सोशल मीडिया युवाओं की पहचान और संबंधों को एक साथ विस्तार भी देता है और सीमित भी करता है। यह दोहरी भूमिका विरोधाभास नहीं, बल्कि इस बात का संकेत है कि परिणाम सामाजिक संदर्भ पर निर्भर करते हैं। युवाओं को इस प्रक्रिया में निष्क्रिय पीड़ित मानना गलत होगा – वे मंचों का उपयोग सोच–समझकर करते हैं, अपनी सीमाएँ बनाते हैं, और अपने ढंग से समुदाय गढ़ते हैं। व्यावहारिक दृष्टि से तीन बातें आवश्यक हैं : डिजिटल साक्षरता, जिसमें तकनीकी कौशल के साथ आलोचनात्मक मूल्यांकन भी होय गोपनीयता के प्रति जागरूकता और संवेदनशील संवाद। परिवारों तथा शिक्षण संस्थानों में प्रतिबंध की तुलना में समझ अधिक प्रभावी है, क्योंकि प्रतिबंध प्रायः उपयोग को छिपा देता है, समाप्त नहीं करता।

अंत में, भारतीय युवाओं पर आधारित प्राथमिक और क्षेत्रीय अनुसंधान की स्पष्ट आवश्यकता है – विशेषकर ग्रामीण, हिंदी–भाषी और प्रथम–पीढ़ी के विद्यार्थियों पर, जिनके अनुभव उपलब्ध साहित्य में कम दर्ज हुए हैं।

संदर्भ–सूची :

1. Bourdieu, P. (1986). The forms of capital. In J. G. Richardson (Ed.), Handbook of theory and research for the sociology of education (pp. 241–258). Greenwood Press.
2. boyd, d. (2014). It's complicated: The social lives of networked teens. Yale University Press.
3. Cooley, C. H. (1902). Human nature and the social order. Charles Scribner's Sons.
4. Ellison, N. B., Steinfield, C., & Lampe, C. (2007). The benefits of Facebook "friends": Social capital and college students' use of online social network sites. Journal of Computer-Mediated Communication, 12(4), 1143–1168. https://doi.org/10.1111/j.1083-6101.2007.00367.x
5. Festinger, L. (1954). A theory of social comparison processes. Human Relations, 7(2), 117–140.
6. Goffman, E. (1959). The presentation of self in everyday life. Doubleday.
7. Marwick, A. E., & boyd, d. (2011). I tweet honestly, I tweet passionately: Twitter users, context collapse, and the imagined audience. New Media & Society, 13(1), 114–133.
8. Putnam, R. D. (2000). Bowling alone: The collapse and revival of American community. Simon

& Schuster.
9. Rainie, L., & Wellman, B. (2012). Networked: The new social operating system. MIT Press.
10. Tajfel, H., & Turner, J. C. (1979). An integrative theory of intergroup conflict. In W. G. Austin & S. Worchel (Eds.), The social psychology of intergroup relations (pp. 33–47). Brooks/Cole.
11. Vogel, E. A., Rose, J. P., Roberts, L. R., & Eckles, K. (2014). Social comparison, social media, and self-esteem. Psychology of Popular Media Culture, 3(4), 206–222. https://doi.org/10.1037/ppm0000047
12. युवा कार्यक्रम एवं खेल मंत्रालय. (2014). राष्ट्रीय युवा नीति 2014. भारत सरकार, https://yas.gov.in/documents/national-youth-policy-2014 [Ministry of Youth Affairs and Sports. National Youth Policy 2014]
13. Scott, I. (2013). Group of young people texting on mobile phones [छायाचित्र]. Department of Foreign Affairs and Trade, Australia. Wikimedia Commons. CC BY 2.0. https://commons.wikimedia.org/wiki/File : Group_of_young_people_texting_on_ mobile_ phones._(10699648676).jpg
14. Tomwsulcer. (2014). Young people texting on smartphones using thumbs [छायाचित्र]. Wikimedia Commons. CC0 1.0. https://commons.wikimedia.org/wiki/ File :Young_people_texting_on_smartphones_using_thumbs.JPg
15. Knight, G. (2012). Friends with mobile phones [छायाचित्र]. Wikimedia Commons. CC BY-SA 2.0. https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Friends_with_Mobile_Phones.jpg

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2026 Page No. : 37-43

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES PRINT RESEARCH JOURNAL

भारतीय कंपनियों में ईएसजी प्रकटीकरण और निवेशकों के विश्वास के बीच संबंध : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

श्रीमती प्रियंका यादव

सहायक प्राध्यापक, वाणिज्य,

शासकीय महाविद्यालय, खजराना, इंदौर।

सारांश :

वित्तीय विवरणों के साथ पर्यावरणीय, सामाजिक और अभिशासन संबंधी सूचना का महत्त्व भारतीय पूँजी बाजार में लगातार बढ़ा है। यह अध्ययन इस प्रश्न की जाँच करता है कि ऐसा प्रकटीकरण निवेशकों के विश्वास को किस प्रकार प्रभावित करता है। पद्धति गुणात्मक और समीक्षात्मक है, इसमें भारतीय प्रतिभूति एवं विनिमय बोर्ड के नियमों, समीक्षित शोध–लेखों और आधिकारिक दस्तावेजों का विषयगत विश्लेषण किया गया है, कोई काल्पनिक सांख्यिकीय परीक्षण प्रस्तुत नहीं किया गया। विश्लेषण से यह निकलता है कि प्रकटीकरण सूचना–असमानता को कम करके विश्वास बढ़ा सकता है, पर यह संबंध स्वचालित नहीं – मात्रा से अधिक गुणवत्ता, संगति और स्वतंत्र आश्वासन निर्णायक हैं। व्यावसायिक उत्तरदायित्व एवं संधारणीयता प्रतिवेदन और उसके मूल ढाँचे ने भारतीय रिपोर्टिंग को अधिक व्यवस्थित आधार दिया है, पर अस्पष्ट या चयनात्मक प्रकटीकरण विश्वसनीयता को कमजोर भी कर सकता है। निष्कर्ष यह है कि प्रकटीकरण और विश्वास के बीच संबंध कंपनी के प्रदर्शन, उद्योग तथा बाजार की परिस्थितियों से भी उतना ही प्रभावित होता है जितना प्रकटीकरण की अपनी गुणवत्ता से।

प्रमुख शब्द :

ईएसजी, प्रकटीकरण, निवेशक विश्वास, बीआरएसआर, कॉरपोरेट पारदर्शिता, अभिशासन, भारतीय कंपनियाँ।

प्रस्तावना :

वित्तीय विवरण किसी कंपनी की स्थिति का केवल एक पक्ष बताते हैं। पिछले दशक में निवेशकों की रुचि उस दूसरे पक्ष में भी बढ़ी है जो लाभ–हानि खाते में नहीं दिखता – जल का उपयोग, कर्मचारियों की सुरक्षा, बोर्ड की स्वतंत्रता। इन्हें सम्मिलित रूप से पर्यावरणीय, सामाजिक और अभिशासन – संक्षेप में ईएसजी – कहा जाता है। यह रुचि आकस्मिक नहीं : जलवायु–जोखिम, नियामक सख्ती और दीर्घकालिक निवेश–रणनीति ने गैर–वित्तीय सूचना को निवेश–निर्णय का हिस्सा बना दिया है। प्रकटीकरण और पारदर्शिता का संबंध सीधा प्रतीत

होता है – जितनी अधिक सूचना, उतना अधिक भरोसा – पर यह संबंध जितना सीधा लगता है, उतना है नहीं। भारतीय पूँजी बाजार में जिम्मेदार व्यावसायिक रिपोर्टिंग की यात्रा क्रमिक रही है, और यह प्रक्रिया आज भी विकसित हो रही है। यहाँ एक स्पष्टीकरण आवश्यक है : निवेशक कोई एक समरूप वर्ग नहीं। संस्थागत निवेशक ईएसजी सूचना का विश्लेषण उस गहराई से करते हैं जो खुदरा निवेशक के लिए संभव नहीं, इसलिए 'निवेशक विश्वास' को एक ही तरह से मापना उचित नहीं होगा। इस अध्ययन की आवश्यकता यहीं से निकलती है। लोकप्रिय चर्चा में ईएसजी प्रकटीकरण को या तो पारदर्शिता का समाधान माना जाता है या विज्ञापन का नया रूप – दोनों अधूरे हैं। केंद्रीय तर्क यह है कि नियमित, तुलनीय और आश्वस्त ईएसजी सूचना सूचना–असमानता घटाकर विश्वास बढ़ा सकती है, पर प्रकटीकरण की अधिक मात्रा अपने आप विश्वास पैदा नहीं करती – चयनात्मक या प्रचारात्मक प्रकटीकरण संदेह भी बढ़ा सकता है।



चित्र 1. मुंबई स्थित बॉम्बे स्टॉक एक्सचेंज भवन। भारतीय सूचीबद्ध कंपनियों और निवेशकों के बीच पारदर्शिता एवं विश्वास के संदर्भ में पूँजी बाजार की संस्थागत भूमिका महत्त्वपूर्ण है।
छायाकार : Niyantha Shekhar, 2007। स्रोत : विकिमीडिया कॉमन्स। लाइसेंस : CC BY 2.0.

प्रमुख अवधारणाएँ और अध्ययन का दायरा :

ईएसजी पर्यावरणीय, सामाजिक और अभिशासन कारकों का संक्षिप्त रूप है, कंपनी का पर्यावरण पर प्रभाव, समाज से संबंध, और निर्णय लेने की संरचना। ईएसजी प्रकटीकरण इन तीनों की जानकारी को व्यवस्थित और सार्वजनिक रूप से प्रस्तुत करना है। निवेशक विश्वास का अर्थ यहाँ यह है कि निवेशक कंपनी की सूचना को कितना विश्वसनीय और निर्णय–योग्य मानता है, यह किसी एक क्षण के शेयर–मूल्य तक सीमित नहीं। प्रकटीकरण की मात्रा और गुणवत्ता में भेद आवश्यक है, अधिक पृष्ठ अधिक पारदर्शिता का प्रमाण नहीं। गुणवत्ता चार शब्दों में समझी जा सकती है : materiality यानी केवल निर्णय–प्रासंगिक सूचना; comparability यानी कंपनियों के बीच तुलना योग्य होना; consistency यानी वर्ष–दर–वर्ष एक जैसी परिभाषाएँ और assurance यानी स्वतंत्र सत्यापन। एक भ्रम यहीं दूर करना जरूरी है। ईएसजी, सीएसआर और संधारणीयता पर्यायवाची नहीं। सीएसआर प्रायः परोपकारी गतिविधि की बात करता है, संधारणीयता व्यापक दार्शनिक लक्ष्य है, ईएसजी इन दोनों

को मापनीय संकेतकों में बदलने का ढाँचा है, जो विशेष रूप से निवेशकों के लिए बनाया गया है। अध्ययन भारतीय सूचीबद्ध कंपनियों पर केंद्रित है और यह समीक्षा–आधारित हैय इसमें कोई नया सर्वेक्षण या सांख्यिकीय परीक्षण प्रस्तुत नहीं किया गया।

शोध पद्धति :

अध्ययन वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक है तथा द्वितीयक स्रोतों पर आधारित है, सेबी के नियमों, बीआरएसआर ढाँचे, कंपनियों की सार्वजनिक रिपोर्टों तथा समीक्षित शोध–साहित्य का विषयगत विश्लेषण। विश्लेषण के लिए छह श्रेणियाँ तय कीं, पारदर्शिता, सूचना–असमानता, तुलनीयता, आश्वासन, ग्रीनवॉशिंग और निवेशक विश्वास। कोई नया सांख्यिकीय संबंध प्रस्तुत नहीं किया गया। तीन सीमाएँ स्वीकार की जानी चाहिए। पहली, द्वितीयक स्रोतों पर निर्भरता के कारण यह किसी विशेष कंपनी–समूह का प्रत्यक्ष परीक्षण नहीं करता। दूसरी, विभिन्न रेटिंग एजेंसियाँ एक ही कंपनी को भिन्न स्कोर दे सकती हैं। तीसरी, निवेशक विश्वास को प्रत्यक्ष मापना कठिन है, उपलब्ध अध्ययन शेयर–मूल्य या विश्लेषक–रेटिंग जैसे सन्निकट संकेतकों का सहारा लेते हैं।

सैद्धांतिक आधार :

सूचना–असमानता यहाँ केंद्रीय अवधारणा है : प्रबंधन के पास वह जानकारी होती है जो बाहरी निवेशक के पास नहीं। Signalling Theory बताता है कि प्रकटीकरण कंपनी द्वारा बाजार को दिया गया संकेत हो सकता है, विशेषकर जब वह संकेत महँगा या नकल करना कठिन हो, जैसे स्वतंत्र आश्वासन प्राप्त करना। Stakeholder Theory एक व्यापक आयाम जोड़ता है : कंपनी केवल शेयरधारकों के प्रति नहीं, कर्मचारियों, समुदाय और पर्यावरण के प्रति भी जवाबदेह है। Legitimacy Theory बताता है कि कंपनियाँ समाज की अपेक्षाओं के अनुरूप दिखने के लिए प्रकटीकरण करती हैं, इसका स्वस्थ रूप वास्तविक सुधार हो सकता है, अस्वस्थ रूप केवल छवि–प्रबंधन। Agency Theory की दृष्टि से बोर्ड की निगरानी और प्रबंधन के हितों में संभावित टकराव प्रकटीकरण की गुणवत्ता को प्रभावित करते हैं। इन सिद्धांतों को साथ पढ़ने पर स्पष्ट निष्कर्ष निकलता है : अप्रमाणित या चयनात्मक प्रकटीकरण की विश्वसनीयता स्वतः कमजोर होती है, क्योंकि वह किसी वास्तविक लागत या सत्यापन से नहीं गुजरा। स्वतंत्र आश्वासन इसी अंतर को पाटने का प्रयास है, यह संकेत को विश्वसनीय बनाने की लागत जोड़ता है।

भारत में ईएसजी प्रकटीकरण का नियामक विकास :

भारत में यह यात्रा 2012 में व्यावसायिक उत्तरदायित्व रिपोर्ट से शुरू हुई, जो शुरू में शीर्ष सूचीबद्ध कंपनियों के लिए अनिवार्य थी। 2021 में सेबी ने इसे व्यावसायिक उत्तरदायित्व एवं संधारणीयता रिपोर्ट (बीआरएसआर) से प्रतिस्थापित किया, जो अधिक संरचित संकेतकों पर आधारित है और शीर्ष एक हजार सूचीबद्ध कंपनियों पर लागू है। 2023 में सेबी ने बीआरएसआर कोर पेश किया। नौ ईएसजी क्षेत्रों में लगभग उनतालीस मुख्य प्रदर्शन–संकेतकों का एक उपसमुच्चय, जिसमें उत्सर्जन, जल–उपयोग, लैंगिक विविधता और वेतन–समानता जैसे मापनीय आँकड़े शामिल हैं। बीआरएसआर और बीआरएसआर कोर को एक समान मानना भूल होगी, पहला व्यापक वर्णनात्मक ढाँचा है, दूसरा उसका संकुचित, अधिक सत्यापन–योग्य केंद्र। बीआरएसआर कोर के आश्वासन की अनिवार्यता चरणबद्ध ढंग से लागू हुई है। 2023–24 में शीर्ष 150 सूचीबद्ध कंपनियाँ, 2024–25 में शीर्ष 250, 2025–26 में शीर्ष 500, और 2026–27 तक शीर्ष 1,000 कंपनियाँ इसके दायरे में आ जाएँगी, जो

बाजार–पूँजीकरण के आधार पर तय होता है। मार्च 2025 के सेबी परिपत्र ने इसे नया रूप दिया है। अब कंपनियाँ 'आश्वासन' के स्थान पर 'आकलन अथवा आश्वासन' में से कोई एक चुन सकती हैं, जिससे अनुपालन का मार्ग कुछ लचीला हुआ। मूल्य–श्रृंखला प्रकटीकरण अभी स्वैच्छिक बना हुआ है। यह भेद ध्यान देने योग्य है कि अनिवार्य और स्वैच्छिक प्रकटीकरण एक जैसे नहीं आँके जा सकते। कानून की माँग से आई सूचना अधिक तुलनीय होती है, स्वैच्छिक सूचना कंपनी के अपने चयन पर निर्भर रहती है। जब सभी बड़ी कंपनियाँ एक जैसे संकेतकों पर रिपोर्ट करती हैं, तो निवेशक सीधी तुलना कर पाते हैं। यही गुण प्रकटीकरण को उपयोगी बनाता है, केवल उसकी उपस्थिति नहीं।

ईएसजी प्रकटीकरण और निवेशक विश्वास का संबंध :

प्रकटीकरण सूचना–असमानता को कई तरीकों से कम कर सकता है। यह पर्यावरणीय और सामाजिक जोखिमों को पहले से पहचानने में सहायता करता है। जैसे जल–संकट वाले क्षेत्र में संयंत्र। यह कंपनी की दीर्घकालिक रणनीति और जोखिम–प्रबंधन का संकेत भी देता है, और मानकीकृत संकेतकों के माध्यम से कंपनियों की आपस में तुलना का साधन देता है। पर यहाँ महत्त्वपूर्ण भेद है। अच्छा ईएसजी प्रदर्शन और अच्छा ईएसजी प्रकटीकरण एक बात नहीं। कोई कंपनी कम उत्सर्जन करती हुई भी खराब रिपोर्टिंग कर सकती है, और कोई उत्कृष्ट रिपोर्ट के साथ भी वास्तविक प्रदर्शन में कमजोर हो सकती है। निवेशक विश्वास दोनों से प्रभावित होता है, पर अलग–अलग ढंग से। संस्थागत और खुदरा निवेशकों के दृष्टिकोण में भी अंतर संभावित है। संस्थागत निवेशक विस्तृत आँकड़ों का स्वतंत्र विश्लेषण कर पाते हैं, जबकि खुदरा निवेशक सरलीकृत रेटिंग पर अधिक निर्भर करते हैं। ढालिवाल और सहयोगियों (2011) के अमेरिकी कंपनियों पर किए अध्ययन में स्वैच्छिक गैर–वित्तीय प्रकटीकरण शुरू करने वाली कंपनियों में पूँजी की लागत घटती पाई गई, विशेषकर उनमें जिनका सामाजिक प्रदर्शन वास्तव में मजबूत था। पर यह संबंध सहसंबंधात्मक है, कारणात्मक नहीं। यह भी संभव है कि पहले से मजबूत कंपनियाँ ही बेहतर प्रकटीकरण करने में सक्षम हों। क्लार्क्सन और सहयोगियों (2008) ने भी पाया कि वास्तविक पर्यावरणीय प्रदर्शन और स्वैच्छिक प्रकटीकरण के बीच संबंध पहले सोचे गए से अधिक जटिल है, और यह कंपनी की दृश्यता जैसे कारकों पर भी निर्भर करता है।



चित्र 2. चंडीगढ़ के धनास झील क्षेत्र में स्थापित सौर ऊर्जा संयंत्र। नवीकरणीय ऊर्जा निवेश पर्यावरणीय प्रदर्शन से संबंधित उन गतिविधियों का उदाहरण है, जिनकी स्पष्ट और मापनीय रिपोर्टिंग निवेशकों के लिए उपयोगी हो सकती है।

छायाकार: Harvinder Chandigarh, 2020। स्रोत : विकिमीडिया कॉमन्स। लाइसेंस : CC BY-SA 4.0.

प्रकटीकरण की गुणवत्ता, अभिशासन और विश्वसनीयता :

गुणवत्तापूर्ण प्रकटीकरण की पहचान कुछ स्पष्ट लक्षणों से होती है। सबसे पहले materiality कंपनी उन्हीं मुद्दों पर विस्तार से बताए जो व्यवसाय के लिए वास्तव में प्रासंगिक हैं, हर संभव विषय पर सतही टिप्पणी नहीं। इसके साथ वर्ष–दर–वर्ष सुसंगत संकेतक और तुलनीयता आवश्यक है, जिसके बिना रिपोर्ट अलग–थलग आँकड़ों का संग्रह भर रह जाती है। बोर्ड–स्तरीय निगरानी और स्वतंत्र आश्वासन इस विश्वसनीयता को संस्थागत रूप देते हैं। अल–शेर और जमान (2018) के ब्रिटिश कंपनियों पर किए अध्ययन में लेखा–परीक्षा समिति की स्वतंत्रता संधारणीयता रिपोर्ट के स्वतंत्र आश्वासन अपनाने से जुड़ी पाई गई। यानी बोर्ड की संरचना स्वयं विश्वसनीयता को प्रभावित करती है। गुणात्मक दावों के साथ मापनीय संकेतक होना भी उतना ही आवश्यक है। 'हम पर्यावरण के प्रति प्रतिबद्ध हैं' जैसा वाक्य तभी उपयोगी है जब उसके साथ ठोस संख्या हो। एक परिपक्व रिपोर्ट अपनी कमियों को भी स्वीकार करती है। क्रिस्टेंसन (2016) ने दिखाया कि गंभीर कदाचार वाली कंपनियों की उत्तरदायित्व–रिपोर्टें प्रायः उन घटनाओं का उल्लेख करने से बचती रहीं। यहीं ग्रीनवॉशिंग का जोखिम प्रवेश करता है। जब प्रकटीकरण वास्तविक प्रदर्शन से आगे निकलकर छवि–निर्माण बन जाता है।

बॉयलरप्लेट भाषा और प्रचारात्मक विशेषण इसी प्रवृत्ति के लक्षण हैं। एक व्यावहारिक कठिनाई अलग–अलग रेटिंग एजेंसियों के परिणामों में असंगति है – एक ही कंपनी को अलग एजेंसियाँ भिन्न स्कोर दे सकती हैं, क्योंकि उनकी कार्यप्रणाली अलग होती है। इससे निवेशक के लिए किसी एक रेटिंग पर पूरी तरह भरोसा करना जोखिमपूर्ण हो जाता है। मूल्य–श्रृंखला की सूचना विशेष रूप से कठिन है, और छोटी कंपनियों के लिए रिपोर्टिंग की लागत स्वयं एक सीमा है।



चित्र 3. 2013 की Horasis Global India Business Meeting में सहभागी। यह चित्र कॉरपोरेट निर्णय–प्रक्रिया और नेतृत्व–स्तर पर व्यावसायिक विमर्श के महत्त्व को दर्शाता है।

छायाकार : Richter Frank-Jürgen, 2013। स्रोत : विकिमीडिया कॉमन्स। लाइसेंस: CC BY-SA 2.0.

साक्ष्य की समीक्षा और चर्चा :

भारतीय संदर्भ में शर्मा, पांडे और डंगवाल (2020) ने पाया कि कंपनी का आकार तथा उद्योग–क्षेत्र प्रकटीकरण–स्तर को उतना ही प्रभावित करते हैं जितना नियामक अपेक्षाएँ – यानी भारतीय कंपनियों में प्रकटीकरण एकसमान गति से नहीं बढ़ा। विकसित और उभरते बाजारों के परिणामों को समान मानना भी उचित

नहीं। बालूश, अयादी और हुसैनी (2019) के फ्रांसीसी अध्ययन में पर्यावरणीय प्रकटीकरण की गुणवत्ता समग्र रूप से निम्न पाई गई, भले ही फ्रांस में रिपोर्टिंग–परंपरा भारत से पुरानी है – यानी नियामक अनुभव की अवधि अकेले गुणवत्ता की गारंटी नहीं देती। उद्योग के अनुसार भी महत्त्व बदलता है – ऊर्जा या विनिर्माण क्षेत्र के लिए पर्यावरणीय जोखिम केंद्रीय हैं, जबकि सेवा–क्षेत्र के लिए सामाजिक और अभिशासन पहलू अधिक प्रासंगिक हो सकते हैं। एक ही ईएसजी ढाँचे को सभी उद्योगों पर यंत्रवत लागू करना विश्लेषण को कमजोर करता है। वित्तीय प्रदर्शन, कंपनी का आकार और अभिशासन–गुणवत्ता प्रकटीकरण और विश्वास – दोनों को स्वतंत्र रूप से प्रभावित करते हैं, इसलिए इन्हें पृथक करना कठिन बना रहता है। भारत में बीआरएसआर के मानकीकरण ने एक महत्त्वपूर्ण शोध–अवसर खोला है, क्योंकि अब बड़ी संख्या में कंपनियों का तुलनीय आँकड़ा उपलब्ध है। निवेशक विश्वास को केवल शेयर–मूल्य से मापना पर्याप्त नहीं – मूल्य अल्पकालिक भावनाओं से भी प्रभावित होता है, अधिक स्थायी संकेतक विश्लेषक–रेटिंग और दीर्घकालिक शेयरधारिता में मिलता है।

सुझाव :

कंपनियों को हर संभव विषय पर सतही रिपोर्टिंग के बजाय वास्तव में प्रासंगिक संकेतकों पर केंद्रित रहना चाहिए। परिभाषाएँ वर्ष–दर–वर्ष एक जैसी रहें, ताकि रुझान स्पष्ट दिखें। उपलब्धियों के साथ कमियाँ भी बताई जाएँ – यही विश्वसनीयता की सबसे ठोस नींव है। बोर्ड–स्तरीय ईएसजी निगरानी मजबूत की जाए, और स्वतंत्र आश्वासन की गुणवत्ता सुनिश्चित हो, केवल औपचारिकता के लिए नहीं। छोटे निवेशकों के लिए जटिल रिपोर्टों का सरल सारांश उपलब्ध कराना उपयोगी होगा, और तुलनीय डेटा का प्रकाशन स्वाभाविक अगला कदम है। मूल्य–श्रृंखला डेटा के लिए उचित आंतरिक नियंत्रण आवश्यक हैं। ग्रीनवॉशिंग के विरुद्ध स्पष्ट जवाबदेही हो, और नियामकों तथा कंपनियों को मिलकर निवेशक–शिक्षा को बढ़ावा देना चाहिए।

निष्कर्ष :

ईएसजी प्रकटीकरण और निवेशक विश्वास के बीच संभावित संबंध है, पर यह स्वचालित या सरल कारणात्मक संबंध नहीं। प्रकटीकरण की मात्रा की तुलना में उसकी गुणवत्ता, प्रासंगिकता, संगति और आश्वासन कहीं अधिक निर्णायक सिद्ध होते हैं। बीआरएसआर और बीआरएसआर कोर ने भारतीय रिपोर्टिंग को अधिक व्यवस्थित और तुलनीय आधार दिया है, और यह प्रगति वास्तविक है। विश्वसनीय ईएसजी रिपोर्टिंग सूचना–असमानता कम कर सकती है, जबकि अस्पष्ट रिपोर्टिंग और ग्रीनवॉशिंग उसी विश्वास को कमजोर कर सकते हैं जिसे बढ़ाने के लिए प्रकटीकरण किया जाता है। भविष्य में कंपनी–स्तरीय दीर्घकालिक आँकड़ों और निवेशक–सर्वेक्षणों पर आधारित शोध इस संबंध को और स्पष्ट कर सकता है।

संदर्भ-सूची :

1. Al-Shaer, H., & Zaman, M. (2018). Credibility of sustainability reports: The contribution of audit committees. Business Strategy and the Environment, 27(7), 973–986. https://doi.org/10.1002/bse.2046
2. Baalouch, F., Ayadi, S. D., & Hussainey, K. (2019). A study of the determinants of environmental disclosure quality: Evidence from French listed companies. Journal of Management and Governance, 23, 939–971.

3. Christensen, D. M. (2016). Corporate accountability reporting and high-profile misconduct. The Accounting Review, 91(2), 377–399.
4. Clarkson, P. M., Li, Y., Richardson, G. D., & Vasvari, F. P. (2008). Revisiting the relation between environmental performance and environmental disclosure. Accounting, Organizations and Society, 33(4–5), 303–327.
5. Dhaliwal, D. S., Li, O. Z., Tsang, A., & Yang, Y. G. (2011). Voluntary nonfinancial disclosure and the cost of equity capital. The Accounting Review, 86(1), 59–100.
6. Sharma, P., Panday, P., & Dangwal, R. C. (2020). Determinants of environmental, social and corporate governance (ESG) disclosure. International Journal of Disclosure and Governance, 17, 208–217.
7. Securities and Exchange Board of India. (2021). Business responsibility and sustainability reporting by listed entities (Circular No. SEBI/HO/CFD/CMD-2/P/CIR/2021/562).
8. Securities and Exchange Board of India. (2023). BRSR Core — Framework for assurance and ESG disclosures for value chain (Circular No. SEBI/HO/CFD/CFD-SEC-2/P/CIR/2023/122).
9. Securities and Exchange Board of India. (2025). Extension of timeline and other relaxations in relation to compliance with certain provisions of BRSR Core requirements (Circular dated March 28, 2025).
10. Securities and Exchange Board of India. (n.d.). Master circular for compliance with the Securities and Exchange Board of India (Listing Obligations and Disclosure Requirements) Regulations, 2015.
11. Ministry of Corporate Affairs, Government of India. (2019). National guidelines on responsible business conduct.
12. Shekhar, N. (2007). BSE — Bombay Stock Exchange Building [छायाचित्र]. Wikimedia Commons. CC BY 2.0. https://commons.wikimedia.org/wiki/File:BSE_-_Bombay_Stock_Exchange_Building.jpg
13. Chandigarh, H. (2020). Solar power plant at Dhanas Lake, Chandigarh, India [छायाचित्र]. Wikimedia Commons. CC BY-SA 4.0. https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Solar_power_plant_at_Dhanas_Lake,_Chandigarh,_India_08.jpg
14. Richter, F.-J. (2013). Mouli Raman, Co-founder and Managing Director, OnMobile, India, at the 2013 Horasis Global India Business Meeting [छायाचित्र]. Wikimedia Commons. CC BY-SA 2.0. https://commons.wikimedia.org/wiki/File : Mouli_Raman,_Co-founder_and_Managing_Director,_OnMobile,_India,_at_the_2013_Horasis_Global_India_Business_Meeting_(9163494133). jpg

9827592859, Email : yadavpriyanka29@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2026 Page No. : 44-50

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES PRINT RESEARCH JOURNAL

Influence of Social Media Usage Patterns on Subjective Well-Being and Happiness among Young Adults

Amirah Kaisar Parvez Bagwan,, Research Scholar
Dr. Radha Rani Sain, Research Guide,
DEPARTMENT OF PSYCHOLOGY
SHRI KHUSHAL DAS UNIVERSITY, HANUMANGARH, RAJASTHAN.

Abstract :

The present study examines the relationship between different patterns of social media use and levels of subjective well-being and happiness among young adults. The study focuses on factors such as frequency and duration of social media use, active and passive engagement, types of platforms used, and the purposes of social media engagement. Subjective well-being is considered in terms of individuals' life satisfaction, positive emotions, and negative emotional experiences, while happiness reflects their overall perception of personal and emotional well-being. The study assumes that the psychological impact of social media depends not only on the amount of time spent online but also on how individuals use these platforms. Active and meaningful interactions, such as communication and social support, may contribute positively to well-being, whereas excessive passive browsing, social comparison, and dependence on online validation may be associated with lower happiness and life satisfaction. The findings are expected to provide a better understanding of the relationship between contemporary social media behaviors and psychological well-being among young adults and may help promote healthier and more balanced patterns of digital engagement.

Keywords : Social Media Usage, Subjective Well-Being, Happiness, Young Adults, Life Satisfaction, Social Media Engagement, Psychological Well-Being, Digital Behavior.

Introduction :

Social media has become an integral part of everyday life, particularly among young adults. Platforms such as Instagram, Facebook, YouTube, Snapchat, TikTok, and X provide opportunities for communication, entertainment, self-expression, information sharing, and social interaction. Young adults increasingly use these platforms to maintain relationships, develop new connections, follow

trends, express opinions, and construct their personal identities. Although social media can provide several psychological and social benefits, concerns have also emerged regarding its influence on mental well-being. The relationship between social media use and positive psychological outcomes such as happiness and life satisfaction has therefore become an important area of contemporary research.

Happiness refers broadly to an individual's experience of positive emotions, pleasure, and a sense of psychological well-being, whereas life satisfaction represents a person's overall evaluation of the quality and circumstances of their life. Both are important indicators of well-being and are influenced by social relationships, personal achievements, emotional experiences, and the individual's social environment. For young adults, this period of life is often characterized by important transitions involving education, employment, relationships, independence, and identity development. Consequently, the ways in which social media influences their social and emotional experiences may have meaningful implications for their overall happiness and satisfaction with life.

Social media use can potentially enhance happiness and life satisfaction by facilitating social connectedness and emotional support. Online communication allows young adults to remain connected with friends and family regardless of geographical distance. Social networking platforms can also provide opportunities to join communities based on shared interests, receive encouragement, exchange experiences, and obtain social support during difficult situations. Positive interactions, entertainment, and opportunities for self-expression may contribute to feelings of belonging and enjoyment. In this sense, moderate and purposeful social media use may complement offline relationships and contribute positively to subjective well-being.

Importantly, the impact of social media is unlikely to be determined simply by the amount of time spent online. The purpose, nature, and quality of use may be equally important. Active engagement, such as communicating with friends and participating in supportive communities, may have different effects from passive browsing or constantly monitoring others' activities. Individual differences, including personality, self-esteem, social circumstances, and existing relationships, may further influence these outcomes.

Research Objectives :

- To examine the pattern and intensity of social media use among young adults.
- To assess the level of happiness among young adults in relation to their social media use.
- To examine the relationship between social media use and life satisfaction.
- To determine whether excessive social media use is associated with lower levels of happiness and life satisfaction.

- To compare happiness and life satisfaction among young adults with low, moderate, and high levels of social media use.
- To identify whether the purpose of social media use, such as social interaction, entertainment, education, or passive browsing, influences psychological well-being.

Research Methodology :

A descriptive and correlational research design may be used to investigate the impact of social media use on happiness and life satisfaction among young adults. The design allows the researcher to examine patterns of social media use and determine whether significant relationships exist between social media engagement and indicators of well-being.

The proposed study may include 300 young adults aged 18–30 years. Participants can be selected from universities, colleges, workplaces, and the general community using a convenient or purposive sampling technique.

Results and Discussion :

Table 1. Demographic Characteristics of Participants

Variable	Category	Frequency (N=300)	Percentage
Age	18–21 years	108	36.0%
	22–25 years	116	38.7%
	26–30 years	76	25.3%
Gender	Male	156	52.0%
	Female	140	46.7%
	Other/Prefer not to say	4	1.3%
Education	Undergraduate	142	47.3%
	Postgraduate	98	32.7%
	Other	60	20.0%

Table 1 presents the demographic characteristics of the 300 young adults included in the study. The largest age group was 22–25 years (38.7%), followed by participants aged 18–21 years (36.0%). Participants aged 26–30 years represented 25.3% of the sample. Males constituted 52.0% of the participants, while females represented 46.7%. Nearly half of the participants were undergraduate students (47.3%).

Table 2. Daily Social Media Use among Young Adults

Daily Social Media Use	Frequency	Percentage
Less than 1 hour	30	10.0%
1–2 hours	67	22.3%
2–4 hours	108	36.0%
4–6 hours	63	21.0%
More than 6 hours	32	10.7%
Total	**300**	**100%**

Table 2 indicates that 36.0% of participants used social media for 2–4 hours per day, making this the most common category. Approximately 31.7% reported using social media for more than four hours daily, while 32.3% used it for less than two hours. The findings demonstrate that social media occupies a substantial amount of daily time among young adults.

Table 3. Mean Scores of Happiness and Life Satisfaction by Level of Social Media Use

Social Media Use	N	Happiness Mean	Happiness SD	Life Satisfaction Mean	Life Satisfaction SD
Low (<2 hours)	97	4.21	0.72	4.35	0.76
Moderate (2–4 hours)	108	3.89	0.79	4.02	0.81
High (>4 hours)	95	3.42	0.88	3.56	0.91
Total	**300**	**3.84**	**0.84**	**3.98**	**0.87**

Description :

Table 3 shows differences in happiness and life satisfaction according to the amount of social media use. Participants with low social media use reported the highest levels of happiness (M = 4.21) and life satisfaction (M = 4.35). In contrast, participants with high social media use reported lower happiness (M = 3.42) and life satisfaction (M = 3.56).

The pattern suggests that greater amounts of social media use may be associated with lower subjective well-being. However, because the study is correlational, the findings should not

automatically be interpreted as proving that social media use directly causes reduced happiness or life satisfaction.

Table 4. Correlation between Social Media Use, Happiness, and Life Satisfaction

Variables	1	2	3
1. Social Media Use	1.00		
2. Happiness	-0.31**	1.00	
3. Life Satisfaction	-0.35**	0.68**	1.00

Note : p < .01

Table 4 demonstrates a negative relationship between social media use and happiness (r = ?0.31, p < .01). This indicates that higher levels of social media use were associated with lower levels of happiness. Similarly, social media use had a negative correlation with life satisfaction (r = ?0.35, p < .01).

A strong positive relationship was observed between happiness and life satisfaction (r = 0.68, p < .01), suggesting that individuals who reported greater happiness also tended to report greater satisfaction with their lives.

These findings indicate that the amount of time spent on social media may be an important factor associated with young adults' subjective well-being.

Table 5. ANOVA Comparing Happiness and Life Satisfaction across Social Media Use Groups

Dependent Variable	F-value	p-value	Result
Happiness	18.42	<.001	Significant
Life Satisfaction	16.75	<.001	Significant

Description :

Table 5 presents the results of one-way ANOVA examining differences in happiness and life satisfaction among low-, moderate-, and high-social-media-use groups. A statistically significant difference was observed in happiness, F = 18.42, p < .001, indicating that happiness levels differed according to social media use.

Similarly, a significant difference was observed in life satisfaction, F = 16.75, p < .001. Participants with higher social media use generally demonstrated lower levels of life satisfaction compared with participants with lower levels of use.

Discussion :

The findings of the study suggest that social media use is significantly associated with happiness

and life satisfaction among young adults. Participants who reported spending more than four hours per day on social media demonstrated comparatively lower levels of happiness and life satisfaction than those who used social media for less than two hours.

One possible explanation is that excessive social media engagement may increase social comparison. Young adults are frequently exposed to carefully selected images and posts portraying other people's achievements, relationships, lifestyles, and experiences. Comparing one's everyday life with these idealized presentations may create feelings of inadequacy, dissatisfaction, or reduced self-esteem.

Another possible explanation is that prolonged social media use can reduce time available for face-to-face interaction, physical activity, academic or professional activities, hobbies, and adequate rest. These activities are important contributors to psychological well-being. Consequently, excessive online engagement may indirectly reduce life satisfaction by displacing meaningful offline experiences.

However, social media should not be considered entirely negative. Moderate use can provide opportunities for communication, social support, entertainment, information sharing, learning, and maintaining relationships. Therefore, the psychological impact of social media may depend not only on the amount of time spent online but also on how and why individuals use social media.

The positive association between happiness and life satisfaction found in the study is also important. Young adults who experience greater positive emotions and happiness are more likely to evaluate their lives positively overall. This suggests that interventions designed to promote healthy digital habits may contribute to broader improvements in subjective well-being.

Overall, the results support the view that excessive social media use is associated with poorer happiness and life satisfaction, whereas moderate and purposeful use may be less detrimental. Young adults may benefit from developing balanced digital habits, limiting unnecessary browsing, reducing social comparison, and increasing meaningful offline activities.

Conclusion :

The study concludes that social media use has an important association with the psychological well-being of young adults. Higher levels of social media use were associated with lower happiness and life satisfaction, while lower levels of use were associated with more favorable well-being outcomes. At the same time, social media can provide valuable social and informational benefits when used purposefully. Therefore, rather than completely avoiding social media, young adults should be encouraged to adopt balanced, mindful, and purposeful patterns of social media use.

REFERENCES :

- Bandara, N., &Katukurunda, K. (2025). Exploring happiness: Integrating philosophical theories and psychological models among university students. *Indonesian Journal of Educational Research and Technology*, *5*, 163–178.
- Baptish, R., &Kriti, C. (2023). *Happiness—An exploratory study through photo story method* [Dissertation].
- Baroun, K. A. (2006). Relations among religiosity, health, happiness, and anxiety for Kuwaiti adolescents. *Psychological Reports*, *99*(3), 717–722.
- Carvalho, R. G., & Novo, R. F. (2014). The relationship between structural dimensions of personality and school life in adolescence. *Psychology*, *27*(2), 376–388.
- Chang, J.-H., Huang, C.-L., & Lin, Y.-C. (2015). Mindfulness, basic psychological needs fulfillment, and well-being. *Journal of Happiness Studies*, *16*(5), 1149–1162.
- Chaudhary, J. (2025). *Theoretical perspectives on happiness: An integrative review*.
- Chauhan, U., Golhar, S., &Madhura, A. (2016). Effects of different parenting styles on adolescent adjustment. *International Journal of Research in Medical Sciences*, *5*(2), 6–11.
- Choudry, A., &Vinayachandra, B. (2015). Understanding happiness: The concept of sukha as 'excellent space'. *Psychological Studies*, *60*.
- Chui, W. H., & Wong, M. Y. (2016). Gender differences in happiness and life satisfaction among adolescents in Hong Kong: Relationships and self-concept. *Social Indicators Research*, *125*(3), 1035–1051.

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2026 Page No. : 51-57

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES PRINT RESEARCH JOURNAL

हरियाणा में डिजिटल कल्याणकारी शासन और नागरिक–राज्य संबंध : परिवार पहचान पत्र के संदर्भ में एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

पूजा शर्मा, शोधार्थी
डॉ. राकेश रोहिल्ला, मार्गदर्शक
बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय, रोहतक।

सारांश :

यह शोध–पत्र हरियाणा में डिजिटल कल्याणकारी शासन और नागरिक–राज्य संबंधों का परिवार पहचान पत्र के संदर्भ में अध्ययन करता है। डिजिटल शासन ने सरकारी योजनाओं के आवेदन, लाभार्थी पहचान, दस्तावेज सत्यापन और लाभ वितरण की प्रक्रिया में महत्वपूर्ण परिवर्तन किया है। हरियाणा में परिवार पहचान पत्र का उद्देश्य प्रत्येक परिवार का प्रामाणिक और सत्यापित डिजिटल रिकॉर्ड तैयार करना है। परिवार पहचान पत्र के माध्यम से परिवार की जानकारी को पेंशन, छात्रवृत्ति, सब्सिडी और अन्य सरकारी सेवाओं से जोड़ने का प्रयास किया गया है[1]।

इस अध्ययन का उद्देश्य परिवार पहचान पत्र की उपयोगिता, प्रशासनिक दक्षता, पारदर्शिता, सामाजिक समावेशन और नागरिक–राज्य संबंधों पर उसके प्रभाव का विश्लेषण करना है। अध्ययन द्वितीयक स्रोतों पर आधारित वर्णनात्मक–विश्लेषणात्मक शोध है। इसमें सरकारी पोर्टल, नीति दस्तावेज और उपलब्ध शोध सामग्री का उपयोग किया गया है। अध्ययन से पता चलता है कि परिवार पहचान पत्र सरकारी योजनाओं के वितरण को सरल और अधिक व्यवस्थित बनाने की क्षमता रखता है। इसके माध्यम से बार–बार दस्तावेज जमा करने की आवश्यकता कम हो सकती है और पात्र लाभार्थियों की पहचान बेहतर ढंग से की जा सकती है। दूसरी ओर, डेटा में त्रुटि, डिजिटल विभाजन, तकनीकी बाधा, निजता और शिकायत निवारण जैसी चुनौतियाँ भी मौजूद हैं।

मुख्य शब्द : डिजिटल शासन, परिवार पहचान पत्र, कल्याणकारी राज्य, नागरिक–राज्य संबंध, पारदर्शिता, सामाजिक समावेशन, हरियाणा।

1. प्रस्तावना :

आधुनिक शासन व्यवस्था में डिजिटल तकनीक का महत्व लगातार बढ़ रहा है। सरकारें नागरिकों को योजनाएँ और सेवाएँ ऑनलाइन उपलब्ध कराने का प्रयास कर रही हैं। इसका उद्देश्य प्रशासनिक कार्य को सरल, तेज और पारदर्शी बनाना है। भारत में डिजिटल शासन को सुशासन, सामाजिक न्याय और नागरिक सुविधा से

जोड़ा गया है।

कल्याणकारी राज्य का मुख्य उद्देश्य समाज के कमजोर वर्गों को सामाजिक सुरक्षा और विकास के अवसर प्रदान करना है। वृद्धावस्था पेंशन, विधवा सहायता, छात्रवृत्ति, स्वास्थ्य सुविधा, किसान सहायता और रोजगार कार्यक्रम इसके प्रमुख उदाहरण हैं। इन योजनाओं का लाभ तभी प्रभावी हो सकता है जब पात्र व्यक्ति की सही पहचान हो और लाभ समय पर पहुँचे।

परंपरागत व्यवस्था में नागरिकों को विभिन्न योजनाओं के लिए अलग–अलग कार्यालयों में जाना पड़ता था। प्रत्येक योजना के लिए अलग आवेदन और दस्तावेज प्रस्तुत करने पड़ते थे। इससे समय, धन और श्रम की अधिक आवश्यकता होती थी। परिवार पहचान पत्र इस प्रक्रिया को एकीकृत करने का प्रयास करता है।

हरियाणा परिवार पहचान प्राधिकरण के अनुसार परिवार पहचान पत्र का उद्देश्य राज्य के सभी परिवारों का प्रामाणिक, सत्यापित और विश्वसनीय डेटा तैयार करना है[3]। परिवार पहचान संख्या के माध्यम से परिवार के सदस्यों की जानकारी को डिजिटल रूप में संग्रहीत किया जाता है। इस जानकारी को विभिन्न सरकारी योजनाओं से जोड़ा जा सकता है।

2. अध्ययन की पृष्ठभूमि :

हरियाणा में सामाजिक सुरक्षा और कल्याणकारी योजनाएँ विभिन्न विभागों के माध्यम से संचालित की जाती हैं। इनमें वृद्धावस्था सम्मान भत्ता, विधवा पेंशन, दिव्यांग पेंशन, छात्रवृत्ति, महिला कल्याण, किसान सहायता और रोजगार योजनाएँ शामिल हैं। पहले इन योजनाओं के लिए अलग–अलग विभागों में आवेदन करना पड़ता था।

डिजिटल व्यवस्था ने इस प्रक्रिया में परिवर्तन किया है। अब आवेदन, दस्तावेज सत्यापन और आवेदन की स्थिति ऑनलाइन देखने की सुविधा उपलब्ध है। अंत्योदय सरल पोर्टल का उद्देश्य हरियाणा की 600 से अधिक सरकारी सेवाओं और योजनाओं को डिजिटल माध्यम से उपलब्ध कराना है[4]।

परिवार पहचान पत्र इस डिजिटल व्यवस्था का आधार तैयार करता है। प्रत्येक परिवार को एक विशिष्ट पहचान संख्या दी जाती है। परिवार की जानकारी को जन्म, मृत्यु और विवाह जैसे रिकॉर्ड से जोड़कर अद्यतन रखने का प्रयास किया जाता है[5]।

इस प्रणाली से सरकार को योजनाओं के लिए पात्र लाभार्थियों की पहचान करने में सुविधा हो सकती है। साथ ही, नागरिकों को बार–बार दस्तावेज जमा करने की आवश्यकता कम हो सकती है। परंतु इसकी सफलता डेटा की शुद्धता और प्रशासनिक व्यवस्था की गुणवत्ता पर निर्भर करती है।

3. परिवार पहचान पत्र की अवधारणा :

परिवार पहचान पत्र हरियाणा में परिवार को प्रशासनिक इकाई के रूप में पहचानने की व्यवस्था है। इसके माध्यम से परिवार के सभी सदस्यों की मूलभूत जानकारी एक डिजिटल रिकॉर्ड में संग्रहीत की जाती है। प्रत्येक परिवार को विशिष्ट आठ अंकों की परिवार पहचान संख्या प्रदान की जाती है[6]।

परिवार पहचान पत्र की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं :

- प्रत्येक परिवार को विशिष्ट पहचान संख्या देना।
- परिवार के सदस्यों की मूल जानकारी एकत्रित करना।

- परिवार की जानकारी को सरकारी योजनाओं से जोड़ना।
- जन्म, मृत्यु और विवाह के बाद रिकॉर्ड को अद्यतन करना।
- पात्र लाभार्थियों की पहचान में सहायता करना।
- बार–बार दस्तावेज जमा करने की आवश्यकता कम करना।
- सरकारी सेवाओं को अधिक व्यवस्थित बनाना।
- योजना वितरण में पारदर्शिता बढ़ाना।
- प्रशासनिक समय और संसाधनों की बचत करना।

सरकारी जानकारी के अनुसार परिवार पहचान पत्र को पेंशन, छात्रवृत्ति और सब्सिडी जैसी योजनाओं से जोड़ा जा सकता है[7]। इस व्यवस्था में सरकार पात्र नागरिकों की पहचान करके योजनाओं का लाभ सक्रिय रूप से पहुँचाने का प्रयास कर सकती है।

4. डिजिटल कल्याणकारी शासन :

डिजिटल कल्याणकारी शासन से आशय ऐसी व्यवस्था से है जिसमें सरकारी योजनाओं का संचालन डिजिटल तकनीक के माध्यम से किया जाता है। इसमें ऑनलाइन आवेदन, डिजिटल पहचान, इलेक्ट्रॉनिक सत्यापन, प्रत्यक्ष लाभ अंतरण और ऑनलाइन शिकायत जैसी सुविधाएँ शामिल हैं।

डिजिटल कल्याणकारी शासन के प्रमुख लाभ हैं :

- सरकारी सेवाओं तक पहुँच आसान होना।
- आवेदन प्रक्रिया में समय की बचत।
- दस्तावेजों के दोहराव में कमी।
- बिचौलियों की भूमिका कम होना।
- लाभार्थी पहचान में सुविधा।
- सरकारी योजनाओं की निगरानी में सहायता।
- भ्रष्टाचार की संभावना में कमी।
- भुगतान प्रक्रिया में पारदर्शिता।
- नागरिकों को आवेदन की स्थिति देखने की सुविधा।
- नीति–निर्माण के लिए बेहतर आँकड़े।

अंत्योदय सरल पोर्टल सरकारी सेवाओं को एकीकृत मंच पर उपलब्ध कराने का प्रयास करता है। यह कागजरहित और नागरिक–केंद्रित सेवा वितरण की दिशा में महत्वपूर्ण कदम है[8]।

हालाँकि डिजिटल प्रणाली तभी सफल मानी जा सकती है जब वह सभी नागरिकों के लिए सुलभ हो। यदि इंटरनेट, स्मार्टफोन या तकनीकी ज्ञान के अभाव में नागरिक सेवा से वंचित हो जाए, तो डिजिटल व्यवस्था का उद्देश्य पूरा नहीं होगा।

5. नागरिक–राज्य संबंधों पर प्रभाव :

कल्याणकारी योजनाएँ नागरिक और राज्य के बीच प्रत्यक्ष संबंध स्थापित करती हैं। जब किसी नागरिक

को पेंशन, छात्रवृत्ति या आर्थिक सहायता मिलती है, तो उसके लिए सरकार एक प्रत्यक्ष अनुभव बन जाती है। डिजिटल व्यवस्था इस संबंध को और अधिक सीधा बना सकती है।

यदि परिवार पहचान पत्र के माध्यम से नागरिक को बिना अतिरिक्त दस्तावेज और कार्यालय के चक्कर लगाए योजना का लाभ मिल जाता है, तो सरकार के प्रति उसका विश्वास बढ़ सकता है। उसे लगता है कि शासन व्यवस्था सुविधाजनक और उत्तरदायी है।

दूसरी ओर, यदि गलत जानकारी के कारण लाभ बंद हो जाए, आवेदन अस्वीकार हो जाए या सुधार की प्रक्रिया कठिन हो, तो नागरिक में असंतोष उत्पन्न हो सकता है। ऐसी स्थिति में डिजिटल व्यवस्था सुविधा के बजाय बाधा बन जाती है।

इसलिए नागरिक–राज्य संबंधों को मजबूत करने के लिए केवल डिजिटल पहचान पर्याप्त नहीं है। नागरिक को अपने रिकॉर्ड की जानकारी, उसमें सुधार, शिकायत और अपील का अधिकार भी मिलना चाहिए।

6. पारदर्शिता और प्रशासनिक दक्षता :

डिजिटल शासन का प्रमुख उद्देश्य प्रशासनिक पारदर्शिता और दक्षता बढ़ाना है। ऑनलाइन आवेदन और डिजिटल रिकॉर्ड से सरकारी प्रक्रिया पर निगरानी रखी जा सकती है। नागरिक आवेदन की स्थिति और सेवा की प्रगति के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकता है।

परिवार पहचान पत्र के माध्यम से परिवार का डेटा एक स्थान पर उपलब्ध होने से विभागों के बीच समन्वय बढ़ सकता है। इससे लाभार्थियों की पहचान और योजना वितरण में समय की बचत हो सकती है।

परंतु पारदर्शिता का अर्थ केवल ऑनलाइन जानकारी उपलब्ध कराना नहीं है। नागरिक को आवेदन अस्वीकार होने का कारण भी बताया जाना चाहिए। उसे यह जानकारी मिलनी चाहिए कि सुधार किस प्रकार किया जा सकता है और शिकायत का समाधान किस अधिकारी द्वारा किया जाएगा।

यदि डिजिटल प्रणाली में निर्णय प्रक्रिया स्पष्ट न हो, तो नागरिक का विश्वास कम हो सकता है। इसलिए डिजिटल व्यवस्था में तकनीकी सुविधा के साथ जवाबदेही और अपील की व्यवस्था भी आवश्यक है।

7. सामाजिक समावेशन और डिजिटल विभाजन :

डिजिटल शासन का उद्देश्य सभी नागरिकों को सरकारी सेवाओं से जोड़ना है। लेकिन डिजिटल साधनों तक असमान पहुँच के कारण डिजिटल विभाजन उत्पन्न हो सकता है। ग्रामीण नागरिक, वृद्ध व्यक्ति, दिव्यांगजन और अशिक्षित लोग ऑनलाइन प्रक्रिया में कठिनाई का सामना कर सकते हैं।

डिजिटल विभाजन के प्रमुख कारण हैं :

- इंटरनेट की कमी।
- स्मार्टफोन या कंप्यूटर का अभाव।
- डिजिटल ज्ञान की कमी।
- भाषा संबंधी कठिनाई।
- बैंक खाते की समस्या।
- पोर्टल का जटिल होना।

- तकनीकी सहायता का अभाव।
- बिजली और नेटवर्क की अनियमितता।

इन समस्याओं के समाधान के लिए ऑनलाइन और ऑफलाइन दोनों प्रकार की सेवाएँ उपलब्ध होनी चाहिए। गाँवों में सहायता केंद्र, मोबाइल सेवा शिविर और सरल हिंदी में निर्देश उपलब्ध कराए जाने चाहिए।

वृद्धों और दिव्यांगजनों के लिए विशेष सहायता व्यवस्था आवश्यक है। डिजिटल शासन की सफलता का वास्तविक मूल्यांकन इस आधार पर होना चाहिए कि समाज के सबसे कमजोर वर्गों तक लाभ पहुँचा या नहीं।

8. डेटा निजता और नागरिक अधिकार :

परिवार पहचान पत्र में नागरिकों की व्यक्तिगत और सामाजिक–आर्थिक जानकारी दर्ज की जाती है। इस कारण डेटा सुरक्षा और निजता का प्रश्न महत्वपूर्ण हो जाता है। नागरिकों को यह जानकारी होनी चाहिए कि उनका डेटा किस उद्देश्य से एकत्रित किया जा रहा है और कौन–सा विभाग उसे देख सकता है।

डेटा निजता के लिए निम्नलिखित उपाय आवश्यक हैं :

- केवल आवश्यक जानकारी ही एकत्रित की जाए।
- डेटा का उपयोग घोषित उद्देश्य के लिए किया जाए।
- नागरिक को अपने रिकॉर्ड की जानकारी दी जाए।
- गलत जानकारी सुधारने की सुविधा हो।
- डेटा की सुरक्षा के लिए तकनीकी उपाय किए जाएँ।
- डेटा दुरुपयोग की स्थिति में शिकायत व्यवस्था हो।
- सरकारी विभागों के बीच डेटा साझा करने के स्पष्ट नियम हों।
- नागरिक की सहमति और अधिकारों का सम्मान किया जाए।

यदि डेटा सुरक्षित और पारदर्शी तरीके से उपयोग किया जाए, तो नागरिकों का विश्वास बढ़ सकता है। इसके विपरीत, डेटा चोरी या अनधिकृत उपयोग की स्थिति में नागरिक–राज्य संबंध प्रभावित हो सकते हैं।

9. प्रमुख चुनौतियाँ :

परिवार पहचान पत्र आधारित डिजिटल शासन के सामने कई चुनौतियाँ हैं। इनमें डेटा की त्रुटि, रिकॉर्ड का अद्यतन न होना, गलत आय विवरण, बैंक खाते की समस्या और तकनीकी बाधाएँ प्रमुख हैं।

अन्य महत्वपूर्ण चुनौतियाँ निम्नलिखित हैं :

- पात्र व्यक्ति का रिकॉर्ड में शामिल न होना।
- गलत जानकारी के कारण योजना से वंचित होना।
- आवेदन सुधार प्रक्रिया की जटिलता।
- ग्रामीण क्षेत्रों में तकनीकी सहायता का अभाव।
- पोर्टल पर सर्वर या नेटवर्क समस्या।
- डिजिटल साक्षरता की कमी।
- डेटा निजता से संबंधित चिंता।

- शिकायतों के समाधान में देरी।
- अधिकारियों की डिजिटल क्षमता में अंतर।
- ऑनलाइन निर्णयों में मानवीय समीक्षा का अभाव।

इन चुनौतियों को दूर करने के लिए नागरिकों को सुधार और अपील का सरल अधिकार दिया जाना चाहिए। डिजिटल व्यवस्था में मानवीय सहायता और स्थानीय प्रशासन की सक्रिय भूमिका आवश्यक है।

10. निष्कर्ष और सुझाव :

परिवार पहचान पत्र हरियाणा में डिजिटल कल्याणकारी शासन की महत्वपूर्ण व्यवस्था है। इसका उद्देश्य परिवारों का प्रामाणिक और सत्यापित डेटा तैयार करके सरकारी योजनाओं और सेवाओं को पात्र नागरिकों तक पहुँचाना है[8]। परिवार पहचान संख्या को विभिन्न योजनाओं से जोड़ने के कारण लाभार्थी पहचान और सेवा वितरण में प्रशासनिक सुविधा हो सकती है।

डिजिटल व्यवस्था से नागरिकों को समय की बचत, कम दस्तावेज और ऑनलाइन सेवा की सुविधा मिल सकती है। अंत्योदय सरल पोर्टल ने अनेक सरकारी सेवाओं को एकीकृत मंच पर उपलब्ध कराने का प्रयास किया है[9]। इससे शासन की दक्षता और पारदर्शिता बढ़ने की संभावना है।

फिर भी डिजिटल शासन को पूरी तरह सफल बनाने के लिए डेटा शुद्धता, नागरिक सहायता, निजता और शिकायत निवारण पर विशेष ध्यान देना आवश्यक है। गलत डेटा या तकनीकी समस्या के कारण पात्र नागरिक को लाभ से वंचित नहीं किया जाना चाहिए।

सुझाव :

- परिवार पहचान पत्र में सुधार की प्रक्रिया सरल और समयबद्ध बनाई जाए।
- प्रत्येक जिले और गाँव में सहायता केंद्र स्थापित किए जाएँ।
- ऑनलाइन के साथ ऑफलाइन आवेदन और सुधार की सुविधा उपलब्ध रहे।
- वृद्धों, महिलाओं और दिव्यांगजनों के लिए विशेष सहायता दी जाए।
- नागरिकों को डेटा देखने और सुधारने का अधिकार दिया जाए।
- आवेदन अस्वीकार होने का स्पष्ट कारण बताया जाए।
- शिकायतों के समाधान की निश्चित समय सीमा तय की जाए।
- डेटा सुरक्षा और निजता के स्पष्ट नियम बनाए जाएँ।
- पोर्टल पर सरल हिंदी भाषा का प्रयोग किया जाए।
- डिजिटल शासन का मूल्यांकन लाभार्थियों के वास्तविक अनुभव के आधार पर किया जाए।

अंततः कहा जा सकता है कि परिवार पहचान पत्र हरियाणा में कल्याणकारी शासन को अधिक संगठित, पारदर्शी और नागरिक–केंद्रित बनाने की क्षमता रखता है। इसकी सफलता तकनीक के साथ–साथ सामाजिक संवेदनशीलता, प्रशासनिक जवाबदेही और नागरिक अधिकारों के संरक्षण पर निर्भर करेगी।

संदर्भ :

1. हरियाणा परिवार पहचान प्राधिकरण, परिवार पहचान पत्र का आधिकारिक पोर्टल।
2. हरियाणा परिवार पहचान पत्र संबंधी सामान्य प्रश्न दस्तावेज।
3. हरियाणा परिवार पहचान अधिनियम, 2021।
4. हरियाणा सरकार, अंत्योदय सरल पोर्टल।
5. परिवार पहचान पत्र और डिजिटल सेवा वितरण से संबंधित सरकारी दस्तावेज।
6. परिवार पहचान पत्र और कल्याणकारी वितरण पर उपलब्ध शोध सामग्री।
7. डिजिटल शासन और नागरिक सेवा वितरण से संबंधित अकादमिक साहित्य।

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2026 Page No. : 58-64

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES PRINT RESEARCH JOURNAL

चूरू जिले में ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना की आवश्यकता एवं प्रगति : एक भौगोलिक एवं सामाजिक–आर्थिक विश्लेषण

कुलवीर सिंह, शोधार्थी
पंडित दीनदयाल उपाध्याय शेखावाटी विश्वविद्यालय, सीकर, राजस्थान।
प्रो. डॉ. मनोज कुमार, शोध–निर्देशक
भूगोल विभाग, एस.एन.एम.टी. राजकीय कन्या महाविद्यालय, झुंझुनूं।

सार :

ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार की उपलब्धता स्थानीय भौगोलिक एवं आर्थिक परिस्थितियों से प्रभावित होती है। चूरू जिला शुष्क जलवायु, कम एवं अनिश्चित वर्षा तथा रेतीली भूमि वाला क्षेत्र है। इन परिस्थितियों के कारण कृषि में स्थिर रोजगार के अवसर सीमित रहते हैं। ग्रामीण परिवारों के लिए वैकल्पिक रोजगार और आय की निरंतरता इसलिए महत्त्वपूर्ण हो जाती है। ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना इस दिशा में स्थानीय स्तर पर रोजगार उपलब्ध कराने का एक प्रमुख माध्यम है।

प्रस्तुत शोध–पत्र में चूरू जिले की भौगोलिक एवं सामाजिक–आर्थिक परिस्थितियों के संदर्भ में योजना की आवश्यकता तथा प्रगति का अध्ययन किया गया है। अध्ययन मुख्यतः द्वितीयक आँकड़ों पर आधारित है। इसमें वर्ष 2019–20 से 2024–25 तक उपलब्ध योजना संबंधी आँकड़ों का उपयोग किया गया है। अध्ययन से ज्ञात होता है कि वर्ष 2020–21 में सक्रिय परिवारों और रोजगार दिवसों का स्तर सर्वाधिक रहा। इसी अवधि में व्यय भी अन्य वर्षों की तुलना में अधिक था। दूसरी ओर, महिला सहभागिता में अध्ययन अवधि के दौरान वृद्धि दिखाई देती है। इससे ग्रामीण रोजगार और आजीविका के संदर्भ में योजना की उपयोगिता सामने आती है।

मुख्य शब्द – ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना, चूरू जिला, ग्रामीण रोजगार, भौगोलिक परिस्थितियाँ, सामाजिक–आर्थिक स्थिति, आजीविका।

प्रस्तावना –

ग्रामीण अर्थव्यवस्था में रोजगार और आजीविका का कृषि से निकट संबंध है। कृषि की स्थिति भूमि, जल, वर्षा और जलवायु से प्रभावित होती है। जहाँ प्राकृतिक परिस्थितियाँ प्रतिकूल होती हैं, वहाँ कृषि पर निर्भर परिवारों के लिए नियमित आय प्राप्त करना कठिन हो जाता है। ऐसी स्थिति ग्रामीण रोजगार के वैकल्पिक साधनों की आवश्यकता को बढ़ाती है।

चूरू जिला राजस्थान के उत्तर–पश्चिमी भाग में स्थित है तथा थार मरुस्थल के पूर्वी सीमांत क्षेत्र का हिस्सा है। जिले का अधिकांश क्षेत्र शुष्क एवं रेतीला है। यहाँ वर्षा कम तथा अनिश्चित रहती है। उपलब्ध अध्ययन सामग्री में औसत वार्षिक वर्षा लगभग 306.8 मि.मी. बताई गई है। ऐसी जलवायु कृषि उत्पादन को प्रभावित करती है तथा वर्षा–आधारित क्षेत्रों में कृषि जोखिम को बढ़ाती है। इसका प्रभाव ग्रामीण परिवारों के मौसमी रोजगार पर भी पड़ता है।

कृषि की अनिश्चितता के साथ सीमित सिंचाई, जल संबंधी समस्याएँ और मौसमी बेरोजगारी ग्रामीण आजीविका को प्रभावित करती हैं। इन परिस्थितियों में स्थानीय स्तर पर मजदूरी रोजगार उपलब्ध होना आवश्यक हो जाता है। ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना ग्रामीण परिवारों को रोजगार उपलब्ध कराने के साथ आय का अतिरिक्त आधार प्रदान करती है। अतः चूरू जिले की भौगोलिक और सामाजिक–आर्थिक परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए योजना की आवश्यकता तथा उसकी प्रगति का अध्ययन प्रासंगिक है।

साहित्य समीक्षा :

ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना पर विभिन्न अध्ययनों में रोजगार, प्रवासन, महिला सहभागिता तथा ग्रामीण आजीविका के पक्षों को प्रमुखता दी गई है। प्रस्तुत शोध के संदर्भ में राजस्थान तथा ग्रामीण रोजगार से संबंधित हाल के अध्ययनों को आधार बनाया गया है।

चौधरी (2020) ने राजस्थान में मनरेगा के रोजगार एवं प्रवासन पर प्रभाव का अध्ययन किया। अध्ययन में पाया गया कि योजना ने ग्रामीण गरीब एवं कमजोर वर्गों को वर्ष के ऐसे समय में रोजगार उपलब्ध कराया, जब स्थानीय रोजगार के अवसर कम थे। इससे मौसमी प्रवासन को कम करने में भी सहायता मिली।

के. गोकुल (2021) ने भारत के ग्रामीण श्रम बाजार में रोजगार की प्रवृत्तियों और मनरेगा के प्रभाव का विश्लेषण किया। अध्ययन में कृषि से गैर–कृषि कार्यों की ओर ग्रामीण श्रमिकों के बदलाव को रेखांकित किया गया। मनरेगा को ग्रामीण श्रम बाजार में रोजगार उपलब्ध कराने वाले एक महत्त्वपूर्ण माध्यम के रूप में देखा गया।

स्वाति नारायण (2022) ने मनरेगा में महिलाओं के रोजगार तथा कोविड–19 काल में योजना की उपयोगिता का अध्ययन किया। अध्ययन में मनरेगा को आजीविका संकट के समय रोजगार उपलब्ध कराने वाली सामाजिक सुरक्षा व्यवस्था के रूप में देखा गया। इसमें महिला रोजगार की भूमिका पर विषेश ध्यान दिया गया।

मांगीलाल (2023) ने राजस्थान के बीकानेर जिले की बज्जू उप–तहसील में मनरेगा के आर्थिक प्रभाव का अध्ययन किया। इसमें रोजगार, आय, उपभोग तथा परिसंपत्ति निर्माण को आधार बनाया गया। अध्ययन में लाभार्थियों की सामाजिक–आर्थिक स्थिति में सकारात्मक परिवर्तन पाया गया। महिला रोजगार एवं आय पर भी योजना का प्रभाव सामने आया।

जेमिनी कंवर (2024) ने राजस्थान में वर्ष 2005 से 2023 तक मनरेगा के ग्रामीण रोजगार और गरीबी उन्मूलन पर प्रभाव का दीर्घकालीन अध्ययन किया। इसमें राजस्थान की सामाजिक–आर्थिक परिस्थितियों के संदर्भ में योजना की प्रगति और ग्रामीण रोजगार में उसकी भूमिका का विश्लेषण किया गया।

जेमिनी कंवर (2025) ने जोधपुर जिले में मनरेगा के क्रियान्वयन का अध्ययन किया। अध्ययन में रोजगार सृजन, आय सुरक्षा और ग्रामीण परिसंपत्तियों के निर्माण में योजना की उपयोगिता सामने आई। साथ ही मजदूरी भुगतान में देरी, लाभार्थियों में जानकारी की कमी तथा प्रशासनिक सीमाओं जैसी समस्याएँ भी पाई गईं।

इन अध्ययनों से मनरेगा के रोजगार, आजीविका, महिला सहभागिता तथा सामाजिक–आर्थिक प्रभावों को समझने का आधार प्राप्त होता है।

अनुसंधान अंतराल :

ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना से संबंधित पूर्व अध्ययनों में रोजगार सृजन, ग्रामीण आय, प्रवासन, महिला सहभागिता तथा आजीविका सुरक्षा जैसे पक्षों का अध्ययन किया गया है। राजस्थान के संदर्भ में भी योजना के आर्थिक प्रभाव, रोजगार की स्थिति तथा क्रियान्वयन से संबंधित अध्ययन उपलब्ध हैं। परंतु चूरू जिले की शुष्क जलवायु, कम एवं अनिश्चित वर्षा, कृषि की मौसमी प्रकृति तथा ग्रामीण रोजगार की स्थिति को योजना की आवश्यकता और वर्षवार प्रगति के साथ जोड़कर किए गए अध्ययन सीमित हैं। विशेष रूप से स्थानीय भौगोलिक एवं सामाजिक–आर्थिक परिस्थितियों के संदर्भ में योजना की आवश्यकता तथा प्रगति के संयुक्त विश्लेषण की कमी दिखाई देती है। इसी अनुसंधान अंतराल को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत शोध–पत्र का विशय "चूरू जिले में ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना की आवश्यकता एवं प्रगति : एक भौगोलिक एवं सामाजिक–आर्थिक विश्लेषण" रखा गया है।

अध्ययन के उद्देश्य :

- चूरू जिले की भौगोलिक एवं सामाजिक–आर्थिक परिस्थितियों के संदर्भ में ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना की आवश्यकता का अध्ययन करना।
- चूरू जिले में ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना की प्रगति का उपलब्ध आँकड़ों के आधार पर विश्लेषण करना।
- ग्रामीण रोजगार एवं आजीविका सुरक्षा के संदर्भ में योजना की उपयोगिता का अध्ययन करना।

अध्ययन की परिकल्पनाएँ :

- चूरू जिले की भौगोलिक एवं सामाजिक–आर्थिक परिस्थितियाँ ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना की आवश्यकता को प्रभावित करती हैं।
- ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना की प्रगति चूरू जिले में ग्रामीण रोजगार एवं आजीविका सुरक्षा से संबंधित है।

इन उद्देश्यों एवं परिकल्पनाओं के आधार पर अध्ययन की प्रकृति और आँकड़ों के स्रोत निर्धारित किए गए हैं। योजना का उद्देश्य ग्रामीण परिवारों की आजीविका सुरक्षा को मजदूरी रोजगार के माध्यम से सुदृढ़ करना है। इसलिए प्रस्तुत अध्ययन में रोजगार और स्थानीय परिस्थितियों को विश्लेषण का प्रमुख आधार बनाया गया है।

शोध पद्धति :

प्रस्तुत अध्ययन वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक प्रकृति का है। अध्ययन में मुख्य रूप से द्वितीयक आँकड़ों का उपयोग किया गया है। आँकड़े मनरेगा पोर्टल, जिला स्तर के अभिलेख, सरकारी रिपोर्ट तथा प्रकाशित शोध सामग्री से लिए गए हैं।

अध्ययन की अवधि वर्ष 2019–20 से 2024–25 रखी गई है। योजना की प्रगति जानने के लिए सक्रिय परिवारों, रोजगार दिवसों, प्रति परिवार औसत रोजगार दिवस, महिला सहभागिता तथा व्यय को आधार बनाया गया है। आँकड़ों का विश्लेषण प्रतिशत, तुलनात्मक पद्धति और सारणी के माध्यम से किया गया है। इससे

विभिन्न वर्षों में रोजगार की स्थिति और योजना की प्रगति को समझने का प्रयास किया गया है।

अध्ययन क्षेत्र :

चूरू राजस्थान के उत्तर–पश्चिमी भाग में स्थित एक मरुस्थलीय जिला है। जिले की प्रमुख भौगोलिक विशेषताओं में शुष्क जलवायु, रेतीली भूमि, कम वर्षा तथा सीमित जल उपलब्धता शामिल हैं। इन परिस्थितियों के कारण कृषि की स्थिति वर्ष के अनुसार बदलती रहती है।

जिले की ग्रामीण अर्थव्यवस्था में कृषि, पशुपालन तथा मजदूरी कार्यों का प्रमुख स्थान है। कृषि कार्यों की मौसमी प्रकृति के कारण वर्षभर समान रोजगार उपलब्ध नहीं रहता। इसलिए चूरू की भौगोलिक एवं आर्थिक परिस्थितियाँ ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना के अध्ययन के लिए उपयुक्त आधार प्रदान करती हैं।

चूरू जिले में ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना की आवश्यकता :

चूरू जिले की भौगोलिक दशाएँ ग्रामीण रोजगार की प्रकृति को प्रभावित करती हैं। शुष्क जलवायु, कम वर्षा और रेतीली भूमि के कारण कृषि में अनिश्चितता बनी रहती है। वर्षा में कमी का सीधा प्रभाव फसल उत्पादन और कृषि कार्यों पर पड़ता है। ऐसी स्थिति में कृषि पर निर्भर परिवारों के लिए वर्षभर रोजगार प्राप्त करना कठिन हो जाता है।

कृषि कार्यों की मौसमी प्रकृति के कारण ग्रामीण श्रमिकों को वर्ष के कुछ समय वैकल्पिक रोजगार की आवश्यकता पड़ती है। राजस्थान में ग्रामीण गरीब परिवारों की आजीविका के प्रमुख साधनों में मजदूरी, कृषि, पशुपालन तथा गैर–कृषि कार्य शामिल हैं। इनसे प्राप्त रोजगार और आय कई परिवारों की आवश्यकताओं के लिए पर्याप्त नहीं होते। इस स्थिति में स्थानीय मजदूरी रोजगार ग्रामीण परिवारों की आय को अतिरिक्त आधार देता है। चूरू जिले की भौगोलिक परिस्थितियाँ ग्रामीण रोजगार की आवश्यकता को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करती हैं। कम एवं अनिश्चित वर्षा के कारण कृषि कार्यों की निरंतरता सीमित रहती है। रेतीली भूमि और जल की कमी भी कृषि आधारित रोजगार के अवसरों को प्रभावित करती है। ऐसी स्थिति में कृषि के अतिरिक्त स्थानीय स्तर पर मजदूरी रोजगार की आवश्यकता बढ़ जाती है। अतः ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना जिले की भौगोलिक परिस्थितियों के संदर्भ में विशेष महत्त्व रखती है।

चूरू में मनरेगा की आवश्यकता केवल मजदूरी रोजगार तक सीमित नहीं है। जल संरक्षण, जल–संचयन, भूमि विकास तथा सूखा–रोधी कार्य भी शुष्क क्षेत्रों के लिए उपयोगी हैं। ग्रामीण विकास मंत्रालय ने सूखे की स्थिति में मनरेगा के अंतर्गत जल संरक्षण, पारंपरिक जल स्रोतों के सुधार और भूमि विकास जैसे कार्यों को प्राथमिकता देने की सलाह दी है। इस प्रकार रोजगार के साथ स्थानीय संसाधनों के विकास की संभावना भी बनती है।

अतः जिले की प्राकृतिक सीमाएँ, कृषि की अनिश्चितता और मौसमी रोजगार की स्थिति ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना की आवश्यकता को रेखांकित करती हैं। यह आवश्यकता आगे योजना की वास्तविक प्रगति के आँकड़ों से अधिक स्पष्ट होती है। इसलिए अगले भाग में वर्ष 2019–20 से 2024–25 तक उपलब्ध आँकड़ों के आधार पर योजना की प्रगति का विश्लेषण किया गया है।

ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना की प्रगति एवं विश्लेषण :

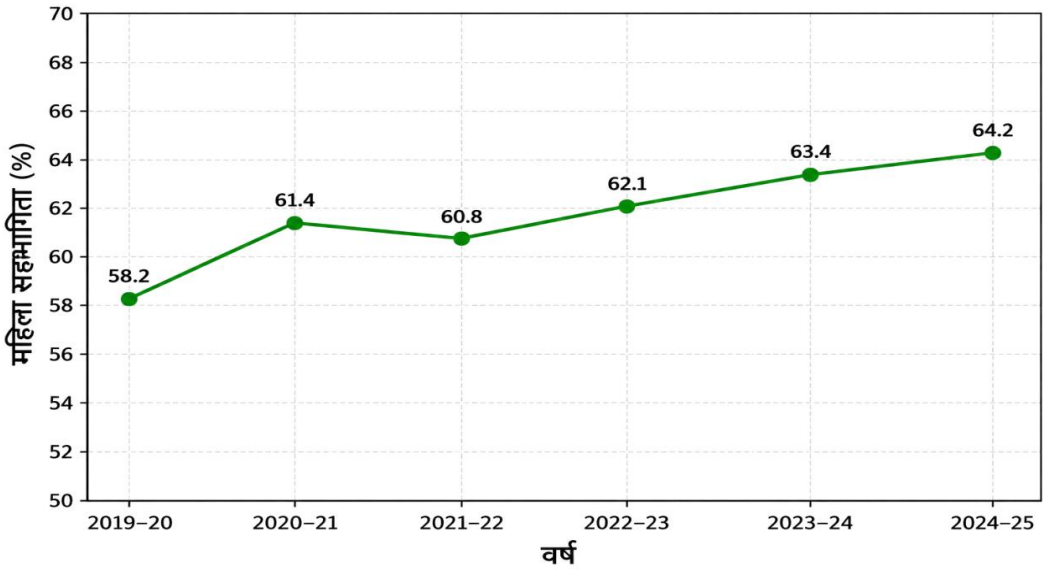
चूरू जिले में ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना की प्रगति को समझने के लिए वर्ष 2019–20 से 2024–25 तक के आँकड़ों का अध्ययन किया गया है।

सारणी-1 : चूरू जिले में ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना की वर्षवार प्रगति

वर्ष	सक्रिय परिवार	रोजगार दिवस (लाख में)	औसत रोजगार दिवस	महिला सहभागिता (%)	व्यय (रू. करोड़)
2019–20	1,24,680	68.4	54.8	58.2	184.6
2020–21	1,68,940	96.2	56.9	61.4	268.4
2021–22	1,42,360	78.6	55.2	60.8	218.2
2022–23	1,38,480	74.8	54.0	62.1	208.6
2023–24	1,31,240	71.2	54.3	63.4	198.4
2024–25	1,28,600	68.8	53.5	64.2	192.8

स्रोत – मनरेगा एमआईएस पोर्टल एवं जिला मनरेगा कार्यालय, चूरू से संकलित आँकड़ों के आधार पर शोधार्थी द्वारा तैयार।

इसके लिए सक्रिय परिवारों, रोजगार दिवसों, प्रति परिवार औसत रोजगार दिवस, महिला सहभागिता तथा व्यय को आधार बनाया गया है। ये संकेतक योजना की वर्षवार स्थिति को समझने में सहायक हैं।



चित्र – चूरू जिले में ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना के अंतर्गत महिला सहभागिता का वर्षवार परिवर्तन (2019–20 से 2024–25)

सारणी से ज्ञात होता है कि वर्ष 2019–20 में 1,24,680 सक्रिय परिवारों को आधार मानते हुए 68.4 लाख रोजगार दिवस दर्ज हुए। वर्ष 2020–21 में सक्रिय परिवार बढ़कर 1,68,940 तथा रोजगार दिवस 96.2 लाख हो गए। इसी वर्ष 268.4 करोड़ रुपये का व्यय भी दर्ज हुआ। इस प्रकार अध्ययन अवधि में इन तीनों संकेतकों का

सर्वाधिक स्तर 2020–21 में रहा।

इसके बाद सक्रिय परिवारों और रोजगार दिवसों में क्रमिक कमी दिखाई देती है। वर्ष 2024–25 में सक्रिय परिवारों की संख्या 1,28,600 तथा रोजगार दिवस 68.8 लाख रहे। प्रति परिवार औसत रोजगार दिवस भी वर्ष 2020–21 के 56.9 दिवस से घटकर वर्ष 2024–25 में 53.5 दिवस रह गए। इससे अध्ययन अवधि में योजना की वर्षवार प्रगति में उतार–चढ़ाव दिखाई देता है।

इसके विपरीत महिला सहभागिता में समग्र वृद्धि दिखाई देती है। यह वर्ष 2019–20 में 58.2 प्रतिशत थी, जो वर्ष 2024–25 में बढ़कर 64.2 प्रतिशत हो गई। यह वृद्धि ग्रामीण महिलाओं की मजदूरी रोजगार में बढ़ती भागीदारी को दर्शाती है।

इस प्रकार उपलब्ध आँकड़े बताते हैं कि चूरू जिले में योजना ने अध्ययन अवधि के दौरान ग्रामीण रोजगार उपलब्ध कराने में निरंतर भूमिका निभाई। वर्षवार उतार–चढ़ाव के बावजूद रोजगार दिवसों और महिला सहभागिता की स्थिति योजना की स्थानीय उपयोगिता को दर्शाती है। यही विश्लेषण आगे अध्ययन के सुझाव एवं निष्कर्ष का आधार बनता है।

सुझाव :

अध्ययन के आधार पर चूरू जिले में योजना के क्रियान्वयन को स्थानीय भौगोलिक परिस्थितियों से अधिक निकटता से जोड़ने की आवश्यकता है। शुष्क एवं कम वर्षा वाले क्षेत्रों में जल संरक्षण, वर्षा जल–संचयन और भूमि विकास से संबंधित कार्यों को प्राथमिकता दी जानी चाहिए। इससे रोजगार के साथ ग्रामीण संसाधनों का विकास भी संभव होगा। मनरेगा के आधिकारिक उद्देश्यों में भी रोजगार के साथ आजीविका संसाधनों और टिकाऊ परिसंपत्तियों के निर्माण को महत्त्व दिया गया है।

रोजगार की उपलब्धता कृषि कार्यों के अपेक्षाकृत कम उपलब्ध होने वाले समय के अनुरूप रखी जानी चाहिए। इससे ग्रामीण श्रमिकों को स्थानीय स्तर पर रोजगार मिल सकेगा। महिला सहभागिता में हुई वृद्धि को बनाए रखने के लिए कार्यस्थल की आवश्यक सुविधाओं पर ध्यान दिया जाना चाहिए। योजना के कार्यों का चयन ग्राम स्तर की स्थानीय आवश्यकताओं के आधार पर किया जाना चाहिए।

निष्कर्ष :

प्रस्तुत अध्ययन से ज्ञात होता है कि चूरू जिले की भौगोलिक एवं सामाजिक–आर्थिक परिस्थितियाँ ग्रामीण रोजगार की आवश्यकता को प्रभावित करती हैं। शुष्क जलवायु, कम एवं अनिश्चित वर्षा तथा कृषि की मौसमी प्रकृति के कारण ग्रामीण परिवारों को अतिरिक्त रोजगार की आवश्यकता रहती है। ऐसी परिस्थितियों में ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना आजीविका सुरक्षा का एक उपयोगी माध्यम बनती है।

वर्ष 2019–20 से 2024–25 के आँकड़ों में योजना की प्रगति एक समान नहीं रही। वर्ष 2020–21 में सक्रिय परिवार, रोजगार दिवस और व्यय अध्ययन अवधि में सर्वाधिक रहे। इसके बाद इन संकेतकों में कमी दिखाई दी। इसके विपरीत महिला सहभागिता 58.2 प्रतिशत से बढ़कर 64.2 प्रतिशत हुई। इससे योजना में महिलाओं की बढ़ती भागीदारी सामने आती है।

अतः चूरू जिले में योजना की उपयोगिता को केवल रोजगार दिवसों तक सीमित नहीं माना जा सकता। इसका संबंध स्थानीय रोजगार, आजीविका सुरक्षा तथा ग्रामीण संसाधनों के विकास से भी है। चूरू की स्थानीय

परिस्थितियों के अनुरूप कार्यों का चयन तथा समय पर रोजगार की उपलब्धता योजना को अधिक उपयोगी बना सकती है।

संदर्भ सूची :

- Choudhary, R. (2020). The Impact of MGNREGA on Employment and Migration: A Case Study of Rajasthan. Asian Journal of Research in Social Sciences and Humanities, 10(10), 1–13. DOI: 10.5958/2249-7315.2020.00017.9.
- Gokul, K. (2021). Employment Challenges and Trends in India's Rural Labour Market with the Impact of MGNREGA. Social Science Journal for Advanced Research, 1(1), 18–24.
- Narayan, S. (2022). Breaking New Ground: Women's Employment in India's NREGA, the Pandemic Lifeline. Gender & Development, 30(1–2), 217–246. DOI: 10.1080/13552074.2022.2071978.
- Mangilal. (2023). The Economic Impact of the Mahatma Gandhi National Rural Employment Guarantee Act: A Case Study of the Bajju Sub-Division of Bikaner District in Rajasthan. Journal of Agribusiness and Rural Development, 67(1), 115–123. DOI: 10.17306/J.JARD.2023.01588.
- Kanwar, Z. (2024). An Evaluation of MGNREGA's Impact on Rural Employment and Poverty Alleviation in Rajasthan: A Longitudinal Analysis (2005–2023). Recent Trends in Management and Commerce, 5(3), 119–126. DOI: 10.46632/rmc/5/3/18.
- Kanwar, Z. (2025). Evaluating the Implementation of MGNREGA in Jodhpur: Successes, Challenges, and Future Directions. Journal of Modern Management & Entrepreneurship, 15(3), 106–114. DOI: 10.62823/JMME/15.03.7939.
- भारत सरकार, ग्रामीण विकास मंत्रालय। महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम (मनरेगा) : प्रबंधन सूचना प्रणाली (MIS)।
- जिला मनरेगा कार्यालय, चूरू। मनरेगा वार्षिक प्रगति अभिलेख, 2019–20 से 2024–25।
- आर्थिक एवं सांख्यिकी निदेशालय, राजस्थान सरकार। चूरू जिले से संबंधित जिला सांख्यिकीय विवरण।
- भारत की जनगणना (2011)। जिला जनगणना पुस्तिका– चूरू, राजस्थान।

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2026 Page No. : 65-75

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES PRINT RESEARCH JOURNAL

प्रेमचंद की रचनाओं में नारी अधिकार एवं स्वाधीनता का अध्ययन

मनोज कुमार यादव, शोधार्थी,
डॉ. विनोद कुमार शर्मा, शोध निर्देशक व प्राध्यापक,
हिन्दी विभाग, डॉ. सी. वी. रमन विश्वविद्यालय, वैशाली, बिहार।

मुंशी प्रेमचंद (1880–1936) आधुनिक हिंदी साहित्य के उन अग्रगण्य रचनाकारों में से हैं, जिन्होंने अपने साहित्य के माध्यम से समाज के वंचितों और विशेषकर शोषित स्त्री वर्ग के प्रश्नों को केंद्रीय धरातल पर स्थापित किया। प्रस्तुत शोध पत्र का मूल उद्देश्य प्रेमचंद के उपन्यासों एवं कहानियों में चित्रित नारी पात्रों के अधिकारों, उनकी स्वाधीनता की चेतना और तात्कालीन पितृसत्तात्मक संरचनाओं के विरुद्ध उनके प्रतिरोध का समालोचनात्मक विश्लेषण करना है। यह शोध स्पष्ट करता है कि प्रेमचंद की नारी केवल औपनिवेशिक या पारंपरिक सामाजिक दबाव की शिकार नहीं है, बल्कि वह स्वाभिमान, आर्थिक स्वावलंबन और सामाजिक स्वतंत्रता के लिए संघर्षरत एक जीवंत इकाई है। 'सेवासदन', 'निर्मला', 'कर्मभूमि' और 'गोदान' जैसी कालजयी कृतियों के सूक्ष्म अनुशीलन से यह सिद्ध होता है कि प्रेमचंद का स्त्री–विषयक दृष्टिकोण तत्कालीन समाज सुधार आंदोलनों से आगे बढ़कर आधुनिक स्त्री–विमर्श की सुदृढ़ नींव रखता है।

बीज शब्द :

प्रेमचंद, नारी अधिकार, स्वाधीनता, पितृसत्ता, स्त्री–विमर्श, सामाजिक यथार्थ, आर्थिक स्वावलंबन।

प्रस्तावना :

साहित्य समाज का दर्पण ही नहीं, बल्कि उसके रूपंतरण का एक सशक्त माध्यम भी होता है। किसी भी युग का श्रेष्ठ साहित्य अपने कालखंड की सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक संरचनाओं को प्रतिबिंबित करने के साथ–साथ उनके पुनर्मूल्यांकन की प्रेरणा भी देता है। भारतीय साहित्य के इतिहास में बीसवीं शताब्दी का पूर्वार्द्ध एक ऐसा संक्रांति काल था, जब संपूर्ण देश औपनिवेशिक दासता के विरुद्ध संघर्ष करने के साथ–साथ अपनी आंतरिक सामाजिक कुरीतियों से भी जूझ रहा था। इस नवजागरण काल में साहित्यकारों ने समाज सुधार और स्वाधीनता आंदोलन को एक साथ साधने का प्रयास किया।

हिंदी कथा–साहित्य के शिखर पुरुष मुंशी प्रेमचंद (1880–1936) इस दौर के सबसे प्रखर वैचारिक और सामाजिक चेतना के संवाहक बनकर उभरे। प्रेमचंद का आगमन हिंदी साहित्य में एक नए युग का सूत्रपात था, जिसे 'प्रेमचंद युग' के नाम से जाना जाता है। उनसे पूर्व का साहित्य मुख्य रूप से तिलस्म, एयारी, कौतूहल

या केवल उपदेशात्मकता तक सीमित था। प्रेमचंद ने साहित्य को आम जनता के जीवन की कठोर वास्तविकताओं से जोड़ा। किसान, मजदूर, दलित और विशेष रूप से 'नारी' उनके साहित्य के केंद्र में आए। भारतीय समाज में ऐतिहासिक और सांस्कृतिक रूप से नारी की स्थिति अत्यंत जटिल और विरोधाभासी रही है। एक ओर जहाँ शास्त्रों में 'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः' जैसी सूक्तियों के माध्यम से उसे पूजनीय और देवी का दर्जा दिया गया, वहीं दूसरी ओर व्यावहारिक सामाजिक जीवन में उसे पितृसत्तात्मक व्यवस्था, मध्यकालीन रूढ़ियों और औपनिवेशिक संरचनाओं के तहत अत्यंत शोषित, पराधीन और द्वितीय श्रेणी का नागरिक बनाकर रखा गया।

प्रेमचंद ने इस दोहरे चरित्र को बहुत गहराई से समझा। उन्होंने पाया कि भारतीय नारी सदियों से त्याग, बलिदान, सहनशीलता और समर्पण के नाम पर छली जाती रही है। अतः उन्होंने अपनी लेखनी के माध्यम से नारी के प्रति समाज के इस संकीर्ण दृष्टिकोण पर करारा प्रहार किया। प्रेमचंद के साहित्य में नारी केवल करुणा, दया या सहानुभूति की पात्र नहीं हैय वह अपने अस्तित्व, स्वाभिमान, अधिकारों और स्वतंत्रता के लिए संघर्ष करती हुई एक सजग इकाई के रूप में सामने आती है।

नारी चेतना का विश्लेषण और प्रेमचंद का दृष्टिकोण :

शोध का प्रथम मुख्य उद्देश्य प्रेमचंद के कथा–साहित्य में चित्रित नारी पात्रों की सामाजिक, वैचारिक और अधिकार–विषयक चेतना का गहराई से विश्लेषण करना है। चेतना से तात्पर्य केवल परिस्थितियों को सहने या जानने से नहीं है, बल्कि अपनी स्थिति के प्रति जागरूक होकर उसमें बदलाव लाने के विचार से है।

प्रेमचंद के पूर्ववर्ती साहित्यकारों ने भी नारी जीवन पर लिखा था, किंतु उनका दृष्टिकोण प्रायः सुधारवादी या भावुकता से प्रेरित था। वे नारी को प्रायः 'अबला' के रूप में देखते थे, जिसे पुरुष के संरक्षण की आवश्यकता थी। इसके विपरीत, प्रेमचंद का दृष्टिकोण यथार्थवादी और क्रांतिधर्मी है। वे नारी चेतना के क्रमिक विकास को अपनी रचनाओं में चित्रित करते हैं।

प्रेमचंद के शुरुआती उपन्यासों से लेकर उनके अंतिम महाकाव्यात्मक उपन्यास 'गोदान' तक यदि हम नारी पात्रों की यात्रा को देखें, तो उसमें चेतना का एक निरंतर विकसित होता हुआ रूप दिखाई देता है :

- **परंपरा से आधुनिकता की ओर संक्रमण :** प्रेमचंद की नारियां परंपरा का पूरी तरह त्याग नहीं करतीं, बल्कि वे परंपरा के उन्हीं तत्वों को स्वीकार करती हैं जो मानवीय मूल्यों के अनुकूल हैं। जहाँ परंपरा उनके आत्मसम्मान और अधिकारों का हनन करती है, वहाँ वे निर्भीक होकर उसका विरोध करती हैं।
- **वैचारिक परिपक्वता :** प्रेमचंद के नारी पात्र केवल पुरुष वर्चस्व के खिलाफ शिकायत नहीं करते, बल्कि वे धर्म, समाज, नैतिकता और कानून के नाम पर बनाए गए दोहरे मानदंडों पर तार्किक प्रश्न खड़े करते हैं।

उदाहरण के लिए, 'सेवाग्राम' या 'सेवासदन' (1918) की सुमन का चरित्र केवल एक शोषित महिला की कहानी नहीं है, बल्कि वह उस सामाजिक पाखंड पर तीखा प्रहार है जो एक ओर स्त्री को पवित्रता का पाठ पढ़ाता है और दूसरी ओर उसे आर्थिक और सामाजिक रूप से असहाय बनाकर वेश्यावृत्ति के गर्त में धकेल देता है। सुमन की चेतना का विकास तब दिखाई देता है जब वह समाज के इन छद्म मानदंडों को पहचानती है और अपने पुनर्वास एवं आत्मसम्मान के लिए नए मार्ग तलाशती है।

इसी प्रकार, प्रेमचंद ने दिखाया कि नारी चेतना केवल शिक्षित या उच्च वर्ग की स्त्रियों तक सीमित नहीं

है। ग्रामीण और अशिक्षित स्त्रियाँ भी अपनी जीवन–दृष्टि और अधिकार–चेतना में किसी से पीछे नहीं हैं। 'गोदान' की 'धनिया' इसका सबसे जीवंत उदाहरण है। धनिया बिना किसी औपचारिक शिक्षा के भी सामाजिक अन्याय, धार्मिक ढोंग और महाजनी शोषण के खिलाफ मुखर होकर बोलती है। उसकी यह चेतना ही उसे पूरे उपन्यास में एक अत्यंत सबल और प्रेरणादायी पात्र बनाती है।

सामाजिक शोषण एवं कुरीतियों के विरूद्ध दृष्टिकोण :

शोध का द्वितीय उद्देश्य बेमेल विवाह, अनमेल विवाह, दहेज प्रथा, वैधव्य की विभीषिका, वेश्यावृत्ति और आर्थिक पराधीनता जैसी मध्यकालीन एवं तत्कालीन सामाजिक समस्याओं के विरुद्ध प्रेमचंद के दृष्टिकोण को रेखांकित करना है।

प्रेमचंद ने अपने युग के समाज का अत्यंत सूक्ष्म निरीक्षण किया था। उन्होंने देखा कि भारतीय नारी की पराधीनता और दयनीय स्थिति के पीछे कई सामाजिक कुरीतियां और संस्थागत शोषक ढाँचे जिम्मेदार थे :

(क) अनमेल एवं बेमेल विवाह तथा दहेज प्रथा :

भारतीय समाज में कन्या को एक 'भार' माना जाता था, जिसके कारण उसका विवाह कम उम्र में किसी भी संपन्न या वृद्ध पुरुष से कर दिया जाता था। इस अनमेल विवाह का दुष्परिणाम जीवन भर उस स्त्री को भोगना पड़ता था।

प्रेमचंद ने अपने प्रसिद्ध उपन्यास 'निर्मला' (1927) में इस समस्या को अत्यंत प्रामाणिक और दर्दनाक रूप में प्रस्तुत किया है। निर्मला का विवाह उसके पिता की मृत्यु के बाद केवल दहेज न दे पाने के कारण एक अधेड़ उम्र के विधुर (तोताराम) से कर दिया जाता है। यह अनमेल विवाह न केवल निर्मला के जीवन को तबाह करता है, बल्कि पूरे परिवार के विनाश का कारण बनता है। प्रेमचंद यहाँ स्पष्ट रूप से यह संदेश देते हैं कि दहेज प्रथा और अनमेल विवाह स्त्री के जीवन पर एक सामाजिक अपराध के समान हैं।

(ख) वैधव्य (विधवा जीवन) की त्रासदी :

तत्कालीन समाज में बाल–विवाह के कारण विधवाओं की संख्या बहुत अधिक थी। विधवा स्त्री को समाज में शकुन–अपशकुन के घेरे में बांध दिया जाता था, उसका पुनर्विवाह वर्जित था और उसका जीवन एक जीवित लाश के समान बना दिया जाता था। प्रेमचंद ने अपनी कहानियों और उपन्यासों में विधवा पुनर्विवाह का पुरजोर समर्थन किया। 'प्रतिज्ञा' (या 'प्रतिज्ञा' का प्रारंभिक रूप 'प्रेमा') में वे विधवाओं की समस्याओं और उनके पुनर्वास के प्रश्न को प्रमुखता से उठाते हैं। वे दिखाते हैं कि कैसे समाज विधवा स्त्री के प्रति क्रूर और संवेदनाहीन बना रहता है।

(ग) आर्थिक पराधीनता और पारिवारिक शोषण :

प्रेमचंद ने यह गहराई से समझा कि स्त्री पर होने वाले अत्याचारों की जड़ में उसकी आर्थिक पराधीनता है। चूँकि स्त्री के पास अपनी कोई संपत्ति नहीं होती और न ही उसके पास जीविकोपार्जन के स्वतंत्र साधन होते हैं, इसलिए वह पिता, पति या पुत्र पर निर्भर रहने के लिए विवश होती है। इस निर्भरता के कारण ही वह पारिवारिक और सामाजिक शोषण को चुपचाप सहने के लिए मजबूर होती है।

प्रेमचंद का दृष्टिकोण इन समस्याओं के प्रति केवल सहानुभूति प्रकट करने तक सीमित नहीं था। वे समस्याओं के कारणों की तह में जाते हैं और यह सिद्ध करते हैं कि जब तक इन सामाजिक कुरीतियों का

उन्मूलन नहीं होगा और स्त्री को एक स्वतंत्र इंसान के रूप में स्वीकार नहीं किया जाएगा, तब तक किसी भी सभ्य समाज का निर्माण संभव नहीं है।

नारी की स्वाधीनता, आत्म-सम्मान एवं स्वावलंबन :

शोध का तृतीय उद्देश्य प्रेमचंद की रचनाओं में नारियों की आर्थिक स्वाधीनता, स्वावलंबन और आत्म–सम्मान प्राप्त करने के प्रयासों की पहचान करना और उनका मूल्यांकन करना है।

स्वाधीनता का अर्थ प्रेमचंद के लिए केवल औपनिवेशिक शासन से मुक्ति नहीं था, उनके लिए वास्तविक स्वाधीनता तब तक अधूरी थी जब तक समाज का हर शोषित वर्ग 'विशेषकर नारी' आंतरिक रूप से स्वतंत्र न हो जाए। प्रेमचंद के अनुसार, नारी स्वाधीनता के तीन प्रमुख स्तंभ हैं :

आर्थिक स्वावलंबन आत्म-सम्मान और निर्णय लेने का अधिकार :

सामाजिक एवं राजनीतिक सहभागिता :

(क) आर्थिक स्वावलंबन की आवश्यकता :

प्रेमचंद ने अपने युग में ही इस बात की घोषणा कर दी थी कि नारी मुक्ति का द्वार उसकी आर्थिक स्वतंत्रता से होकर गुजरता है। जब तक स्त्री धन के लिए पुरुष का मुँह ताकेगी, तब तक वह पूर्ण रूप से आजाद नहीं हो सकती।

'गबन' (1931) की जालपा का चरित्र इस दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण है। आरंभ में जालपा आभूषणों के प्रति आकर्षित और पारंपरिक सोच वाली स्त्री दिखाई देती है। परंतु जब उसका पति रामानंद (रमानाथ) गबन के डर से भाग जाता है और परिवार संकट में पड़ता है, तब जालपा के भीतर का स्वाभिमानी और स्वावलंबी रूप प्रकट होता है। वह अपने आभूषण बेचकर ऋण चुकाती है, स्वयं सूत कातकर और मेहनत करके आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनती है। जालपा का यह परिवर्तन दर्शाता है कि आर्थिक स्वावलंबन स्त्री को न केवल विपत्ति से उबारता है, बल्कि उसे एक नया आत्मविश्वास और स्वाभिमान भी प्रदान करता है।

(ख) निर्णय लेने की स्वतंत्रता और आत्म-सम्मान :

प्रेमचंद के नारी पात्र अपनी अस्मिता और आत्म–सम्मान से समझौता नहीं करते। वे पुरुष के अधिपत्य को आँख मूँदकर स्वीकार नहीं करते।

'कर्मभूमि' (1932) की सुखदा और सोफिया के माध्यम से प्रेमचंद ने नारी की निर्णय लेने की क्षमता और उसकी राजनीतिक चेतना को रेखांकित किया है। सुखदा, जो पहले एक आरामदायक और पारंपरिक जीवन जी रही थी, समय आने पर घर की चारदीवारी से बाहर निकलती है। वह न केवल अपने जीवन के फैसले स्वयं लेती है, बल्कि अछूतोद्धार और कृषक आंदोलनों का नेतृत्व भी करती है। वह जेल जाती है और समाज के सामने यह साबित करती है कि नारी नेतृत्व करने में पूरी तरह सक्षम है।

इसी प्रकार 'गोदान' की 'मालती' का चरित्र एक आधुनिक, शिक्षित और स्वतंत्र नारी का प्रतिनिधित्व करता है। मालती एक डॉक्टर है, जो आर्थिक रूप से पूरी तरह आत्मनिर्भर है। वह मेहता के साथ अपने संबंधों में भी अपनी व्यक्तिगत स्वतंत्रता और विचारों को बनाए रखती है। वह विवाह को केवल एक सामाजिक समझौता न मानकर दो व्यक्तियों की मानसिक और वैचारिक बराबरी का माध्यम मानती है।

आधुनिक स्त्री-विमर्श में प्रेमचंद की प्रासंगिकता :

शोध का चतुर्थ एवं अंतिम उद्देश्य समकालीन स्त्री–विमर्श और नारी अधिकारों के संदर्भ में प्रेमचंद के साहित्य की प्रासंगिकता को सिद्ध करना है।

आज इक्कीसवीं सदी में जब हम 'स्त्री–विमर्श', 'जेंडर इक्वेलिटी' और 'महिला सशक्तिकरण' की बात करते हैं, तो अक्सर इन अवधारणाओं को पश्चिमी विचारों से प्रभावित माना जाता है। किंतु प्रेमचंद के साहित्य का अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि भारत में आधुनिक स्त्री–विमर्श की मौलिक और ठोस नींव प्रेमचंद बहुत पहले ही रख चुके थे।

प्रेमचंद का स्त्री-संबंधी दृष्टिकोण आज भी निम्नलिखित कारणों से अत्यंत प्रासंगिक है :

(क) यथार्थवादी एवं जमीनी दृष्टिकोण :

पश्चिम का स्त्री–विमर्श प्रायः व्यक्तिवाद और पुरुषों से प्रतिस्पर्धा पर अत्यधिक बल देता है। इसके विपरीत, प्रेमचंद का स्त्री–विमर्श भारतीय सामाजिक ताने–बाने और धरातलीय यथार्थ पर आधारित है। वे नारी को पुरुष की प्रतिद्वंद्वी के रूप में नहीं, बल्कि उसकी सहचरी और समाज की एक समान साझेदार के रूप में देखते हैं। वे मानते हैं कि नारी की मुक्ति पुरुष के विनाश में नहीं, बल्कि पितृसत्तात्मक मानसिकता के विनाश में है।

(ख) अधिकारों और उत्तरदायित्वों का संतुलन :

प्रेमचंद का नारी पात्र अधिकार माँगते समय अपने सामाजिक उत्तरदायित्वों से भागता नहीं है। धनिया, जालपा, सुखदा या मालती– ये सभी पात्र अपने अधिकारों के प्रति जितने सचेत हैं, अपने परिवार और समाज के प्रति भी उतने ही जिम्मेदार हैं। आज के दौर में जहाँ अधिकार और कर्तव्य के बीच का संतुलन बिगड़ रहा है, वहाँ प्रेमचंद का दृष्टिकोण एक सही दिशा दिखाता है।

(ग) श्रम और उत्पादन से जुड़ाव :

आज भी विश्व स्तर पर यह माना जाता है कि जब तक महिलाओं का अदृश्य श्रम अर्थव्यवस्था में सही स्थान नहीं पाएगा, तब तक उनका वास्तविक सशक्तिकरण संभव नहीं है। प्रेमचंद ने आज से सौ साल पहले अपने साहित्य में (विशेषकर 'गोदान' और ग्रामीण कथाओं में) किसान और मजदूर स्त्रियों के श्रम को रेखांकित किया था। वे दिखाते हैं कि खेत में काम करने वाली ग्रामीण स्त्री केवल उपभोक्ता नहीं, बल्कि उत्पादक है, और इसलिए वह सम्मान और बराबरी की हकदार है।

संक्षेप में, प्रेमचंद का कथा–साहित्य केवल बीते हुए कालखंड की कहानियों का संग्रह नहीं है, बल्कि वह भारतीय समाज की अंतरात्मा का दस्तावेजीकरण है। उन्होंने नारी जीवन के जिन प्रश्नों 'जैसे आर्थिक स्वतंत्रता, स्वाभिमान, अनमेल विवाह, दहेज, वैधव्य और सामाजिक सहभागिता' को अपने साहित्य में उठाया था, वे प्रश्न आज भी नए रूपों में हमारे सामने मौजूद हैं।

प्रस्तुत शोध पत्र प्रेमचंद की प्रमुख कृतियों 'मुख्य रूप से 'सेवासदन', 'निर्मला', 'गबन', 'कर्मभूमि' और 'गोदान' ' के साथ–साथ उनकी चुनिंदा कहानियों (जैसे 'पुस की रात', 'कफन', 'बड़े घर की बेटी', 'मंत्र' आदि) के आलोक में नारी अधिकार और स्वाधीनता के विभिन्न पक्षों का गहन अनुशीलन करता है।

यह शोध यह सिद्ध करने का प्रयास करेगा कि प्रेमचंद का नारी–विषयक चिंतन तत्कालीन सुधारवादी

आंदोलनों की सीमाओं को लांघकर एक प्रगतिशील, न्यायसंगत और मानवीय समाज के निर्माण की दिशा में अग्रसर था। उनकी रचनाओं में व्यक्त नारी स्वाधीनता का विचार आज के आधुनिक युग में भी उतना ही सार्थक, प्रेरणादायी और प्रासंगिक है जितना कि वह अपने समय में था।

शोध के उद्देश्य :

- **नारी चेतना का विश्लेषण :** प्रेमचंद के कथा–साहित्य में चित्रित नारी पात्रों की सामाजिक, वैचारिक और अधिकार–विषयक चेतना का अध्ययन करना।
- **शोषण व कुरीतियों का अध्ययन :** बेमेल विवाह, दहेज प्रथा, वैधव्य और आर्थिक पराधीनता जैसी सामाजिक समस्याओं के विरुद्ध प्रेमचंद के दृष्टिकोण को रेखांकित करना।
- **स्वाधीनता व स्वावलंबन की पहचान :** प्रेमचंद की रचनाओं में स्त्रियों के आर्थिक स्वावलंबन, आत्म–सम्मान और सामाजिक स्वाधीनता के प्रयासों का मूल्यांकन करना।
- **आधुनिक प्रासंगिकता :** समकालीन स्त्री–विमर्श और नारी अधिकारों के संदर्भ में प्रेमचंद के साहित्य की प्रासंगिकता को सिद्ध करना।

साहित्य समीक्षा :

1. **शर्मा, रामविलास (1952). प्रेमचंद और उनका युग. नई दिल्ली : राजकमल प्रकाशन।**

शोध दृष्टि व कार्यप्रणाली : प्रस्तुत अध्ययन में प्रगतिवादी एवं समाजशास्त्रीय विश्लेषण पद्धति का प्रयोग करते हुए प्रेमचंद के कथा–साहित्य का अनुशीलन किया गया है।

प्रमुख निष्कर्ष : शोधकर्ता के अनुसार प्रेमचंद का नारी–विमर्श केवल भावुकता या सहानुभूति तक सीमित न होकर सामाजिक संरचना के पुनर्मूल्यांकन पर आधारित है। अध्ययन यह सिद्ध करता है कि प्रेमचंद ने स्त्री की पराधीनता का मूल कारण उसकी 'आर्थिक निर्भरता' और 'पितृसत्तात्मक व्यवस्था' को माना तथा स्त्री स्वावलंबन को नारी–मुक्ति की प्राथमिक शर्त के रूप में रेखांकित किया।

2. **सिंह, नामवर (1982). दूसरी परंपरा की खोज. नई दिल्ली : राजकमल प्रकाशन।**

शोध दृष्टि व कार्यप्रणाली : यह कार्य ऐतिहासिक–तुलनात्मक एवं नवजागरणकालीन साहित्यिक विश्लेषण पद्धति पर आधारित है।

प्रमुख निष्कर्ष : अध्ययन में 'सेवासदन' (1918) से लेकर 'गोदान' (1936) तक के नारी पात्रों का चेतना–परक विश्लेषण किया गया है। शोधकर्ता का निष्कर्ष है कि प्रेमचंद ने भारतीय साहित्य में स्त्री को केवल 'पीड़िता' के रूप में प्रस्तुत करने की परंपरा को तोड़कर उसे सामाजिक परिवर्तन एवं क्रांति के 'सक्रिय कारक' के रूप में स्थापित किया।

3. **गोयनका, कमल किशोर (1989). प्रेमचंद अध्ययन की नई दिशाएं. दिल्ली : नेशनल पब्लिशिंग हाउस।**

शोध दृष्टि व कार्यप्रणाली : प्रस्तुत शोध में विषय–वस्तु विश्लेषण तथा ऐतिहासिक वर्गीकरण पद्धति का अनुप्रयोग किया गया है।

प्रमुख निष्कर्ष : अध्ययन के अंतर्गत अनमेल विवाह, दहेज–प्रथा, वैधव्य एवं वेश्यावृत्ति जैसे सामाजिक मुद्दों पर प्रेमचंद के वैचारिक दृष्टिकोण का वस्तुनिष्ठ मूल्यांकन किया गया है। शोध दर्शाता है कि प्रेमचंद का नारी–दृष्टिकोण पारिवारिक व सामाजिक ताने–बाने के भीतर ही स्त्री को पूर्ण स्वतंत्रता, आत्म–सम्मान एवं समान

अधिकार दिलाने की वकालत करता है।

4. **श्री, गीतांजलि (1989)**

शोध दृष्टि व कार्यप्रणाली : प्रस्तुत अध्ययन में बौद्धिक इतिहास (Intellectual History) तथा उत्तर–औपनिवेशिक स्त्री–विमर्श की शोध प्रविधियों का प्रयोग किया गया है।

प्रमुख निष्कर्ष : शोधकत्री का मत है कि प्रेमचंद का स्त्री–विमर्श किसी पाश्चात्य सिद्धांत का अंधानुकरण नहीं है, बल्कि यह 20वीं सदी के भारतीय सामाजिक यथार्थ और औपनिवेशिक परिस्थितियों से उपजा मौलिक चिंतन है। यह ग्रंथ प्रेमचंद के नारी–विमर्श को वैश्विक स्त्री–विमर्श के समकक्ष रखकर मूल्यांकित करता है।

5. **पांडेय, मैनेजर (2008). अनभै सांचा. नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन।**

शोध दृष्टि व कार्यप्रणाली : यह अध्ययन साहित्य के समाजशास्त्र एवं वर्ग–विश्लेषण पद्धति पर आधारित है।

प्रमुख निष्कर्ष : शोधकर्ता ने प्रेमचंद के साहित्य में शोषित, किसान एवं मजदूर वर्ग की स्त्रियों की 'उत्पादक भूमिका' और 'अधिकार–चेतना' का अध्ययन किया है। निष्कर्ष यह निकलता है कि 'गोदान' की धनिया और 'कफन' की बुधिया जैसे पात्रों के माध्यम से प्रेमचंद ने यह प्रतिपादित किया कि ग्रामीण व श्रमजीवी वर्ग की नारियों में स्वाधीनता और अन्याय के विरुद्ध प्रतिकार की शक्ति मध्यवर्गीय स्त्रियों की तुलना में अधिक व्यावहारिक और प्रखर है।

6. **श्री, गीतांजलि (1989). बिटवीन टू वर्ल्ड्स : एन इंटेलेक्चुअल बायोग्राफी ऑफ प्रेमचंद. नई दिल्ली : ओरिएंट लोंगमेन।**

शोध दृष्टि व कार्यप्रणाली : प्रस्तुत अध्ययन में बौद्धिक इतिहास तथा उत्तर–औपनिवेशिक स्त्री–विमर्श की शोध प्रविधियों का प्रयोग किया गया है।

प्रमुख निष्कर्ष : शोधकत्री का मत है कि प्रेमचंद का स्त्री–विमर्श किसी पाश्चात्य सिद्धांत का अंधानुकरण नहीं है, बल्कि यह 20वीं सदी के भारतीय सामाजिक यथार्थ और औपनिवेशिक परिस्थितियों से उपजा मौलिक चिंतन है। यह ग्रंथ प्रेमचंद के नारी–विमर्श को वैश्विक स्त्री–विमर्श के समकक्ष रखकर मूल्यांकित करता है।

शोध प्रविधि :

मुंशी प्रेमचंद के कथा–साहित्य में निहित नारी अधिकार एवं उनकी स्वाधीनता की चेतना का समालोचनात्मक व विश्लेषणात्मक अनुशीलन करता है। शोध की विषय–वस्तु, उद्देश्य तथा गुणात्मक प्रकृति को ध्यान में रखते हुए निम्नलिखित शोध विधियों का अनुप्रयोग किया गया है :

1. **प्राथमिक एवं द्वितीयक आंकड़ों का चयन :**

प्राथमिक स्रोत : प्रेमचंद के मूल उपन्यासों (सेवासदन, निर्मला, गबन, कर्मभूमि, गोदान) तथा उनकी प्रतिनिधि कहानियों का प्रत्यक्ष पाठ्य–विश्लेषण।

द्वितीयक स्रोत : प्रेमचंद–साहित्य से संबंधित समीक्षात्मक ग्रंथ, पूर्व में प्रकाशित शोध–प्रबंध, यूजीसी–सूचीबद्ध शोध पत्रिकाएं तथा आलोचनात्मक दस्तावेज।

2. **विषय-वस्तु विश्लेषण विधि :**

प्रेमचंद के साहित्य में प्रयुक्त नारी पात्रों के संवादों, उनकी मनोदशा, सामाजिक भूमिकाओं तथा उनके

द्वारा किए गए प्रतिरोध के प्रसंगों का पाठ–गत एवं विषय–परक विश्लेषण।

3. साहित्य का समाजशास्त्र :

साहित्यिक कृतियों को केवल कल्पना न मानकर 20वीं सदी के पूर्वार्द्ध के भारतीय समाज, पितृसत्तात्मक संरचनाओं, वर्ग–भेद और आर्थिक यथार्थ के परिप्रेक्ष्य में रखकर विश्लेषित करने की प्रणाली।

4. ऐतिहासिक एवं क्रमिक विकास पद्धति :

प्रेमचंद के शुरुआती साहित्य (सेवासदन, 1918) से लेकर अंतिम दौर (गोदान, 1936) तक नारी चेतना और अधिकारों के स्वरूप में आए क्रमिक बदलावों का ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में मूल्यांकन।

5. गुणात्मक एवं तुलनात्मक शोध दृष्टिकोण :

साक्ष्यों का वैचारिक अनुशीलन तथा समकालीन स्त्री–विमर्श की अवधारणाओं के साथ प्रेमचंद के नारी–विषयक विचारों की प्रासंगिकता का तुलनात्मक अध्ययन।

परिणाम एवं विश्लेषण :

मुंशी प्रेमचंद के कथा–साहित्य का पाठ्य–केन्द्रित एवं समाजशास्त्रीय विश्लेषण करने के पश्चात निम्नलिखित मुख्य परिणाम एवं निष्कर्ष प्राप्त होते हैं :

1. नारी चेतना का क्रमिक विकास :

परिणाम सामने आता है कि प्रेमचंद के साहित्य में नारी चेतना एक स्थिर अवधारणा न होकर निरंतर विकासशील रही है।

- **प्रारंभिक दौर (सेवासदन, 1918) :** 'सुमन' के माध्यम से प्रेमचंद सामाजिक पाखंड और आर्थिक विवशता के विरुद्ध नैतिक प्रतिरोध दर्ज कराते हैं, जहाँ चेतना का रूप आत्म–सुधार और सामाजिक पुनर्वास तक सीमित है।
- **मध्यम दौर (निर्मला, 1927/कर्मभूमि, 1932) :** 'निर्मला' में जहाँ अनमेल विवाह का मूक–दहन है, वहीं 'सुखदा' और 'सोफिया' घर की चारदीवारी को लांघकर सामाजिक आंदोलनों और राजनीतिक सत्याग्रह का नेतृत्व करती हैं।
- **अंतिम दौर (गोदान, 1936) :** 'धनिया' और 'मालती' के रूप में नारी चेतना अपने चरमोत्कर्ष पर पहुँचती है। धनिया अशिक्षित होते हुए भी सामंती व धार्मिक शोषण के खिलाफ निडर होकर खड़ी होती है, वहीं मालती आर्थिक और मानसिक रूप से एक पूर्णतः स्वतंत्र आधुनिक नारी का प्रतिनिधित्व करती है।

2. आर्थिक स्वावलंबन : नारी स्वाधीनता की मूल शर्त :

विश्लेषण यह सिद्ध करता है कि प्रेमचंद ने नारी मुक्ति का सबसे मुख्य आधार उसकी आर्थिक स्वतंत्रता को माना।

'गबन' की जालपा जब तक पति की आय पर निर्भर थी, वह आभूषण–प्रेम और मानसिक पराधीनता से ग्रस्त थी। किंतु पति के गायब होने पर जब वह स्वयं काम करके ऋण चुकाती है, तब उसका स्वाभिमान और स्वावलंबन जागृत होता है।

'गोदान' में धनिया का चरित्र दिखाता है कि जो स्त्री उत्पादन और श्रम की प्रक्रिया में पुरुष के बराबर भाग लेती है, उसकी निर्णय लेने की क्षमता और अधिकार–चेतना अधिक प्रखर होती है।

3. सामाजिक कुरीतियों एवं व्यवस्थागत शोषण का पर्दाफाश :

समीक्षात्मक अध्ययन से यह परिणाम निकलता है कि प्रेमचंद ने केवल समस्याओं को चित्रित नहीं किया, बल्कि उनके मूल कारणों पर चोट की :

- **अनमेल एवं बेमेल विवाह :** प्रेमचंद ने दिखाया कि दहेज और आर्थिक मजबूरी के कारण होने वाले विवाह अंततः स्त्री के जीवन का दमन करते हैं।
- **नैतिकता के दोहरे मानदंड :** समाज पुरुष के अपराधों को क्षमा कर देता है, किंतु स्त्री के छोटे से भटकाव पर भी उसे वेश्यावृत्ति या बहिष्कार की ओर धकेल देता है। 'सेवासदन' इस दोहरे चरित्र का प्रत्यक्ष प्रमाण है।

4. समकालीन स्त्री–विमर्श से तुलनात्मक विश्लेषण :

पाश्चात्य स्त्री–विमर्श प्रेमचंद का नारी–विमर्श :

– मूल दर्शनपुरुष वर्चस्व से पूर्ण स्वतंत्रता और प्रतिस्पर्धा।	सह–अस्तित्व, समानता और पितृसत्तात्मक सोच का विरोध।
– सामाजिक संदर्भव्यक्तिगत अधिकारों और उच्छृंखलता पर बल।	पारिवारिक व सामाजिक दायित्वों के साथ अधिकारों का संतुलन।
– धरातल मुख्य रूप से मध्यमवर्गीयः शिक्षित वर्ग तक सीमित।	ग्रामीण, मजदूर, किसान और शोषित वर्ग की स्त्रियों से जुड़ा।

निष्कर्षत्मक विश्लेषण :

परिणामों से स्पष्ट है कि प्रेमचंद का नारी–दृष्टिकोण करुणा से शुरू होकर अधिकार–चेतना पर समाप्त होता है। वे नारी को 'देवी' या 'अबला' के दो छोरों पर रखने के बजाय एक साधारण, विचारशील और अपने अधिकारों के लिए संघर्ष करने में सक्षम 'मनुष्य' के रूप में स्थापित करते हैं। यही कारण है कि आज के आधुनिक स्त्री–विमर्श के युग में भी प्रेमचंद का साहित्य नारी स्वाधीनता के अध्ययन के लिए अत्यंत प्रासंगिक और दिशा–निर्देशक है।

निष्कर्ष :

विस्तृत अनुशीलन एवं विश्लेषण से यह स्पष्ट रूप से सिद्ध होता है कि मुंशी प्रेमचंद का कथा–साहित्य भारतीय समाज में नारी की वास्तविक स्थिति, उसके अधिकारों और स्वाधीनता की चेतना का एक प्रामाणिक एवं ऐतिहासिक दस्तावेज है। प्रेमचंद का नारी–विषयक दृष्टिकोण तत्कालीन समाज सुधार आंदोलनों की संकुचित सीमाओं को लांघकर एक आधुनिक, प्रगतिशील और न्यायसंगत स्त्री–विमर्श की नीव रखता है।

शोध के मुख्य निष्कर्षों को निम्नलिखित बिंदुओं के माध्यम से समेकाकृत किया जा सकता है :

- **मानवीय पहचान एवं समता :** प्रेमचंद ने नारी को 'देवी' के छद्म आभामंडल या 'अबला' की दयायाचक छवि से बाहर निकालकर उसे एक स्वतंत्र निर्णय लेने में सक्षम, स्वाभिमानी और अधिकारों से युक्त 'मनुष्य' के रूप में स्थापित किया।
- **आर्थिक स्वावलंबन का महत्त्व :** प्रेमचंद ने बहुत पहले ही यह पहचान लिया था कि नारी पराधीनता की जड़ उसकी आर्थिक निर्भरता में है। 'गबन' की जालपा और 'गोदान' की धनिया जैसे पात्र सिद्ध करते हैं कि आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर स्त्री ही अपने अधिकारों की रक्षा निडर होकर कर सकती है।

- **प्रतिरोध एवं नेतृत्व :** प्रेमचंद की नारियां केवल शोषण को चुपचाप सहने वाली मूक दर्शक नहीं हैं। वे 'सेवासदन' की सुमन की तरह सामाजिक पाखंड को चुनौती देती हैं और 'कर्मभूमि' की सुखदा व सोफिया की तरह राजनीतिक व सामाजिक आंदोलनों का कुशल नेतृत्व करती हैं।
- **मौलिक एवं व्यावहारिक स्त्री-विमर्श :** प्रेमचंद का नारीवाद किसी पाश्चात्य सिद्धांत का अंधानुकरण न होकर भारतीय सामाजिक यथार्थ, ग्रामीण जीवन और शोषित वर्ग (किसान–मजदूर) की धरातलीय समस्याओं पर आधारित है। वे अधिकारों के साथ–साथ सामाजिक व पारिवारिक दायित्वों के संतुलन के पक्षधर हैं।

यह कहा जा सकता है कि प्रेमचंद का साहित्य केवल बीते हुए युग की कहानियों का संग्रह नहीं है, बल्कि आज के आधुनिक स्त्री–सशक्तिकरण और जेंडर–इक्वेलिटी के दौर में भी उतना ही प्रासंगिक, प्रेरणादायी और मार्गदर्शक है। जब तक समाज में लिंग–आधारित विषमता और शोषण रहेगा, तब तक प्रेमचंद का नारी–विमर्श शोधकर्ताओं और समाज–सुधारकों के लिए एक महत्वपूर्ण विचार–बिंदु बना रहेगा।

भावी शोध हेतु सुझाव :

- **श्रमजीवी व ग्रामीण स्त्री-विमर्श पर विशेष अध्ययन :** प्रेमचंद के कथा–साहित्य में किसान और मजदूर वर्ग की स्त्रियों (जैसे– धनिया, बुधिया) के आर्थिक योगदान और उनके विशिष्ट अधिकारों पर पृथक रूप से शोध किया जा सकता है।
- **समकालीन स्त्री-विमर्श से तुलनात्मक विश्लेषण :** आधुनिक पाश्चात्य एवं भारतीय नारीवादी सिद्धांतों के परिप्रेक्ष्य में प्रेमचंद के नारी–दृष्टिकोण का अंतर–विषयी अध्ययन किया जाना चाहिए।
- **अन्य कथाकारों से तुलनात्मक अनुशीलन :** प्रेमचंद के नारी पात्रों की तुलना उनके समकालीन कथाकारों (जैसे–जैनेंद्र कुमार, अज्ञेय, यशपाल) के नारी पात्रों से करके नारी चेतना के क्रमिक विकास को समझा जा सकता है।
- **स्त्री पात्रों की भाषाई व संवादात्मक शैली का विश्लेषण :** प्रेमचंद के उपन्यासों में नारी पात्रों द्वारा प्रयुक्त भाषा, मुहावरों और उनके प्रतिरोध के स्वर का भाषा वैज्ञानिक अध्ययन किया जा सकता है।
- **नाट्य व सिनेमा रूपांतरण में नारी छवि का मूल्यांकन :** प्रेमचंद की कृतियों पर बनी फिल्मों व नाट्य रूपांतरणों में चित्रित नारी पात्रों के अधिकारों और स्वाधीनता के प्रस्तुतीकरण का अध्ययन किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :

- गोयनका, के. के. (1989). प्रेमचंद अध्ययन की नई दिशाएं. नेशनल पब्लिशिंग हाउस.
- गुप्त, जी. (2010). हिंदी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास. लोकभारती प्रकाशन.
- जोशी, इ. (2012). प्रेमचंद के उपन्यासों में नारी–चित्रण. अनामिका पब्लिशर्स.
- त्यागराजन, ए. (2015). हिंदी कथा–साहित्य में स्त्री–विमशर्ू प्रेमचंद के विशेष संदर्भ में. वाणी प्रकाशन.
- द्विवेदी, एच. (2004). हिंदी साहित्य की भूमिका. राजकमल प्रकाशन.
- पांडेय, एम. (2008). अनभै सांचा. वाणी प्रकाशन.
- पांडेय, एम. (2012). साहित्य का समाजशास्त्र. वाणी प्रकाशन.
- प्रेमचंद. (2015). कर्मभूमि. राजकमल प्रकाशन.

- प्रेमचंद. (2016). सेवासदन. भारतीय ज्ञानपीठ.
- प्रेमचंद. (2018). गोदान. हंस प्रकाशन.
- प्रेमचंद. (2020). निर्मला. लोकभारती प्रकाशन.
- राय, ए. (2005). प्रेमचंद : कलम का सिपाही. हंस प्रकाश.
- शर्मा, आर. (2005). प्रेमचंद और उनका युग. राजकमल प्रकाशन.
- सिंह, एन. (1982). दूसरी परंपरा की खोज. राजकमल प्रकाशन.
- श्री, जी. (1989). बिटवीन टू वर्ल्ड्स : एन इंटेलेक्चुअल बायोग्राफी ऑफ प्रेमचंद. ओरिएंट लोंगमेन.

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2026 Page No. : 76-80

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES PRINT RESEARCH JOURNAL

भारत–नेपाल सम्बन्ध : राष्ट्रीय सुरक्षा की वर्तमान स्थिति

सतीश कुमार दूबे
शोधार्थी, रक्षा एवं स्त्रातेजिक अध्ययन
गनपत सहाय पी. जी. कॉलेज, सुल्तानपुर।

एक राष्ट्रीय हित की प्रभावी सुरक्षा तथा इसका जो सतत अभिवर्धन है वह उस राष्ट्र के शक्ति से ही सम्भव है। इसी कारण से आज विश्व के सभी राष्ट्र अपने राष्ट्रीय शक्ति के विकास हेतु निरन्तर प्रयासरत रहकर राष्ट्रीय सुरक्षा व सम्प्रभुता के रक्षार्थ अपने सम्पूर्ण संसाधनों, क्यों न वे मूर्त [Tangible], अथवा अमूर्त [Intangible], के द्वारा निरन्तर तत्परता के साथ क्षेत्रीय हो या वैश्विक भू–राजनीति, स्त्रातेजिक परिदृश्य, निकटस्थ पड़ोसियों की सामरिक – संस्कृति व उभपक्षीय संबंधों की प्रकृति को ध्यान में रखकर सुरक्षा व विदेश नीति का निर्धारण करते हैं। उल्लेखनीय प्रमाणों से यह पता चलता है कि प्राचीन काल में देश की रक्षा का प्रमुख दायित्व शासकों व उनकी सेनाओं तक ही सीमित था, लेकिन आज के समय में तकनीक व वैज्ञानिक अनुसंधान, राष्ट्र–राज्य की संकल्पना, राष्ट्रो के मध्य उत्पन्न पारस्परिक निर्भरता व विश्व–समाज में आये सामाजिक परिवर्तन तथा उनकी सन्निकटता के कारण राष्ट्रीय सुरक्षा के आयाम, परिवर्तन के दौर से गुजर रहे हैं। अब यह अन्तर्राष्ट्रीय चिन्ता व चिन्तन का गुरुत्वीय केंन्द्र का तत्व बन गया है। यह सत्य है कि आज सक्रिय विदेश नीति का निर्धारण कर अपने आन्तरिक नीतियों, उसकी स्वायत्तता व सम्प्रभुता को अछुता रखना ही समस्त राष्ट्रों का सबसे बड़ा व प्राथमिक राष्ट्रहित है। विदेश नीति का सबसे बड़ा लक्ष्य राष्ट्रहित का संरक्षण ही ही है और विदेश नीति व राजनय के सामरिक पक्ष पर बल देने का तात्पर्य है कि देश की एकता व अखण्डता को सुरक्षित रखकर उस क्षेत्रा उस क्षेत्र की स्पष्ट पहचान और अलग निजी अस्तित्व को एक ऐसे क्षेत्र के रूप में दर्शाया जा सके जहाँ उसकी संप्रभुता में कोई राज्य हस्ताक्षेप न कर सके।

अन्य शब्दों में "किसी भी देश की विदेश नीति उसकी आन्तरिक नीतियों का ही अन्तर्राष्ट्रीय परिदृश्य में प्रतिविम्बित प्रक्षेप होती है।'[2] सुरक्षा के अन्तर्गत समाहित विभिन्न कारक यथा–भौगोलिक, आर्थिक, वैज्ञानिक अनुसंधान, तकनीक, सैन्य–सामर्थ्य, विचारधारा, नेतृत्व : राष्ट्रीय मनोबल, राष्ट्रीय चरित्र, नेतृत्व व सांस्कृतिक पक्ष आदि सम्मिलित रूप से एक प्रभावशाली राष्ट्रीय शक्ति का सृजन करके अन्त में राष्ट्र की विदेश नीति के निर्धारण, व उनके प्रकृति व स्वरुप को तय करते हैं। डॉ० महेन्द्र कुमार का मत है कि "अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में शक्ति की भूमिका की तुलना हाट अर्थव्यवस्था में धन की भूमिका से करते हुए बताया है कि 'धन और शक्ति की प्राप्ति मात्र से ही राष्ट्रीय लक्ष्यों की पूर्ति नहीं हो सकती। अतएव, शक्ति/धन का उपयोग मात्र साध्य के रूप

में न करके साधन के रूप में करके राष्ट्रीय हितों की पूर्ति सुनिश्चित करने की वांछित कोशिश प्रत्येक राष्ट्र को करनी चाहिए। बाह्य स्रोतों से उत्पन्न होने वाले विभिन्न खतरों के अतिरिक्त बदल रही सामाजिक व आर्थिक, सामरिक व अन्य परिस्थितियों के फलस्वरूप राष्ट्रों के आन्तरिक सुरक्षा की अवधारणा न केवल जटिल स्वरूप ग्रहण कर रही है, अपितु उसकी संकल्पना व आयाम भी तेजी गति के साथ परिवर्तन प्रक्रिया के दौर से गुजर रहे हैं। चाहे समाज में होने वाले आर्थिक अस्थिरता हो, तकनीकी परिवर्तन हो, जनसंख्या वृद्धि हो, गरीबी, बेरोजगारी, शहरीकरण का विस्तार, रोग, पर्यावरणीय ह्रास, राजनैतिक अस्थिरता, ऊर्जा व संसाधना का क्षरण, अप्रभावी शासन हो चाहे आन्तरिक परिवर्तन आदि कारणों से राष्ट्रों का सुरक्षा तंत्र न केवल अस्थिर हो रहा है। अपितु वैश्वीकरण, नाभिकीय शस्त्र–प्रसार मादक द्रव्यों की तस्करी एवं छोटे हाटीयारों के प्रसार जैसी गतिविधियों इंसरजेंसी, आतंकवाद, मादक द्रव्यों सुरक्षा के लिए गम्भीर चुनौती बनती जा रही है।

अन्तर्राष्ट्रीय सुरक्षा प्रणाली से संलग्न बड़े राष्ट्रों का उत्तरदायित्व न केवल बढ़ता जा रहा है अपितु नई शीत युद्ध की संभावनाओं को भीनमा आयाग मिलने की प्रबल संभावनाएं हैं।

भारत–नेपाल गुरूत्वीप केन्द्रित महत्वपूर्ण क्षेत्रीय रणनीतिक आयाम :

हिमालमी क्षेत्र में स्थित भारत–चीन के मध्य स्थित स्थल आवास [Land loked] व विश्व का एक मात्र हिन्दू राष्ट्र अब 2008 से प्रजातांत्रिक व धर्मनिरपेक्ष नेपाल, भारत व चीन के मध्य ऐसा अन्तस्थ क्षेत्र है, जो की शीत युद्ध के दौरान क्षेत्रीय रणनीतिक व भू–राजनैतिक दृष्टि से भारत की सुरक्षा में एक ज्वलन्त तत्व बना हुआ है। तकरीबन 1,47, 141 वर्ग किमी० क्षेत्र में विस्तृत नेपाल का अधिकतर क्षेत्र बनों से घिरा हुआ है तथा एकमात्र नेपाल की राजधानी काठमाण्डू व नदियों की घाटियाँ ही कृषि योग्य हैं। यहाँ की जनसंख्या तकरीबन पचास प्रतिशत हिन्दूओं की है तथा शेष लगभग बौद्ध धर्मावलंवियों की है। भारत व चीन के मध्य स्थित अन्तस्थ राज्य [Buffer State] की अवस्थिति ही उसका उत्तरदायित्व एवं सम्पत्ति [Liability and Asset] है। एस० डी० मुनि के शब्दों में, 'आर्थिक, राजनैतिक व सैन्य मामलों में नेपाल अपनी अवस्थिति के कारण भारत पर निर्भर तो है लेकिन साथ ही दोनों के सामाजिक–सांस्कृतिक बन्धन उन्हें पारस्परिक सन्निकटता हेतु विवश करते हैं। इस क्षेत्र के हिमालयी सीमान्त की भू–राजनीतिक परिस्थितियाँ स्वाधीनता के पश्चात भारत के लिए चिंता का विषय बन गयी इस क्षेत्र के भू–राजनीतिक महत्ता पर प्रकाश डालते हुए सन् 1963 में प० नेहरू ने स्पष्ट कहा था कि – If it is breached, the way to the Indian plains and Ocean beyond would lie Exposed, and the threat to India, would then, likewise, be a threat to the other Countries of South and South-East Asia. India's determination to resest aggressions and retain her territoral integrity is, therefore, a vital factor in the Safeguarding of Peace and stability this whole area....."

भावार्थ – 'यदि इसे तोड़ा जाता है, तो भारतीय मैदानों और महासागरों का रास्ता खुला रह जाएगा, और भारत के लिए जो खतरा होगा, वह दक्षिण और दक्षिण–पूर्व एशिया के अन्य देशों के लिए भी खतरा होगा। इसलिए, आक्रमण का प्रतिरोध करने और अपनी क्षेत्रीय अखण्डता बनाये रखने का भारत का ह्रढ़ संकल्प इस पूरे क्षेत्र में शांति और स्थिरता की रक्षा के लिए एक महत्वपूर्ण कारक है।

इस हिमालयी क्षेत्र की सुरक्षा भारत की प्राथमिकताओं में से एक रही है जिसमें, भूटान, नेपाल व सिक्किम

(16 may 1975 से संघ में प्रवेश कर भारत का अभिन्न अंग) प्रमुख रहे हैं। फरवरी 1951 में नार्थ–ईस्टर्न बार्डर डिफेंस कमेटी से प्राप्त रिपोर्टों के परिप्रेक्ष्य में भारत सरकार ने रक्षा ढाचें पर विशेष बल दिया। अगर हम उत्तरी व पूर्वोत्तर सीमान्त की सुरक्षा पर बात करें, तो चीनी प्रभुत्व विस्तार की शंकाओं से चिन्तित होकर प० नेहरू ने न केवल नेपाल की यात्रा की अपितु भारतीय संदर्भ में 17 मार्च 1950 को यह घोषणा की कि नेपाल के साथ भारत एक सैन्य सन्धि करने की दशा में कदम उठा रहा है, क्योंकि भारत के उत्तरी सीमान्त की सुदृढ़ रक्षा के लिए एक सुदृढ़ व सशक्त नेपाल महत्वपूर्ण कारक है। नेहरू का मत था कि हम नेपाल सहित भारतीय उपमहाद्वीप में किसी भी विदेशी आक्रमण को सहन नहीं कर सकते क्योंकि अगर ऐसा हुआ, तो भारत की सुरक्षा पर उसके दूरगामी प्रभाव पड़ेंगे। पं० नेहरू का मत था कि –"We can not risk on own Security by any thing not does in Nepal which permits either that barrier to be crossed or otherwise leads to the weakenning of our forntiers."

भावार्थ – 'हम नेपाल में किसी भी ऐसी चीज के माध्यमसे अपनी सुरक्षा को जोखिम में नहीं डाल सकते हैं जो या तो उस बाधा को पार करने की अनुमति देती है या अन्यथा हमारी सीमाओं को कमजोर करती है।' यही कारण है कि भारत ने 31 July 1950 को नेपाल के साथ 'शान्ति व मैत्री संधि' पर हस्ताक्षर किया। अगर हम सही मायने में देखें तो भारत व नेपाल के मध्य 'रोटी व बेटी' का सम्बन्ध रहा है। इन संबंधों की सांस्कृतिक व आर्थिक समृद्धता के आधार पर स्वाधीन भारत ने हमेशा अपने पड़ोसी देश नेपाल के संग संबंधों का आदर किया और इस मित्रता को निभाने का हर संभव प्रयास किया है। लेकिन नेपाल ने चतुराई व सतर्कता का परिचय देते हुए भारत के विरोध में चीन के साथ मिलकर 'चीन कार्ड' का उपयोग करने में तनिक संकोच नहीं किया और नेपाल ने चीन के प्रभाव में आकर भारत–नेपाल की खुली सीमाओं का सदैव उल्लघन किया है।

भारत के लिए चिन्ता की बात यह है कि, नेपाल आई० एस० आई० व चीनी विचारधारा को अपने भूमि पर विस्तार रुप में आकार दिया है। जोकि नेपाल स्वयं अपने विछाये हुए इस जाल में फंसकर खुद ही आहत हुआ है। अगर हम शीत युद्ध के बाद की चर्चा करें, तो दक्षिण एशिया की जियोपॉलिटिक्स (भू–राजनीतिक) व रणनीतिक यथार्थता को स्वीकार करते हुए नेपाल को भारत के साथ अपने विदेश नीति का व्यवहारिक संचालन सदैव उसके हित में हैं। यद्यपि भारत और नेपाल के मध्य की सीमा का कोई अधिकारिक नाम नहीं है। इसको केवल भारत–नेपाल सीमा के नाम से जाना जाता है। 1816 की एक संधि जिसको हम सुगौली (बिहार राज्य में स्थित सुगौली नामक स्थान) संधि के नाम से जानते हैं। इस संधि ने भारत–नेपाल सीमा को परिभाषित किया। जिसमें शारदा नदी (जिसे महाकाली नदी भी कहा जाता है। पश्चिमी क्षेत्र में सीमा का एक हिस्सा है। यह सीमा जिसकी लम्बाई 1751 किलोमीटर की है। यह सीमा 5 (पाँच) भारतीय राज्यों से होकर गुजरती है। जो निम्न हैं : उत्तराखण्ड, उत्तर प्रदेश, बिहार, पश्चिम बंगाल और सिक्किम आदि। चीन को इस बात का पूर्ण आभास है कि नेपाल उसके लिए तिब्बत–प्रश्न व व्यापार क्षेत्र में मित्र बनकर कुछ सीमा तक सहायता देने की स्थिति में हैं।

अगर हम दोनो की पारस्परिक मित्रता से जहाँ एक ओर तिब्बती विद्रोहियों के लिए नेपाल के भूमि के इस्तेमाल की संदेह जनक स्थिती निर्मूल होगी वही उसके साथ वाणिज्यिक निकटता से भारत पर उसकी निर्भरता को भी धीरे–धीरे शिथिल करके हिमालयी क्षेत्र में भू–राजनीतिक पर्यावरण को भी अपने पक्ष में किया जा सकेगा।

यदि हम बीते सालों को पड़ताल करें, तो नेपाल में, नेपाल की राजशाही समर्थक पार्टी ने प्रधानमंत्री के आवास के सामने विरोध प्रदर्शन किया है और हिन्दू राज्य की मांग की है।

प्रेस ट्रस्ट ऑफ इंडिया काठमांडू' के अनुसार नेपाल में सैकड़ो असंतुष्ट राजशाही समर्थक पार्टी के सदस्यों ने विरोध प्रदर्शन करते हुए देश में पुनः से राजशाही की बहाली तथा हिमालयी राष्ट्र नेपाल को एक हिन्दू राज्य के रूप में स्थापित करने की मांग की गई। वहीं राष्ट्रीय प्रजातंत्र पार्टी (आरआरपीपी) के तकरीबन 1500 समर्थकों ने विजुलीबाजार बनेश्वर क्षेत्र में जमा हुए और उन्होनें Down with Republikan. System" (गणतंत्रवाद मुर्दाबाद) और " We want monarchy back" (हम राजशाही चाहते हैं) और "Establish Nepal as a Hindu state" नेपाल को एक हिन्दू राज्य के रूप में स्थापित करो के नारे लगाये और विरोध प्रदर्शन किया। यह विरोध प्रदर्शन 21 April 2025 को हो रहा था कि बीते चार महीनों के दौरान बाद 5वें महीने में 8 September 2025 को सरकार के द्वारा एक बड़ा फैसला लिया गया। नेपाल सरकार ने बड़े मीडिया प्लेटफॉर्म पर कड़ी पाबंदी लगा दी। यह जो विरोध प्रदर्शन अभी शांति से चल रहे थे कि मीडिया प्लेटफॉर्म पर पाबंदी के कारण जनता जनार्दन में अंशांति होने से हिंसक पदर्शन शुरु हो गया, जिसमे कम से कम 19 लोगों की मौत हुई और तकरीबन 400 से अधिक लोगों घायल हो गये। इसी के बाद आक्रोशित जनता संसद परिसर में घुसना और नेताओं के घरों को निशाना बनाना शुरु कर दिया। इसी के बाद प्रदर्शन कारियों के चलते राजधानी काठमांडू सहित अन्य शहरों में कर्फ्यू लगा दिया।

इसकी वजह 4 September को सरकार you tube, X, Facebook, whatsApp, Instagram ऐसे–ऐसे लगभग 26 सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म पर प्रतिबंध लगाना था। इसी में एक मामला सामने आया जब संचार और सूचना प्रौधोगिकी मंत्रालय ने एक सार्वजनिक सूचना जारी करते हुए कहा कि 'नेपाल टेलीकम्युनिकेशन अथॉरिटी को आदेश दिया है कि वे सभी पंजीकृत सोशल मीडिया साइटों को तब तक निष्क्रिय कर दें, जब तक कि वे पंजीकृत न हो जाए। सरकार की जनता के प्रति यही सठपन नीति (Ignorant/corrupt Policy) राष्ट्र में बहुत बड़े परिवर्तन का कारण बनी। अन्ततोगत्वा नेपाल की राष्ट्रीय स्वतंत्र पार्टी (RSP) युवाओं के नेता के रूप मे बालेन्द्र शाह को नेपाल का प्रधानमंत्री चुना।

संदर्भ–ग्रंथ सूची :

- गुप्ता, आर. जी. 'भारत और नेपाल : द्विपक्षीय संबंध, नई दिल्ली : प्रकाशन संस्थान।
- सुब्बा, सी. एस. — India-Nepal Relations : Problems and Prospects, नई दिल्ली : Concept Publishing Company।
- कुमार, संजय – भारत–नेपाल संबंध एवं दक्षिण एशियाई राजनीति, नई दिल्ली : अनमोल पब्लिकेशन्स।
- Koirala, B. P. — Nepal and India : Relations and Reflections, काठमांडू : विभिन्न संकलन / प्रकाशन।
- Rose, Leo E. — Nepal : Strategy for Survival, Berkeley : University of California Press.
- Muni, S. D. — India and Nepal : A Changing Relationship, नई दिल्ली : National Publishing House.

- Rana, P. S. J. B. — Nepal-India Relations : New Perspectives, काठमांडू : Centre for Economic Development and Administration.
- Ministry of External Affairs, Government of India — India-Nepal Bilateral Relations, नई दिल्ली : भारत सरकार।
- Aljazeera
- The Hindu.

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2026 Page No. : 81-87

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES PRINT RESEARCH JOURNAL

The Role of Online Customer Reviews in Building Consumer Trust in Indian E-Commerce : A Review-Based Study

Dr. Priya Jain

Assistant professor (Commerce)

PMCoE Shri Atal Bihari Vajpayee .Govt Arts and Commerce College Indore M.P.

Abstract :

Online customer reviews have become a primary source of product and seller information for consumers who cannot physically inspect goods before purchase, particularly in Indian e-commerce, where marketplaces bring together sellers of varying reliability and buyers with different digital experience. This paper synthesises published research on the relationship between review characteristics and consumer trust, asking under what conditions reviews strengthen or weaken that trust rather than assuming a simple positive link. Drawing on the information adoption framework, the review integrates literature on review credibility, usefulness, and perceived risk, and considers evidence on fake and manipulated reviews. The synthesis indicates that trust depends less on review volume or average rating than on perceived credibility, specificity, and platform transparency, and closes with practical implications for Indian sellers and marketplaces seeking more trustworthy review systems.

Keywords :

Online customer reviews; Consumer trust; Indian e-commerce; Electronic word of mouth; Review credibility; Perceived risk

Introduction :

When a consumer buys a garment or an appliance online, she cannot touch the fabric or test the motor before paying. This absence of direct inspection is what gives online customer reviews their importance: they are among the few sources of information not controlled by the seller. A product description is written by the party with an interest in the sale; a review, in principle, is written

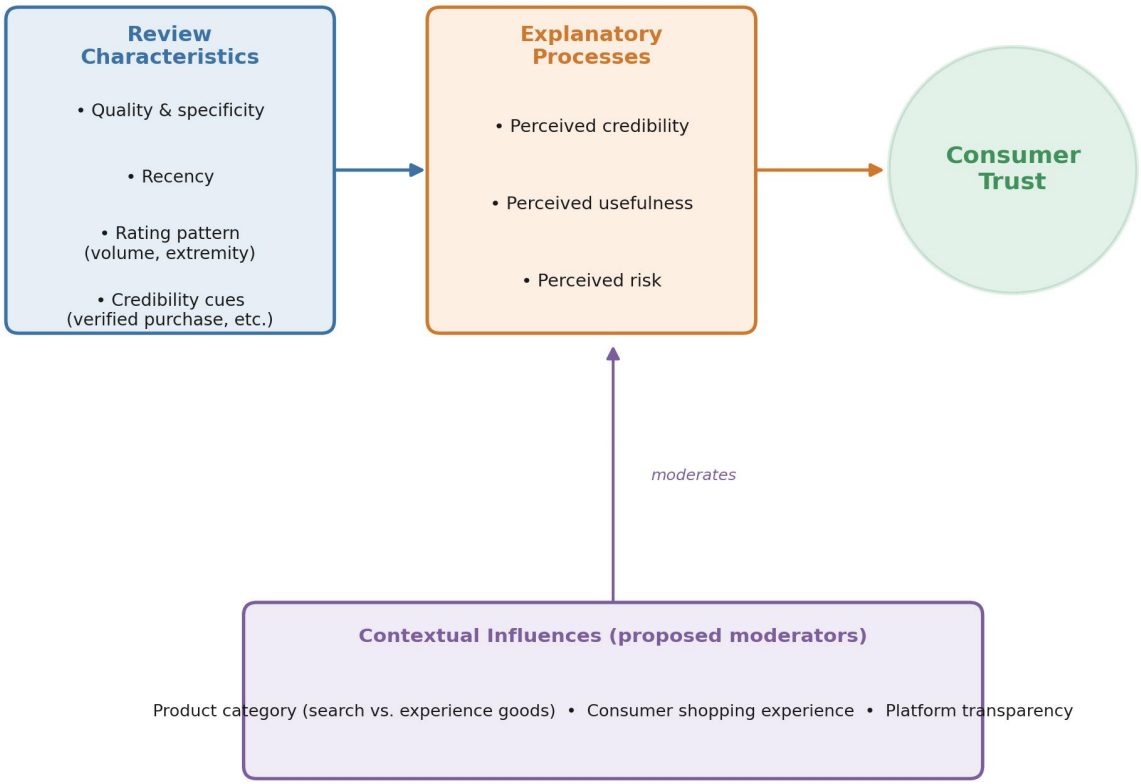
by someone with no further stake in persuading anyone else. This is central to why reviews matter for commerce and for buyer-seller relationships that may never involve direct interaction. In India's marketplace ecosystem this is complicated by wide variation in seller reliability, product categories from unbranded electronics to daily groceries, and buyers who differ in familiarity with online shopping. Reviews are often treated as a simple quality signal, where more reviews or a higher rating is assumed to translate directly into buyer confidence. This paper questions that assumption, asking which review characteristics are associated with consumer trust, how authenticity concerns affect trust in reviews, sellers, and platforms, and what Indian e-commerce businesses can do to make review systems more trustworthy.

Literature Review and Conceptual Foundation :

Online customer reviews are a form of electronic word of mouth (eWOM) : consumer-generated statements about a product or seller, made available to other buyers through a digital platform (Cheung & Thadani, 2012). Two components are usually distinguished: the numerical rating, a compressed signal, and the written content, which carries more specific information but costs more to process. Trust itself needs unpacking a reader may trust the reviewer's honesty, the seller's ability to deliver, or the platform's capacity to police fraud, and a review can strengthen one while leaving another unaffected. Consumer trust is conceptually separate from purchase intention and actual purchasing behaviour. The primary conceptual lens used here is the information adoption model, which holds that perceived usefulness mediates whether a receiver adopts a message, shaped jointly by message quality and source credibility (Sussman & Siegal, 2003).

A detailed review from an untraceable source may thus be judged less useful than a shorter one from a verified reviewer. Mudambi and Schuff (2010) found review depth and moderate, rather than extreme, ratings associated with greater helpfulness, differing between search goods, easy to verify in advance, and experience goods, which require actual use. Filieri (2015) extended this with a diagnosticity–adoption framework, in which consumers weigh both informational content and normative cues such as how many readers found a review helpful. Together, these studies show helpfulness, and by extension trust, is a function of specific review qualities, not review presence alone. Perceived risk is a complementary lens : consumers weigh reviews more heavily when the cost of a wrong decision is higher. A moderate gap follows, since most foundational studies used Western platforms, and how well their findings hold in a market with extensive price competition and diverse digital literacy, as in India, is not yet well established.

Figure 1. Proposed Links Between Online Review Characteristics and Consumer Trust



Note. Arrows represent relationships proposed by the reviewed literature, not an empirically tested causal model.
Original synthesis prepared for this manuscript, informed by Sussman & Siegal (2003), Mudambi & Schuff (2010), Filieri (2015), and Park, Lee & Han (2007).

Figure 1. Proposed Links Between Online Review Characteristics and Consumer Trust. This is a conceptual synthesis of the reviewed literature, not an empirically tested causal model. Original diagram prepared for this manuscript, informed by Sussman & Siegal (2003), Mudambi & Schuff (2010), Filieri (2015), and Park, Lee & Han (2007). Alt text: Flow diagram showing review characteristics leading through explanatory processes (perceived credibility, usefulness, perceived risk) to consumer trust, moderated by contextual influences.

Review Methodology :

This paper follows a critical narrative review approach rather than a systematic review or meta-analysis; no formal screening protocol such as PRISMA was applied. Sources were identified through Google Scholar and publisher databases, using combinations including "online customer reviews" AND "consumer trust" AND India, "electronic word of mouth" AND "Indian e-commerce," "review credibility" AND "online shopping," and "fake reviews" AND "consumer trust." The search prioritised peer-reviewed articles, retaining foundational studies where they remain the primary reference for a concept and prioritising recent work on manipulation. Sources were included where the full text or a detailed abstract was accessible and the study addressed review characteristics,

credibility, or trust in online retail; unrelated domains such as restaurant reviews were excluded. No subscription database such as Scopus or Web of Science was accessed. Retained sources were grouped thematically into review content, rating and volume effects, authenticity and manipulation, and the Indian context. This is a selective, not exhaustive, narrative review.

Thematic Findings and Discussion :

- ***Review Content and Diagnostic Value :***

The written content of a review carries information a star rating alone cannot. Reviews describing specific conditions of use let a reader judge relevance to their own situation in a way generic praise does not. Mudambi and Schuff (2010) found such depth associated with greater perceived helpfulness, particularly for search goods whose attributes can be verified against a specification. Recency matters similarly, since products and seller practices change over time. Photographs and videos are often treated as stronger evidence than text, but should not be assumed automatic proof of authenticity, as the manipulation literature below shows.

- ***Ratings, Review Volume, and Mixed Feedback***

Average ratings and review counts are the most visible signals on a product page and are often treated as the main indicator of quality, but the literature suggests a more qualified picture. Park, Lee, and Han (2007) found both review quality and quantity influenced purchase intention, with their relative weight depending on consumer involvement: volume mattered more for low-involvement decisions, quality more for high-involvement ones. Popularity and informational credibility are therefore related but not identical. Many consistent reviews may indicate genuine consensus, but reviews contradicting one another complicate a reader's decision. Negative reviews cannot be assumed to uniformly damage trust; a few specific, plausible complaints with a constructive seller response can signal an honestly functioning system, whereas no negative feedback at all can itself raise suspicion.

- ***Authenticity, Manipulation, and Platform Trust***

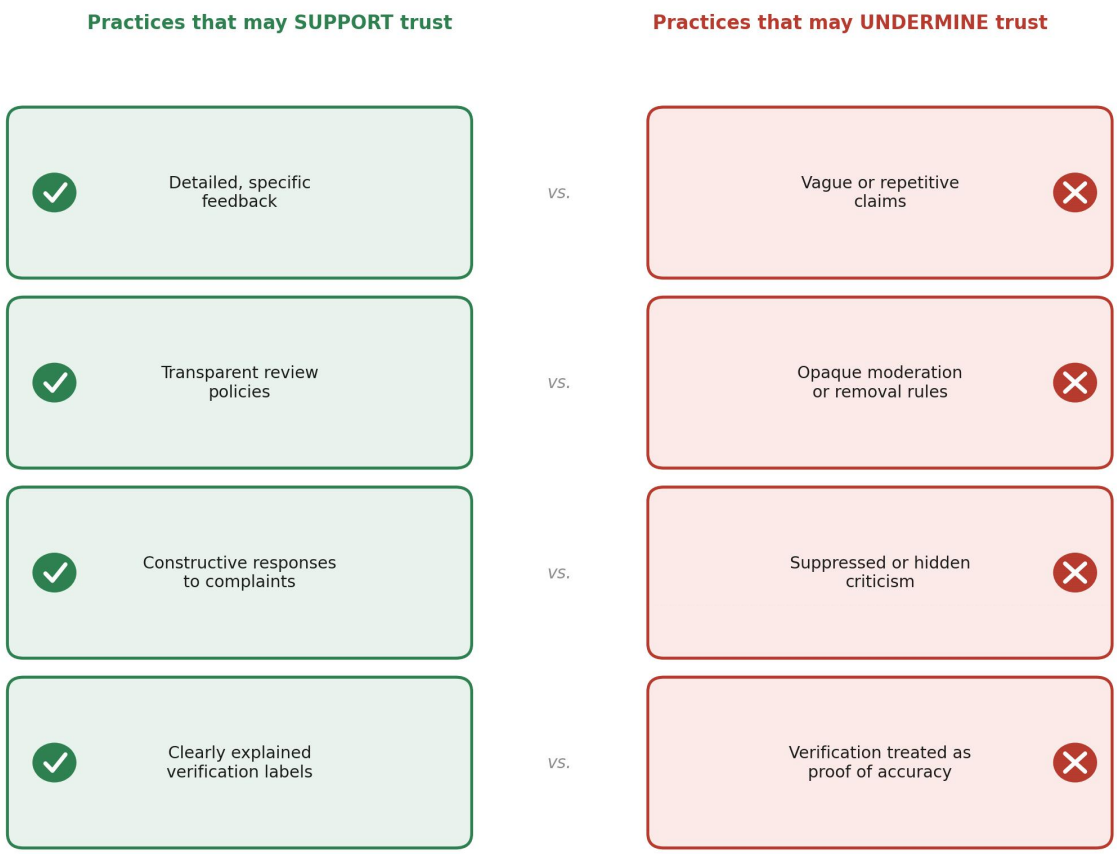
Review credibility cannot be assessed apart from the possibility that some reviews are not genuine. Luca and Zervas (2016), studying Yelp, found businesses under more competitive pressure more likely to have suspicious reviews filtered by the platform's fraud-detection system, indicating review fraud responds to competitive incentives. He, Hollenbeck, and Proserpio (2022) traced a market for fake reviews bought through private online groups and found a short-term rise in ratings and review counts, with a causal effect on sales isolated through a temporary enforcement change; ratings fell after firms stopped buying fake reviews, particularly for newer products, suggesting manipulation concentrated among lower-quality offerings. These findings do not establish prevalence on any Indian marketplace specifically, but the underlying incentive structure is not unique to one

market. Verified-purchase labels address one concern, that a reviewer did not buy the product; they do not establish a review is unbiased or accurate. Transparency about how reviews are collected and moderated lets a reader distinguish platform trust from trust in any one review.

- ***The Indian Context and Limits of Existing Evidence***

Much of the empirical literature on review credibility comes from Western platforms; studies on Indian e-commerce specifically remain limited by comparison. Mishra and Satish (2016), reviewing eWOM literature from an Indian setting, note that drivers identified internationally provide a starting base, while domain-specific validation in emerging-market retail remains an area for further work. Several India-specific considerations plausibly extend the findings above, though evidence varies in strength: language diversity limits a review's usefulness across readers, digital literacy shapes how ambiguous signals are read, and the search-versus-experience distinction is plausibly relevant across India's varied categories, though comparative evidence within Indian marketplaces is sparse. This review does not support claims about rural buyers, age cohorts, or income groups.

Figure 2. Review-System Practices That May Support or Undermine Consumer Trust



Note. Comparisons synthesise recurring themes in the reviewed literature (e.g., Mudambi & Schuff, 2010; Luca & Zervas, 2016; He, Hollenbeck & Proserpio, 2022). No signal listed here is a definitive individual test of whether a review is genuine; no percentages, scores, or platform comparisons are implied. Original graphic prepared for this manuscript.

Figure 2. Review-System Practices That May Support or Undermine Consumer Trust. Original comparison graphic prepared for this manuscript, synthesising evidence from Mudambi & Schuff (2010), Luca & Zervas (2016), and He, Hollenbeck & Proserpio (2022). No individual signal shown here is a definitive test of review authenticity, and no data points or percentages are implied. Alt text: Two-column comparison contrasting review-system practices likely to support consumer trust with practices likely to undermine it.

Managerial Implications :

The reviewed evidence points to several practical directions for Indian sellers and platforms. Requesting honest feedback without making rewards conditional on a positive rating preserves the value that distinguishes a review from an advertisement. Review policies should be written in plain language, with verification labels explained clearly enough that readers do not mistake "verified purchase" for a guarantee of accuracy. Legitimate criticism should be preserved rather than removed, since no negative content at all can itself undermine trust; complaints answered constructively do more for confidence than removal would. Sellers who treat recurring complaints as signals for improvement are likely to see that reflected in later reviews. Accessible reporting mechanisms for suspected manipulation, and support for review content across buyers' languages, extend these benefits. None of this guarantees higher sales; its relevance lies in buyer confidence, seller credibility, and the repeat engagement that depends on customers believing the information they receive.

Limitations and Future Research :

This review has limitations that should qualify how its conclusions are used. Coverage is selective rather than exhaustive and depends entirely on secondary evidence. Included studies measure trust and helpfulness differently, limiting how precisely findings compare, and results from one platform or country may not transfer cleanly to another. There is also a possibility of publication and language bias, since English-language, indexed studies are more easily located than work published elsewhere, and marketplace practices change quickly enough to date findings fast. Future research could examine how reviews in different Indian languages are interpreted by non-fluent readers, and compare stated purchase intentions with subsequent actual behaviour.

Conclusion :

This review asked under what conditions online customer reviews strengthen or weaken consumer trust in Indian e-commerce, rather than assuming more reviews or higher ratings automatically produce greater confidence. The evidence suggests a qualified answer: reviews support trust when perceived as credible, specific, and relevant to the reader's situation, and when the hosting platform is transparent about how reviews are collected, verified, and moderated. Volume and average

rating alone are weaker signals than review depth, recency, and consistency, and growing research on fake reviews means authenticity concerns cannot be treated as marginal. Trust in a review, a seller, and a platform are related but distinct; building one does not automatically build the others. For Indian e-commerce, where sellers and buyers are unusually diverse, credible reviews and transparent marketplace practices are mutually dependent, neither substituting for the other.

References :

- Cheung, C. M. K., & Thadani, D. R. (2012). The impact of electronic word-of-mouth communication: A literature analysis and integrative model. Decision Support Systems, 54(1), 461–470. https://doi.org/10.1016/j.dss.2012.06.008
- Filieri, R. (2015). What makes online reviews helpful? A diagnosticity-adoption framework to explain informational and normative influences in e-WOM. Journal of Business Research, 68(6), 1261–1270. https://doi.org/10.1016/j.jbusres.2014.11.006
- He, S., Hollenbeck, B., & Proserpio, D. (2022). The market for fake reviews. Marketing Science, 41(5), 896–921. https://doi.org/10.1287/mksc.2022.1353
- Luca, M., & Zervas, G. (2016). Fake it till you make it: Reputation, competition, and Yelp review fraud. Management Science, 62(12), 3412–3427. https://doi.org/10.1287/mnsc.2015.2304
- Mishra, A., & Satish, S. M. (2016). eWOM: Extant research review and future research avenues. Vikalpa: The Journal for Decision Makers, 41(3), 222–233. https://doi.org/10.1177/0256090916650952
- Mudambi, S. M., & Schuff, D. (2010). What makes a helpful online review? A study of customer reviews on Amazon.com. MIS Quarterly, 34(1), 185–200. https://doi.org/10.2307/20721420
- Park, D.-H., Lee, J., & Han, I. (2007). The effect of on-line consumer reviews on consumer purchasing intention: The moderating role of involvement. International Journal of Electronic Commerce, 11(4), 125–148. https://doi.org/10.2753/JEC1086-4415110405
- Sussman, S. W., & Siegal, W. S. (2003). Informational influence in organizations: An integrated approach to knowledge adoption. Information Systems Research, 14(1), 47–65. https://doi.org/10.1287/isre.14.1.47.14767

Mob. No. - 6265899910

Mail ID - 844pjain@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2026 Page No. : 88-93

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES PRINT RESEARCH JOURNAL

बौद्धधर्म में प्रतीक महिमा

चुडासमा जयेशकुमार आठमभाई
शोधार्थी, इतिहास विभाग,
महाराजा कृष्णकुमारसिंहजी भावनगर यूनिवर्सिटी, भावनगर (गुजरात)

सारांश :

भारतीय इतिहास मे प्राचीन काल से बौद्धधर्म का बड़ा महत्व रहा है। महात्मा गौतम बुद्ध के विचार और बोधपाठ का लोकजीवन मे बड़ा प्रभाव रहा है, जिसके कारण सम्पूर्ण एशिया खंड में बौद्ध धर्म एक ज्योतिपुंज की तरह बना रहा है। प्रारंभ मे लोग ईश्वर के निराकार स्वरूप को मानते थे, एसलिए ईश्वर को प्रकृति के स्वरूप मे देखते थे। उस समय बौद्धधर्म मे प्रतीक चिह्न की समाज मे बड़ी महिमा रही थी। लोग बौद्ध प्रतीक की पूजा–अर्चना किया करते थे। कालान्तर मे बौद्ध धर्म का देश–विदेश में व्यापक प्रचार के एक माध्यम के रूप में बौद्ध धर्म में मूर्तिकला की शुरुआत हुई। लोग ईश्वर स्वरूप महात्मा बुद्ध के मनुष्य आकार को पुंजने लगे और देश विदेशं में धर्म प्रचार किया गया। मथुरा और नागर शिल्प शैली का व्यापक विकास हुआ। लेकिन शिल्प का विकास होने पर भी बौद्ध प्रतीक की महिमा लोकजीवन में बिल्कुल भी कम नहीं हुई। आज के समय मे बौद्ध प्रतीक का अभ्यास करना और उसकी महत्ता को जानकार अपने जीवन मे महात्मा बुद्ध के आदर्श गुण और मानवीय मूल्यों का संचार करने का पवित्र ध्येय इस संशोधन लेख का रहा है।

प्रमुख शब्द :

बौद्धधर्म में प्रतीक, बुद्ध, धर्मचक्र, बोधिवृक्ष, स्तूप, पदचिह्न, कमल, त्रिरत्न, स्वस्तिक, भिक्षापात्र, वज्र, सिंह, हाथी, घोड़ा, बैल, मृग, मयूर, शंख, छत्र, कलश, दीपक, धम्म, निर्वाण, करुणा, मैत्री, अहिंसा, प्रज्ञा, शील, समाधि, बुद्धत्व, बोधिसत्त्व, जातककथाएँ, प्रतीकपूजा, प्रतीकात्मक कला, मूर्तिपूर्व बौद्ध कला, गांधार कला, मथुरा कला, अमरावती कला, बौद्ध स्थापत्य, चौत्य, विहार, स्तूपवास्तु, तोरण, रेलिंग, अशोकचक्र, सिंहस्तंभ, बुद्धचरित, आध्यात्मिक प्रतीक, नैतिक प्रतीक, सांस्कृतिक प्रतीक, धार्मिक प्रतीक, प्रतीकों का ऐतिहासिक महत्व, प्रतीकों का दार्शनिक महत्व, प्रतीकों का सामाजिक महत्व, प्रतीकों का सांस्कृतिक प्रभाव, भारतीय कला पर प्रभाव, एशियाई बौद्ध कला, प्रतीकों की सार्वभौमिकता।

(१) प्रास्ताविक :

बौद्ध प्रतीकों का उद्‌भव कई रीतियों से हुआ। कलानिधियों में कल्याण एवं आरक्षा की भावना से प्रेरित अनेक मांगलिक प्रतीकों का सर्जन हुआ। इस बौद्ध प्रतीकों में बोधिवृक्ष, बुद्धपद, पद्‌म, त्रिरत्न, कलश, हस्ति, चक्र, श्रीवत्स, स्वस्तिक, पञ्‌चांगुलॉक, मीनमिथुन, शालभंजिका, दोहद, शंख, सूर्य, चन्द्र, अश्व, छत्र आदि का

समावेश होता है। कालान्तर में आठ प्रतीक का समूह अष्टमंगल लोकप्रिय हुआ। कलाविद् वासुदेवशरण अग्रवाल ने सांची के स्तूप के उत्तरी तोरण के एक फलक में उत्कीर्ण ग्यारह और तेरह प्रतीकों वाली मालाओं को भी अष्टमांगलिक मालायें ही कहा है। ब्राह्मण, जैन एवं बौद्ध सम्प्रदायों में प्रतीकों को सम्पूज्य स्थान प्राप्त हुआ। प्रतीक पूजा से ही कालांतर मे मूर्तिपूजा का विकास हुआ।

(२) बौद्धधर्म के महत्वपूर्ण प्रतीक :

(२.१) हस्ति (गज) प्रतीक :

हस्ति को महात्मा बुद्ध के जन्म का प्रतीक माना गया है, बुद्धजन्म के सम्बन्ध मे एक कथानक प्राप्त होता है, जिसमे बोधिसत्व तुषित स्वर्ग में मनोविनोद कर रहे थे। उसी समय उनसे प्रार्थना की गयी कि संसार में अतीव कष्ट (दुःख) है, उनसे बचने के लिए कोई मार्ग निकालिए। मनुष्यों की बात सुनकर देव ने भविष्यवाणी की कि वह संसार को विमुक्त करने वाले हाथी के रूप में कपिलवस्तु की रानी माया देवी के गर्भ में प्रवेश कर विश्व में अवतरित होगा। इस प्रकार भगवान बुद्ध ने सफेद हस्ति के स्वरूप में अवतार लिया। भरहुत और बोधगया स्तूप की वेदिका पर निंद्रामग्न मायादेवी अंकित की गई है। सांची स्तूप की वेदिका और तोरण पर इस घटना का शिल्पाकन किया गया है। तोरण के शीर्षभाग मे कमल पर बिराजमान मायादेवी की शिल्पाकृति अंकित है। दूसरा दृश्य में कमल पर खड़ी देवी का अंकन है। तीसरे दृश्य में दो हथिनियाँ कमल पर खड़ी श्गजलक्ष्मीश देवी पर घड़ों से जल अभिषेक कर रही हैं।

(२.२) कलश प्रतीक :

भारतीय कलाकारों ने कलश आकार का उपयोग कई प्रकार से किया है। जेसे की पद्मगुच्छ से परिपूर्ण कलश, स्तम्भ का आधार और शीर्ष भगमे कलश आकार, लक्ष्मीजी के पद्मासन का आधार कलश, हाथीसे अभिसिंचित कलश आदि मे कलश की महता दिखाई देती है। बौद्धधर्म मे भी कलश प्रतीक का बाद महत्व रहा है। बहुत से स्तूप और विहार मे कलश के आकार को अंकित किया गया है। नागार्जुनकोंड से पूर्णकलश के अनेक उदाहरण प्राप्त हुई है। पूर्ण कलशों के बीच मे महात्मा बुद्ध की खड़ी प्रतिमा विद्याम है। बोरोबुदर स्तूप मे पूर्णकलश अंश प्राप्त हुई है। इससे प्रतीत होता है की बौद्धधर्म मे कलश का बड़ा महत्व रहा है।

(२.३) बोधिवृक्ष प्रतीक :

निरंजना नदी के तट पर पीपल वृक्ष के नीचे महात्मा बुद्ध को ज्ञानप्राप्ति हुई। ज्ञान प्राप्ति से सिद्धार्थ "बुद्ध (ज्ञानी)" बने। इसलिए पीपलवृक्ष को बोधिवृक्ष कहते हैं। यह वृक्ष ज्ञान, जागरण, साधना, बुद्धत्व और शांति का प्रतीक माना जाता है। भरहुत स्तूप की वेदिका पर कई वृक्षों की आकृतियाँ खुदी है। बोधिवृक्ष के नीचे श्भगवती शक मुर्निनो बोधोश लेख खुदा है, यानी शक मुनि (बुद्ध) को ज्ञान मिला। अमरावती २ में भी वृक्षपूजा का अतीव सुन्दर प्रदर्शन दीख पड़ता है। संसार के सभी जीव–जन्तु उसकी पूजा करते हैं। बुद्ध के जन्म, ज्ञानप्राप्ति और निर्वाण सबंधित वृक्ष और वनने बौद्ध संस्कृति मे प्रकृति के प्रति सन्मान की भावना को जागृत किया है। जहा जहा बौद्धधर्म का फेलाव हुआ, वहा वहा पर सबसे पहेले बोधिवृक्ष आरोपित किया गया। और बौद्धर्म का फेलाव किया गया है। पिटक ग्रंथों मे भी विविध वृक्षों का उल्लेख मिलता है। मायादेवी का स्वप्न अशोक वन विहार, लुम्बिनी वनमे जन्म, जंबू वृक्ष के नीचे किशोरवय, न्यग्रोध के नीचे पायस पान कर अश्वत्थ वृक्ष के नीचे बोधिप्राप्ति हुई थी। विविध शासकों ने बौद्धभिक्षु को वन का दान किया था। महात्मा बुद्ध का सम्पूर्ण जीवन वृक्षों से जुड़ा हुआ

है। इसलिए कहा जा सकता है की बौद्धधर्म मे बोधिवृक्ष का विशेष महत्व रहा है।

(२.४) धर्मचक्र प्रतीक :

सम्पूर्ण भारत में स्तूप की वेष्टनियों और तोरणों पर धर्मचक्र की पूजा अंकित की गई गयी है। बोधिसत्त्व सम्राट अशोक ने सारनाथ स्तम्भ के सिंहशीर्ष स्थान पर धर्मचक्र स्थित करवाया था। सारनाथ स्तम्भ की चौकी पर चक्र की आकृतियाँ खुदी हैं। बौद्ध धर्मानुयायियों ने इस प्रतीक को सदा महत्वपूर्ण स्थान दिया है। धर्मचक्र महात्मा बुद्ध के सारनाथ के प्रथम उपदेश (धर्म चक्र परिवर्तन) का द्योतक है। आठ तीलियों वाला चक्र आर्य अष्टांगिक मार्ग को दर्शाता है। वो निरंतर सत्य, नैतिकता और प्रज्ञा की दिशामे आगे बढ़ाने का ज्ञान देता है। बोधिसत्व अशोक ने सारनाथ में स्तम्भ निर्माण के स्तम्भ पर धम्मचक्र का अंकन करवाया था। भारत सरकार ने इस धम्मचक्र को राष्ट्रध्वज में महत्वपूर्ण स्थान दिया है, जो आज भी बौद्धधर्म के महत्व को द्रश्यमान करता है।

(२.५) श्रीवत्स प्रतीक :

श्रीवत्स प्रतिकनी गणना अष्टमांगलिक प्रतीक में की गई है। सांची स्तूप के पद्मलताना चार समूह में से एक समूह मे श्रीवत्स प्रति अंकित किया हुआ है। खँड़गिरी की गुफाओ द्वार के ऊपर चैत्यकार भाग में श्रीवत्स अंकित है। अमरावती चौत्यगवाक्ष मे भी श्रीवत्स अंकित है। खड़ी मनुष्याकृति के ऊपर के भाग मे श्रीवत्स अंकित किया जाता है। भरहुत, सांची, मथुरा, भाजा, सारनाथ आदि स्थलों में श्रीवत्स अंकित किया हुआ मिलता है। सांची, सारनाथ, कौशाम्बी तथा मथुरा के उत्कीर्ण शिल्प में श्रीवत्स के मानवाकार रूप का उल्लेख हुआ है। सांची तथा सारनाथ के वेदिका स्तम्भों पर, कौशाम्बी से मिले एक तोरण खण्ड पर हांथों और पैरों को गोलाई से मोड़कर जिन मानव आकृतियों को उकेरा गया है वे श्रीवत्स प्रतीक के आकार में है।

(२.६) त्रिरत्न प्रतीक :

बौद्ध विचारधारा में बुद्ध, धम्म और संघ का संगठित स्वरूप त्रिरत्न कहा गया है। बुद्ध आत्मतत्व और धम्म पदार्थ तत्व का प्रतीक माना गया है। संघ इन दोनों तत्वों को संमेलित करता है। कनिंघम के अनुसार चक्र बुद्ध का और त्रिरत्न धर्म का प्रतीक है। मार्योतर काल से तोरण और गुफाओ को अलंकृत करने के लिए त्रिरत्न अंकित किया जाता था। सबसे पहले भारतीय मुद्राओ पर त्रिरत्न अंकित किया जाता था। प्राचीन बौद्ध अबीलेख और गुफाओं से त्रिरत्न के चिह्न प्राप्त होते है। एसलिए कहा जयथा है की बौद्धधर्म मे त्रिरत्न का विशेष महत्व था।

भारतीय कला में भारतीय जीवन का सारगर्भित अभिप्राय त्रिरत्न प्रतीक के रूप में अंकित किया गया है। शोभा एवं अरक्षा के लिए भारतीय कलाकारों ने त्रिरत्न प्रतीक का बहुविधि उपयोग किया है। भरहुत, सांची, बोधगया, मथुरा, अमरावती, नागार्जुनीकोण्ड आदि विभिन्न स्थानों के उत्कीर्ण शिल्प में त्रिरत्न प्रतीक के कई उदाहरण मिलते है। वेदिका स्तम्भों के चक्र–फलक तथा अन्य फलक त्रिरत्न के प्रतीकों से सजाए गये हैं। कलश प्रतीक जिसे पूर्णकलश, मंगलकलश, भद्रकलश भी कहा गया है, उसका रूपांकन भरहुत, सांची, मथुरा, नागार्जुनीकोण्ड तथा अमरावती के स्तूप शिल्प में विभिन्न मोहक छवियों में किया गया है।

(२.७) पद्म प्रतीक :

भारतीय कला का विहंगम अवलोकन करने से ऐसा विदित होता है कि समस्त ऐतिहासिक युग में कलाकार ने अलंकरण में, विशेषकर पुष्पलताओं के अंकन में विशेष अभिरूचि प्रकट की है और इसके उत्कृष्ट

उदाहरण पद्मलताओं अथवा पद्मदलों के रूप में उपलब्ध होते हैं। पूर्ण विकसित अथवा अर्द्ध विकसित पद्म सरोवरों में देखे जा सकते हैं। सांची के स्तूपों पर ऐसे पद्म सरोवर कई फलकों में उत्कीर्ण हैं। मंगलकलश में पद्मगुच्छ के मनोहारी रूप हमें भरहुत, मथुरा, अमरावती आदि के शिल्प में सहज ही उपलब्ध हैं। जेसे कमल कीचड़ से उत्पन्न होकर निर्मल और सुंदर रहता है, उसी तरह मनुष्य को दुख और अशुद्धि के बीच रहते हुई मानसिक और आध्यात्मिक शुद्धता बनाई रखनी चाहिए, एसा बोधपाठ कमलचिह्न से परपट् होता है। सांची की शिल्पकला में अनेक नर नारीओ के हाथ में पद्म दिखाई पड़ता है। बौद्ध अवलोकीश्वर पद्मपाणि के हाथ मे दंडयुक्त पद्म द्रश्यमान होता है। स्तूप और विहार में पद्म पुष्प की आकृतिया कंडारी हुई है। पद्म के विशेष गुण के कारण बौद्धधर्म में पद्म का विशेष महत्व रहा है।

(२.८) मीन प्रतीक :

प्रागैतिहासिक युग से लेकर आज तक हमारे जीवन में मीन के माध्यम से कल्याण की कामना की जाती रही है। यों तो मीन का अंकन हड़प्पा काल की मुहरों तथा मृदभाण्डों पर भी पाया गया है, पर मीन–मिथुन के रूप में सर्वप्रथम अंकन छठीं शती ई०पू० के पंचमार्क रजत सिक्कों पर हुआ है। मीन–मिथुन मांगलिक प्रतीक नागार्जुनीकोण्ड से मिले तृतीय शती ई० के बुद्धपदों की एड़ी तथा अंगूठे के पास वाली ऊँगलियों पर उत्कीर्ण हैं। सांची के विशाल स्तूप के उत्तरी तोरण के एक फलक में दो ऐसे हार उत्कीर्ण हैं जिनके मनके मांगलिक प्रतीकों से बने हैं। इन प्रतीकों में मीन–मिथुन भी है।

(२.९) शालभंजिका प्रतीक :

भारतीय कला यहाँ की धार्मिक दार्शनिक एवं सामाजिक संस्कृति का समाहार है। जीवन के गंभीर एवं गूढ़ तात्विक विवेचनों की प्रतीकात्मक व्याख्या हमें भारतीय कला में सर्वत्र दिखाई देती है। ऐसी ही तात्विक विवेचना से परिपूर्ण भारतीय कला का एक और अत्यन्त सम्मोहक प्रतीक है शालभंजिका। शालभंजिका उस मूर्तिशिल्प को कहते है जिसमे एक रूपवती तरुणी को एक वृक्ष के नीचे त्रिभंग मुद्रा मे खड़े हुई अंकित किया जाता है। तरुणी प्रायः अपने एक हाथ से वृक्ष की शाखा को पकड़कार जुलती दिखाई देती है। शालभंजिकाओं की आकृतियाँ प्रायः स्तूपों के तोरणों की कड़ियों अथवा उनके चारों ओर से वेदिका स्तम्भों पर उत्कीर्ण पायी गयी है इसीलिए इन्हें तोरण–शालभंजिकाएं और स्तम्भ–शालभंजिकाएं कहा जाता है। सांची मथुरा, नागार्जुनीकोण्ड, भरहुत आदि स्थानों से तोरण शालभंजिकाएं प्राप्त हुई हैं।

(२.१०) स्वस्तिक प्रतीक :

प्राचीनकाल से स्वस्तिक भारतीय धर्म में कल्याण सूचक प्रतीक रहा है। पुरातत्वविद् कनिंघम के अनुसार स्वस्तिक शब्द 'सु' तथा 'अस्ति' नामक दो शब्दों से बना हुआ है। जिसका अर्थ कल्याणमय होता है। बौद्धग्रंथ ललितविस्तार में बुद्ध के केश स्वरूप मे अष्टमांगलिक चिह्न मे स्वस्तिक का उल्लेख है। पीपहरवा नामक बौद्धस्थल मे मिले स्वर्णयाभूषण में स्वस्तिक चिन्ह बना हुआ मिला है। बहुत सारे बौद्ध स्थापत्य मे भी स्वस्तिक प्रतीक प्राप्त होता है। जो बहु धर्म में सावस्तिक का महत्व दर्शाते है।

(३) बौद्ध प्रतीकों की सामाजिक भूमिका :

बौद्धधर्म में प्रतीकों का महत्व केवल धार्मिक आस्था अथवा पूजा–पद्धति तक सीमित नहीं रहा, बल्कि उन्होंने प्राचीन भारतीय समाज के सामाजिक, नैतिक और सांस्कृतिक जीवन को भी गहराई से प्रभावित किया।

बौद्ध प्रतीकों ने जटिल धार्मिक एवं दार्शनिक विचारों को सरल दृश्य रूप देकर सामान्य जन तक पहुँचाने का कार्य किया। ऐसे समय में जब समाज का अधिकांश वर्ग लिखित ग्रंथों से परिचित नहीं था, तब धर्मचक्र, बोधिवृक्ष, स्तूप, बुद्धपद, कमल, त्रिरत्न, सिंह और मृग जैसे प्रतीक धर्मोपदेश के प्रभावी माध्यम बने। इनके माध्यम से बुद्ध के जीवन, उपदेश और नैतिक आदर्शों को बिना विस्तृत लिखित ज्ञान के भी समझाया जा सकता था।

बौद्ध प्रतीकों ने सामाजिक नैतिकता के निर्माण में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। धर्मचक्र धर्म के निरंतर प्रवाह और अष्टांगिक मार्ग का प्रतीक था, जबकि कमल संसार की अशुद्धियों के बीच पवित्र जीवन जीने का संदेश देता था। बोधिवृक्ष आत्मज्ञान, संयम और साधना की प्रेरणा देता था। इस प्रकार प्रतीकों के माध्यम से सत्य, अहिंसा, करुणा, मैत्री, संयम और सदाचार जैसे मूल्यों को सामाजिक जीवन में प्रतिष्ठित करने का प्रयास हुआ। बौद्ध प्रतीकों ने सामाजिक एकता और सामुदायिक भावना को मजबूत करने में भी योगदान दिया। स्तूप, विहार और चैत्य केवल धार्मिक स्थल नहीं थे, बल्कि वे सामाजिक एवं सांस्कृतिक गतिविधियों के केंद्र भी बने। इन स्थानों पर भिक्षुओं, उपासकों, यात्रियों और विभिन्न सामाजिक वर्गों के लोगों का संपर्क होता था। इससे सामुदायिक सहयोग, धार्मिक सहभागिता और सांस्कृतिक आदान–प्रदान को बढ़ावा मिला।

इन प्रतीकों ने सामाजिक समता की भावना को भी अभिव्यक्त किया। त्रिरत्न तथा स्तूप जैसे प्रतीक किसी एक जाति या वर्ग तक सीमित नहीं थे। बौद्ध धार्मिक केंद्रों में विभिन्न सामाजिक समूहों की भागीदारी ने सामाजिक संपर्क और समानता की भावना को बल दिया। बौद्ध प्रतीकों की एक महत्वपूर्ण भूमिका शिक्षात्मक भी थी। सांची और भरहुत जैसे केंद्रों के शिल्पों में जातक कथाओं, बुद्ध के जीवन तथा नैतिक प्रसंगों को प्रतीकों माध्यम से प्रस्तुत किया गया। इससे सामान्य जनता को त्याग, दान, करुणा, सत्य और नैतिक आचरण की शिक्षा मनोरंजक एवं सरल ढंग से प्राप्त होती थी।

(४) बौद्धकला के विकास में प्रतीकों की भूमिका :

बौद्धकला के विकास में प्रतीकों की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण रही है। प्रारंभिक बौद्धकला में बुद्ध की प्रत्यक्ष मानव–प्रतिमा का व्यापक प्रचलन नहीं था, इसलिए बुद्ध के जीवन, ज्ञान और उपदेशों को विभिन्न प्रतीकों के माध्यम से अभिव्यक्त किया गया। धर्मचक्र बुद्ध द्वारा धर्म के प्रवर्तन तथा अष्टांगिक मार्ग का प्रतीक बना, जबकि बोधिवृक्ष बुद्ध की ज्ञानप्राप्ति और आध्यात्मिक जागरण को दर्शाता था। रिक्त सिंहासन बुद्ध की अदृश्य उपस्थिति तथा उनके आध्यात्मिक गौरव का संकेत देता था। बुद्धपद उनके द्वारा दिखाए गए धर्ममार्ग पर चलने की प्रेरणा देता था और स्तूप बुद्ध की स्मृति, अवशेष तथा निर्वाण की अवधारणा से जुड़ा धार्मिक स्थापत्य प्रतीक बना। इसी प्रकार कमल पवित्रता एवं आध्यात्मिक उन्नति, त्रिरत्न बुद्ध, धम्म और संघ तथा छत्र सम्मान एवं आध्यात्मिक श्रेष्ठता के प्रतीक रहे। साँची और भरहुत जैसे कला–केंद्रों के तोरणों तथा शिल्पों में इन प्रतीकों द्वारा बुद्ध के जीवन और जातक कथाओं को अत्यंत प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया गया। बाद में गांधार और मथुरा कला में बुद्ध की मानव–प्रतिमाओं का विकास हुआ, फिर भी प्रतीकों का महत्व समाप्त नहीं हुआ। इस प्रकार प्रतीकों ने बौद्ध विचारों को दृश्य एवं सरल भाषा प्रदान की और मूर्तिकला, स्थापत्य तथा चित्रकला के विकास को नई दिशा दी।

(५) निष्कर्ष :

बौद्धधर्म में प्रतीकों का विशेष धार्मिक, आध्यात्मिक और सांस्कृतिक महत्त्व है। बुद्ध के जीवन, उपदेशों और निर्वाण की अवधारणाओं को प्रतीकों के माध्यम से सरल एवं प्रभावशाली रूप में प्रस्तुत किया गया। धर्मचक्र, कमल, बोधिवृक्ष, स्तूप और बुद्धपद जैसे प्रतीक बौद्ध दर्शन के मूल सिद्धांतों को अभिव्यक्त करते हैं। इन प्रतीकों ने बौद्ध कला, स्थापत्य और जनमानस को गहराई से प्रभावित किया तथा बौद्ध संस्कृति के प्रसार में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।

संदर्भ ग्रंथ :

१. एलेक्जांडर कनिंघम्, द स्तूप ऑफ भरहुत, लंदन, १८७६.
२. हेनरिक जिमर, द आर्ट ऑफ इण्डियन एशिया, मोतीलाल बनारसीदास पब्लिकेशन, २०१५,
३. मार्शल, सर जॉन, मान्यूमेण्ट्स ऑफ साँची, स्वाती पब्लिकेशन, दिल्ली,
४. प्रमोदचन्द्र, स्टोन स्कल्पचर इन द इलाहाबाद म्यूजियम, अमेरिकन इंस्टिट्यूट ऑफ इंडियन स्टडीज, १९७०.
५. श्रीवास्तव, ए. एल., लाइफ इन साँची स्कल्पचर, अभिनव पब्लिकेशन, १९८३.

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2026 Page No. : 94-98

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES PRINT RESEARCH JOURNAL

'गंगूबाई काठियावाड़ी' : नारी शक्ति की गाथा

आभा एस वी
शोधार्थी, हिंदी विभाग,
श्री शंकराचार्य संस्कृत विश्वविद्यालय, कालडी।

हमने अक्सर उन महिलाओं की कहानियाँ सुनी हैं, जिन्हें विभिन्न परिस्थितियों के कारण वेश्यावृत्ति में धकेल दिया जाता है। कई बार समाज इन महिलाओं के अधिकारों को पूरी तरह अनदेखा कर देता है, जबकि वे भी मानवाधिकारों के अंतर्गत आते हैं। मजबूरी में इस पेशे से जुड़ी महिलाओं को न केवल शारीरिक और मानसिक प्रताड़ना झेलनी पड़ती है, बल्कि समाज द्वारा उन्हें हाशिये पर भी धकेल दिया जाता है। हालांकि, एक महत्वपूर्ण सवाल यह भी है कि ऐसी महिलाओं के बच्चों का क्या होता है? यह एक ऐसा पहलू है, जिसे अक्सर नजरअंदाज कर दिया जाता है।

'गंगूबाई काठियावाड़ी' एक ऐसी फिल्म है, जो समाज में सेक्स वर्कर्स को लेकर प्रचलित धारणाओं को चुनौती देती है। इस फिल्म का निर्देशन प्रसिद्ध फिल्मकार संजय लीला भंसाली ने किया है और इसमें मुख्य भूमिका आलिया भट्ट ने निभाई है। उन्होंने अपने दमदार अभिनय के जरिए गंगूबाई के व्यक्तित्व को प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया। फिल्म में उनकी खूबसूरती, आत्मविश्वास और संघर्षशील स्वभाव इस किरदार को पूरी तरह जीवंत बना देता है।

यह फिल्म गंगा हरजीवनदास काठियावाड़ी, जिन्हें लोग गंगूबाई कोठेवाली के नाम से जानते हैं, की वास्तविक जीवन की कहानी पर आधारित है। इसकी कहानी एस. हुसैन जैदी और जैन बोर्ग्स की पुस्तक 'माफिया क्वीन्स ऑफ मुंबई : स्टोरीज आफ वुमेन फ्रॉम द गंग्लान्ड्स' (Mafia Queens of Mumbai : Stories of Women from the Ganglands) से लिया गया है। यह कहानी अपने आप में इतनी प्रभावशाली है कि स्वाभाविक रूप से दर्शकों में इसके प्रति गहरी रुचि उत्पन्न हुई।

गंगूबाई न केवल एक सेक्स वर्कर थीं, बल्कि उन्होंने इस पेशे से जुड़ी महिलाओं के अधिकारों के लिए भी संघर्ष किया। उन्होंने समाज की रूढ़िवादी सोच को चुनौती दी और वेश्यावृत्ति में फँसी महिलाओं को सम्मान दिलाने की कोशिश की। वह न केवल अपने इलाके में एक प्रभावशाली नेता बनीं, बल्कि उन्होंने उन बच्चों के लिए भी लड़ाई लड़ी, जिनकी माताएँ वेश्यावृत्ति में थीं और जिन्हें समाज ने पहले ही दरकिनार कर दिया था। फिल्म के माध्यम से यह दर्शाने की कोशिश की गई है कि समाज को इन महिलाओं को केवल उनके पेशे के आधार पर नहीं आंकना चाहिए। यह कहानी केवल गंगूबाई की नहीं, बल्कि उन हजारों महिलाओं की भी है, जिन्हें जबरन इस दलदल में धकेल दिया गया और जिनके पास इससे बाहर निकलने का कोई विकल्प नहीं था।

'गंगूबाई काठियावाड़ी' फिल्म दर्शकों को यह सोचने पर मजबूर करती है कि क्यों समाज इन महिलाओं के संघर्षों को अनदेखा कर देता है। यह फिल्म एक महत्वपूर्ण सामाजिक संदेश देती है कि हर व्यक्ति को सम्मान के साथ जीने का अधिकार है, चाहे उसकी पृष्ठभूमि या पेशा कुछ भी हो। संजय लीला भंसाली की भव्य सिनेमेटोग्राफी और आलिया भट्ट की शानदार अदाकारी ने इस फिल्म को एक यादगार सिनेमाई अनुभव बना दिया। यह सिर्फ एक फिल्म नहीं, बल्कि एक ऐसी कहानी है, जो समाज की गहरी सच्चाइयों को सामने लाने का प्रयास करती है।

यह फिल्म मुंबई के कुख्यात कामाठीपुरा क्षेत्र की पृष्ठभूमि में बनाई गई है, जो अपने इतिहास और सामाजिक परिस्थितियों के लिए जाना जाता है। गंगूबाई का किरदार एक ऐसी महिला की कहानी को उजागर करता है, जो धोखे से इस दुनिया में प्रवेश करती है लेकिन बाद में मजबूती और हिम्मत के साथ अपनी पहचान बनाती है। यह फिल्म सिर्फ एक महिला के संघर्ष की गाथा नहीं है, बल्कि यह सत्ता, समाज, और वेश्यावृत्ति से जुड़े मुद्दों को भी उजागर करती है।

संजय लीला भंसाली ने अपने विशिष्ट सिनेमाई अंदाज में इस कहानी को प्रस्तुत किया है, जिसमें भव्य सेट, शानदार निर्देशन और गहरे भावनात्मक पहलू देखने को मिलते हैं। आलिया भट्ट ने अपने दमदार अभिनय से गंगूबाई के व्यक्तित्व के हर पहलू को बखूबी निभाया है। इस फिल्म में कामाठीपुरा की जिंदगी, महिलाओं की मजबूरी और उनके संघर्ष को प्रभावशाली तरीके से दिखाया गया है, जो दर्शकों को गहराई से प्रभावित करता है।

महाराष्ट्र की सबसे बड़ी वेश्यालय गली, कामाठीपुरा, कभी इतनी भयावह थी कि जब गंगूबाई के पायल की आवाज गूंजती, तो पूरा इलाका सन्नाटे में डूब जाता था। जैसे ही वह अपनी काली बेंटली कार से उतरतीं, वहाँ के गुंडे खौफ से भाग जाते थे। सेक्स वर्कर्स उन्हें सम्मानपूर्वक प्रणाम करती थीं। वही गंगूबाई, जो अंधेरी गलियों में रोशनी की किरण बन गई थीं।

गंगूबाई का जन्म गुजरात के काठियावाड़ में हुआ। उनका असली नाम गंगा हरजीवनदास काठियावाड़ी था। वह एक साधारण परिवार से थीं, वह बचपन से ही मुंबई जाकर फिल्मों में अभिनय करने की ख्वाहिश रखती थी। इसी दौरान उसकी जिंदगी में रामलिक लाल नामक एक व्यक्ति आया, जो मुंबई रहने वाला था। गंगा को उससे प्यार हो गया था। वह तो अपने पिता के मित्र और कर्मचारी था। 16 वर्ष की उम्र में गंगा ने उसके साथ भाग गयी। लेकिन जब वह मुंबई पहुँचीं, तो उन्हें एहसास हुआ कि यह प्यार नहीं, बल्कि छलावा था। रामलिक ने उन्हें मात्र 500 रुपये में कामाठीपुरा के एक कोठे पर बेच दिया।

संयुक्त राष्ट्र एड्स संगठन (UN AIDS) के अनुसार, एशिया के सबसे बड़े रेड–लाइट एरिया सोनागाछी (जहाँ लगभग 7 लाख सेक्स वर्कर्स काम करती हैं) की तरह ही, कामाठीपुरा महाराष्ट्र का सबसे बड़ा वेश्यालय क्षेत्र था। यहाँ गंगूबाई को कई कठिनाइयों का सामना करना पड़ा, लेकिन परिस्थितियों ने उन्हें इस पेशे को अपनाने पर मजबूर कर दिया।

1960 से 1980 के दशक के बीच, मुंबई पर अंडरवर्ल्ड डॉन करीम लाल का शासन था। उनके नेतृत्व में पठान गैंग, नशीले पदार्थों की तस्करी, हथियारों के व्यापार और माफिया गतिविधियों के जरिए पूरे शहर को नियंत्रित कर रही थी। इसी दौरान गंगूबाई को भीषण अत्याचार का सामना करना पड़ा। पठान गैंग के एक गुंडे

ने उनके साथ अमानवीय अत्याचार किया।

इस घटना के बाद, गंगूबाई को महीनों तक अस्पताल में भर्ती रहना पड़ा। स्वस्थ होने के बाद, उनका एकमात्र लक्ष्य न्याय पाना था। उन्होंने करीम लाल से मिलने की कोशिश की। आखिरकार, करीम लाल ने उन्हें अपनी बहन के रूप में स्वीकार कर लिया। यह घटना मुंबई के अंडरवर्ल्ड के लिए चौंकाने वाली थी। अब गंगूबाई सिर्फ एक सेक्स वर्कर नहीं, बल्कि करीम लाल की बहन बन चुकी थीं। अब कोई भी उन्हें नुकसान नहीं पहुँचा सकता था। क्योंकि वह अब एक आम महिला नहीं । वह तो 'द ब्रॉथल मैडम' और 'द माफिया क्वीन ऑफ मुंबई' बन चुकी थीं। अब कामाठीपुरा में उनके आदेश के बिना कुछ भी नहीं होता था।

गंगूबाई का प्रभाव इतना बढ़ गया कि जो लोग उनका सम्मान नहीं करते थे, वे कामाठीपुरा में टिक नहीं सकते थे। इसके बाद सेक्स वर्कर्स के जीवन में भी सुधार आने लगा। उनके नेतृत्व में कोई भी महिला जबरदस्ती इस दल में नहीं धकेली जाती थी। जो महिलाएँ धोखे से इस पेशे में लाई गई थीं, उन्हें उन्होंने वापस उनके घर भेजा। उन्होंने यह सुनिश्चित किया कि कामाठीपुरा में केवल वे महिलाएँ रहें, जो अपनी मर्जी से वहाँ थीं।

इसके अलावा, उन्होंने उन अनाथ बच्चों की भी देखभाल की, जो सेक्स वर्कर्स के बच्चे थे और बेघर थे। इतिहास गवाह है कि उन्होंने चार अनाथ बच्चों को गोद लिया और पाला। इसके बिना वह महिलाओं के अधिकारों की रक्षक बन चुकी थीं।

कामाठीपुरा में सबसे सम्मानित महिला गंगूबाई थीं। उस दौर में ब्लैक बेंटली कार में सफर करने वाली वह इकलौती महिला थीं। उन्होंने सेक्स वर्कर्स के अधिकारों की लड़ाई में कई आंदोलन किए।

हुसैन जैदी की किताब 'Mafia Queens of Mumbai : Stories of Women from the Ganglands' में गंगूबाई के उस ऐतिहासिक भाषण का जिक्र किया गया है, जो उन्होंने आजाद मैदान में दिया था। अपने भाषण में उन्होंने सेक्स वर्कर्स के समाज में योगदान पर प्रकाश डाला और कहा कि समाज को कामाठीपुरा को हिकारत की नजर से देखने की बजाय, उसकी सच्चाई को समझना चाहिए। उन्होंने सेक्स वर्कर्स की वास्तविक समस्याओं को दुनिया के सामने रखा।

उनके इस भाषण का इतना प्रभाव पड़ा कि तत्कालीन प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू ने उनसे व्यक्तिगत रूप से मुलाकात की। इस बैठक के बाद, कामाठीपुरा में बड़े बदलाव देखने को मिले।

हालांकि, इन बदलावों की सूत्रधार गंगूबाई अधिक समय तक जीवित नहीं रहीं। 1979 में, मात्र 38 वर्ष की उम्र में, दिल का दौरा पड़ने से उनका निधन हो गया।

गंगूबाई की लड़ाई केवल अपने कोठे तक सीमित नहीं थीय यह मानवाधिकारों, समानता और शिक्षा की लड़ाई थी। फिल्म के उत्तरार्ध में गंगूबाई द्वारा दिया गया भाषण, और बाद में देश के प्रधानमंत्री से उनकी मुलाकात का दृश्य, इस फिल्म के निष्कर्ष की आत्मा है। गंगूबाई दया या सहानुभूति की भीख नहीं माँगतीं, वे समानता, न्याय और अधिकार की माँग करती हैं। उनका तर्क बहुत सीधा और तार्किक है– जब तक यह समाज मौजूद है, तब तक यह व्यवसाय भी मौजूद रहेगा, और अगर यह व्यवसाय मौजूद है, तो इसमें काम करने वाली महिलाओं को भी अन्य सभी नागरिकों की तरह नागरिक अधिकार, स्वास्थ्य सेवाएँ, सुरक्षा और सबसे बढ़कर उनके बच्चों को शिक्षा का अधिकार मिलना चाहिए। बच्चों की शिक्षा का मुद्दा फिल्म में बेहद संवेदनशीलता से उठाया गया है, क्योंकि गंगूबाई जानती थीं कि अगर इन बच्चों को शिक्षा मिलेगी, तो ही वे इस दलदल से बाहर

निकल पाएँगे और आने वाली पीढ़ी का भविष्य बदल सकेगा।

फिल्म का मुख्य संदेश यही है कि परिस्थितियाँ कितनी भी कठिन क्यों न हों, आत्मबल और आत्मविश्वास से उनका सामना किया जा सकता है। गंगूबाई, जो कभी एक मासूम लड़की थी, धीरे–धीरे एक मजबूत और आत्मनिर्भर महिला में बदल जाती है। वह अन्य महिलाओं को भी अपने अधिकारों के लिए खड़े होने की प्रेरणा देती है।

कामाठीपुरा की अन्य महिलाएँ भी गंगूबाई के प्रभाव से प्रेरित होती हैं। उसकी करीबी दोस्त कमली मातृत्व को अपनाती है, जबकि रोशना अपनी आजादी का जश्न भव्य विवाह समारोह के रूप में मनाती है। यह दृश्य यह दर्शाता है कि गंगूबाई केवल एक महिला नहीं थी, बल्कि एक आंदोलन थी, जिसने कई अन्य महिलाओं के जीवन को बदल दिया।

'गंगूबाई काठियावाड़ी' केवल एक फिल्म नहीं है, बल्कि यह तत्कालीन समाज की और भी प्रकाश डाला है। यह फिल्म महिलाओं की शक्ति, उनकी इच्छाशक्ति और आत्मनिर्भरता का जश्न मनाती है। इसमें दिखाया गया है कि कैसे महिलाएँ अपने अधिकारों के लिए लड़ सकती हैं और अपने जीवन को खुद संवार सकती हैं।

संजय लीला भंसाली ने इस फिल्म को भव्यता और संवेदनशीलता के साथ प्रस्तुत किया है, जिससे यह न केवल एक प्रभावशाली कहानी बनती है, बल्कि एक सिनेमाई अनुभव भी प्रदान करती है। उन्होंने इस प्रेरणादायक कहानी को भव्य अंदाज में प्रस्तुत किया है, जबकि आलिया भट्ट ने अपने अभिनय से गंगूबाई के सफर को जीवंत कर दिया है। उन्होंने इस किरदार के हर पहलू, प्रेम, पीड़ा, संघर्ष और आत्मविश्वास को बेहद संजीदगी से निभाया है। फिल्म न केवल गंगूबाई के जीवन को दर्शाती है, बल्कि समाज में हाशिए पर खड़ी महिलाओं की वास्तविकता को भी सामने लाती है।

फिल्म 'गंगूबाई काठियावाड़ी' भारतीय सिनेमा के इतिहास में एक ऐसी असाधारण रचना के रूप में दर्ज की गई है, जो केवल मनोरंजन का साधन न बनकर समाज के सबसे अंधेरे और उपेक्षित कोनों पर रोशनी डालती है। महान निर्देशक संजय लीला भंसाली द्वारा निर्देशित और लेखक हुसैन जैदी की किताब 'माफिया क्वीन्स ऑफ मुंबई' के एक अध्याय पर आधारित यह फिल्म महज एक महिला की जीवन–गाथा नहीं है, बल्कि यह अन्याय, शोषण और सामाजिक बहिष्कार के खिलाफ उठी एक ऐसी बुलंद आवाज है जिसने इतिहास के पन्नों में अपनी अमिट छाप छोड़ी। फिल्म का पूरा कथानक और इसका अंतिम संदेश (Conclusion) समाज की नैतिकता, न्याय व्यवस्था और मानवीय मूल्यों पर गहरे सवाल खड़े करता है, जो दर्शकों को फिल्म खत्म होने के बाद भी देर तक सोचने पर मजबूर करते हैं।

इस फिल्म के जरिये निदेशक यह बताना चाहते हैं कि परिस्थितियाँ चाहे इंसान को कितना भी तोड़ दें, लेकिन अगर आत्मसम्मान और इच्छा शक्ति जीवित हो, तो कोई भी व्यक्ति एक पीड़िता (Victim) से बदलकर समाज का नेतृत्व करने वाला (Leader) बन सकता है। काठियावाड़ के एक संभ्रांत परिवार की मासूम लड़की 'गंगा', जो अभिनेत्री बनने का सपना लेकर मुंबई आती है, जब अपने ही प्रेमी द्वारा मात्र एक हजार रुपये में कामठीपुरा के कोठे पर बेच दी जाती है, तो उसकी दुनिया पूरी तरह बिखर जाती है। लेकिन फिल्म का सबसे सशक्त मोड़ वही है जहाँ गंगा अपनी नियति के आगे घुटने टेकने से इनकार कर देती है। वह परिस्थितियों के आगे रोने के बजाय अपने अधिकारों के लिए खड़ी होती है और 'गंगा' से 'गंगूबाई' बनकर उस पूरे इलाके की

संरक्षक और आवाज बन जाती है। उसका यह रूपांतरण दिखाता है कि इंसान की पहचान उसके अतीत या उसके पेशे से नहीं, बल्कि उसकी इंसानियत और उसके द्वारा किए गए कार्यों से तय होती है।

भंसाली ने फिल्म के माध्यम से बड़े ही सूक्ष्म और तीखे ढंग से यह दिखाया है कि हमारा समाज यौनकर्मियों को किस तरह देखता है। समाज दिन के उजाले में तो इन महिलाओं को 'अपवित्र' और 'अनैतिक' मानकर उनका बहिष्कार करता है, उन्हें बस्तियों से बेदखल करना चाहता है और उनके बच्चों को स्कूलों में दाखिला देने से मना करता है, लेकिन वही समाज रात के अंधेरे में अपनी हवस मिटाने इन्हीं गलियों में आता है। गंगूबाई का किरदार समाज के इस पाखंड को बड़े ही निडरता से चुनौती देता है। फिल्म यह स्पष्ट करती है कि वेश्यावृत्ति केवल एक व्यक्ति का चुनाव नहीं, बल्कि अक्सर सामाजिक तंत्र की विफलता, गरीबी और धोखे का परिणाम होती है। इसलिए, जो समाज इन महिलाओं को सुरक्षा या सम्मान नहीं दे सकता, उसे उन्हें जज करने या उनका तिरस्कार करने का भी कोई अधिकार नहीं है।

कलात्मक और भावनात्मक दृष्टिकोण से देखा जाए तो यह फिल्म आलिया भट्ट के अभिनय कैरियर का एक मील का पत्थर है। आलिया ने गंगूबाई के किरदार में जो परिपक्वता, आंखों का आकर्षण, संवादों की कड़क और आवाज में जो ठहराव लाया है, वह दर्शकों के दिलों में गहरे तक उतरता है। संजय लीला भंसाली के भव्य सेट्स, विशिष्ट रंग–संयोजन और भावुक संगीत ने कामठीपुरा की गलियों के दर्द और ग्रेस दोनों को बड़े ही खूबसूरती से पर्दे पर उतारा है।

अंततः, 'गंगूबाई काठियावाड़ी' का सार और अंतिम निष्कर्ष यही है कि व्यवसाय चाहे कोई भी हो, इंसान की मौलिक गरिमा (Human Dignity) और उसका आत्मसम्मान छीनने का अधिकार किसी को नहीं है। 'यह फिल्म हमें यह सिखाती है कि समाज को अपनी संकीर्ण मानसिकता को छोड़कर हर व्यक्ति को एक इंसान के रूप में देखना चाहिए। गंगूबाई की कहानी यह साबित करती है कि एक सच्ची नेता वही है जो अपनी खुद की त्रासदियों को दूसरों के जीवन में बदलाव लाने की शक्ति में बदल दे। यह फिल्म केवल एक बीती हुई कहानी का अंत नहीं है, बल्कि यह आज के आधुनिक समाज के लिए भी एक दर्पण है, जो हमें यौनकर्मियों और हाशिए पर खड़े वर्गों के प्रति अधिक संवेदनशील, समावेशी और न्यायप्रिय बनने की प्रेरणा देती है।

सन्दर्भ :

1. गंगूबाई काठियावाड़ी – संजय लीला भंसाली।
2. Mafia Queens of Mumbai : Stories of Women from the Ganglands – S-Hissain Zaidi with Jane Borges.
3. https://cmil.lk/gangubai&kathiawadi&a&cinematic&tribute&to&women&empowerment/
4. https://www.researchgate.net/publication/374917256_GANGUBAI_KATHIAWADI_2022_THE_EMPOWERING_RESISTANCE
5. https://www.imdb.com/title/tt10083340/

bhasvictor@gmail.com, 91 8304080975

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2026 Page No. : 99-107

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES PRINT RESEARCH JOURNAL

कोविड काळातील ग्रामीण व शहरी भागातील माध्यमिक स्तरावरील शिक्षकांच्या मानसिक आरोग्याचा तुलनात्मक अभ्यास

भागवत माणिकराव भांगे, संशोधक
डॉ. तिक्षा म. श्यामकुल, मार्गदर्शक
पदव्युत्तरशिक्षणशास्त्र विभाग, राष्ट्रसंत तुकडोजी महाराज नागपूर विद्यापीठ, नागपूर।

सारांश :

कोविड-१९ महामारीमुळे शिक्षणव्यवस्थेवर अभूतपूर्व परिणाम झाला. शाळा बंद राहणे, ऑनलाइन अध्यापनाचा स्वीकार, तांत्रिक अडचणी, कामाच्या वेळेतील अनिश्चितता, विद्यार्थ्यांशी प्रत्यक्ष संवादाचा अभाव आणि संसर्गाची भीती यामुळे शिक्षकांच्या मानसिक आरोग्यावर परिणाम झाला. प्रस्तुत संशोधनाचा उद्देश कोविड काळातील ग्रामीण व शहरी भागातील माध्यमिक स्तरावरील शिक्षकांच्या मानसिक आरोग्याची तुलनात्मक पाहणी करणे हा आहे. प्रस्तुत अभ्यासासाठी ६०० माध्यमिक शिक्षकांचा नमुना घेण्यात आला असून त्यामध्ये ३०० ग्रामीण व ३०० शहरी शिक्षक तसेच ३०० पुरुष व ३०० महिला शिक्षकांचा समावेश आहे. संशोधकाने तयार केलेल्या ३० विधानांच्या पाच-बिंदू Likert प्रकारच्या मानसिक आरोग्य मापन साधनाद्वारे माहिती संकलित करण्यात आली. उपलब्ध माहितीचे Mean, Median, Mode, Standard Deviation आणि स्वतंत्र नमुना t-test यांच्या साहाय्याने विश्लेषण करण्यात आले.

एकूण ६०० शिक्षकांच्या मानसिक आरोग्य गुणांची सरासरी 128.05, मध्यिका 133, बहुलक 150 आणि प्रमाणित विचलन 19.26 आढळले. ग्रामीण शिक्षकांची सरासरी 126.62 तर शहरी शिक्षकांची सरासरी 129.49 होती. ग्रामीण व शहरी शिक्षकांच्या मानसिक आरोग्य गुणांमध्ये आढळलेला फरक सांख्यिकीयदृष्ट्या लक्षणीय नव्हता ($t = -1.829$, $p = .068$). पुरुष शिक्षकांची सरासरी 128.08 आणि महिला शिक्षकांची सरासरी 128.02 असून त्यांच्यातही सांख्यिकीयदृष्ट्या लक्षणीय फरक आढळला नाही ($t - 0.036$, $p - .971$). एकूण नमुन्याची सरासरी तटस्थ मध्यबिंदू 90 पेक्षा लक्षणीयरीत्या जास्त आढळली ($t = 48.405$, $p < .001$).

निष्कर्षांवरून ग्रामीण-शहरी व लिंग या दोन पार्श्वभूमी चलांनुसार मानसिक आरोग्य गुणांमध्ये लक्षणीय फरक आढळत नसला तरी कोविड काळातील शिक्षकांच्या मानसिक आरोग्याचे स्वरूप समजून घेण्यासाठी संस्थात्मक पाठबळ, डिजिटल ताण, कामाचा ताण आणि भावनिक पुनर्बलन या घटकांचा विचार करणे आवश्यक असल्याचे स्पष्ट होते.

Key Words : कोविड-१९, मानसिक आरोग्य, माध्यमिक शिक्षक, ग्रामीण शिक्षक, शहरी शिक्षक, शिक्षकांचे मानसिक स्वास्थ्य, ऑनलाइन अध्यापन.

१. प्रस्तावना :

शिक्षणव्यवस्था ही कोणत्याही समाजाच्या विकासाचा महत्त्वाचा आधारस्तंभ आहे. या व्यवस्थेच्या केंद्रस्थानी शिक्षकाची भूमिका असते. शिक्षकाचे ज्ञान, कौशल्य, मानसिक स्थैर्य, भावनिक समतोल आणि व्यावसायिक बांधिलकी यांचा विद्यार्थ्यांच्या शैक्षणिक विकासावर प्रत्यक्ष किंवा अप्रत्यक्ष परिणाम होत असतो.

कोविड-१९ महामारीने शिक्षण क्षेत्रासमोर अभूतपूर्व आव्हाने निर्माण केली. शाळा बंद झाल्यानंतर पारंपरिक वर्गाधारित अध्यापनाऐवजी ऑनलाइन व डिजिटल अध्यापनाचा स्वीकार करावा लागला. या बदलासाठी शिक्षकांना अल्पावधीत तांत्रिक साधने, ऑनलाइन प्लॅटफॉर्म, डिजिटल अध्यापन पद्धती आणि आभासी संवाद यांचा वापर शिकावा लागला. ग्रामीण भागातील तांत्रिक पायाभूत सुविधांची मर्यादा, इंटरनेटची उपलब्धता, विद्यार्थ्यांकडे साधनांची कमतरता आणि शहरी भागातील वाढता डिजिटल कामाचा ताण या दोन्ही परिस्थितींनी शिक्षकांच्या कामाचे स्वरूप बदलले.

माध्यमिक शिक्षकांच्या मानसिक आरोग्याचा कोविड काळातील अभ्यास विशेष महत्त्वाचा ठरतो. कारण माध्यमिक स्तरावरील विद्यार्थ्यांच्या शैक्षणिक प्रगतीसोबतच परीक्षा, करिअर, स्पर्धात्मक शिक्षण आणि भावनिक विकास यांची जबाबदारी शिक्षकांवर असते.

मलेशियातील माध्यमिक शिक्षकांच्या अभ्यासात मानसिक स्थिती, ई-अध्यापन क्षमता आणि कार्यप्रेरणा यांचा परस्परसंबंध तपासण्यात आला. या अभ्यासातून मानसिक स्थिती आणि ई-अध्यापनाशी संबंधित व्यावसायिक क्षमता यांचा परस्परसंबंध महत्त्वाचा असल्याचे दिसून आले.

मलेशियातील 1,185 माध्यमिक शिक्षकांच्या अभ्यासात कोविड काळातील technostress चा अभ्यास करण्यात आला. ऑनलाइन अध्यापनाशी संबंधित तांत्रिक व व्यावसायिक घटकांमुळे शिक्षकांवरील ताणाचे स्वरूप बदलल्याचे आढळते.

यावरून कोविड काळातील माध्यमिक शिक्षकांचे मानसिक आरोग्य हे केवळ वैयक्तिक बाब नसून शिक्षणातील तांत्रिक, सामाजिक, संस्थात्मक आणि व्यावसायिक परिस्थितींशी संबंधित बहुआयामी संकल्पना आहे.

२. सशोधनाची गरज :

कोविड काळात माध्यमिक शिक्षकांना अध्यापनाच्या पद्धतीत अचानक बदल करावा लागला. ग्रामीण आणि शहरी भागातील डिजिटल सुविधा, इंटरनेट उपलब्धता, विद्यार्थ्यांची सामाजिक-आर्थिक परिस्थिती, शाळेचे व्यवस्थापन आणि संस्थात्मक पाठबळ यांमध्ये फरक असू शकतो.

तथापि, माध्यमिक शिक्षकांच्या मानसिक आरोग्याचा ग्रामीण-शहरी तुलनात्मक अभ्यास भारतीय संदर्भात तुलनेने मर्यादित दिसतो. विशेषतः ६०० शिक्षकांच्या मोठ्या नमुन्यावर ग्रामीण-शहरी आणि लिंगनिहाय मानसिक आरोग्याचे सांख्यिकीय विश्लेषण करणे संशोधनाच्या दृष्टीने महत्त्वाचे आहे.

३. संशोधन समस्या :

"कोविड काळातील ग्रामीण व शहरी भागातील माध्यमिक स्तरावरील शिक्षकांच्या मानसिक आरोग्याचा तुलनात्मक अभ्यास." ही समस्या प्रस्तुत संशोधकाच्या व्यापक Ph.D. संशोधन विषयातील मानसिक आरोग्य या प्रमुख चलाच्या आधारे तपासण्यात आली आहे.

४. संशोधनाची उद्दिष्टे :

१. कोविड काळातील माध्यमिक शिक्षकांच्या मानसिक आरोग्याची पातळी निश्चित करणे.

२. ग्रामीण व शहरी माध्यमिक शिक्षकांच्या मानसिक आरोग्याची तुलना करणे.

३. पुरुष व महिला माध्यमिक शिक्षकांच्या मानसिक आरोग्याची तुलना करणे.

४. ग्रामीण पुरुष व ग्रामीण महिला शिक्षकांच्या मानसिक आरोग्याची तुलना करणे.

५. शहरी पुरुष व शहरी महिला शिक्षकांच्या मानसिक आरोग्याची तुलना करणे.

६. ग्रामीण पुरुष व शहरी पुरुष शिक्षकांच्या मानसिक आरोग्याची तुलना करणे.

७. ग्रामीण महिला व शहरी महिला शिक्षकांच्या मानसिक आरोग्याची तुलना करणे.

५. संशोधन गृहीतके :

शून्य गृहीतक १

ग्रामीण व शहरी माध्यमिक शिक्षकांच्या मानसिक आरोग्याच्या सरासरी गुणांमध्ये सांख्यिकीयदृष्ट्या लक्षणीय फरक नाही.

शून्य गृहीतक २

पुरुष व महिला माध्यमिक शिक्षकांच्या मानसिक आरोग्याच्या सरासरी गुणांमध्ये सांख्यिकीयदृष्ट्या लक्षणीय फरक नाही.

शून्य गृहीतक ३

ग्रामीण पुरुष व ग्रामीण महिला शिक्षकांच्या मानसिक आरोग्याच्या सरासरी गुणांमध्ये सांख्यिकीयदृष्ट्या लक्षणीय फरक नाही.

शून्य गृहीतक ४

शहरी पुरुष व शहरी महिला शिक्षकांच्या मानसिक आरोग्याच्या सरासरी गुणांमध्ये सांख्यिकीयदृष्ट्या लक्षणीय फरक नाही.

शून्य गृहीतक ५

ग्रामीण पुरुष व शहरी पुरुष शिक्षकांच्या मानसिक आरोग्याच्या सरासरी गुणांमध्ये सांख्यिकीयदृष्ट्या लक्षणीय फरक नाही.

शून्य गृहीतक ६

ग्रामीण महिला व शहरी महिला शिक्षकांच्या मानसिक आरोग्याच्या सरासरी गुणांमध्ये सांख्यिकीयदृष्ट्या लक्षणीय फरक नाही.

६. संशोधन पद्धती :

प्रस्तुत संशोधनासाठी **वर्णनात्मक सर्वेक्षण पद्धतीतील तुलनात्मक संशोधन पद्धतीचा** वापर करण्यात आला.

६.१ जनसंख्या :

कोविड काळात कार्यरत असलेले माध्यमिक स्तरावरील शिक्षक ही प्रस्तुत संशोधनाची लोकसंख्या मानण्यात आली.

६.२ नमुना :

एकूण ६०० माध्यमिक शिक्षकांचा नमुना अभ्यासासाठी घेण्यात आला.

गट	नमुना
ग्रामीण	300
शहरी	300
पुरुष	300
महिला	300
एकूण	600

ग्रामीण व शहरी गटांमध्ये प्रत्येकी १५० पुरुष व १५० महिला शिक्षकांचा समावेश आहे.

७. माहिती संकलन व सांख्यिकीय विश्लेषण :

प्राप्त माहितीचे संगणकीय पद्धतीने वर्गीकरण व विश्लेषण करण्यात आले. पुढील सांख्यिकीय तंत्रांचा वापर करण्यात आला :

१. सरासरी (Mean)

२. मध्यिका (Median)

३. बहुलक (Mode)

४. प्रमाणित विचलन (Standard Deviation)

५. स्वतंत्र नमुना t-test

६. One Sample t-test

८. **माहितीचे विश्लेषण :**

तक्ता १ : ग्रामीण-शहरी व लिंगनिहाय मानसिक आरोग्याचे वर्णनात्मक सांख्यिकी

गट	N	Mean	Median	Mode	SD
ग्रामीण पुरुष	150	126.03	130.00	150	21.66
ग्रामीण महिला	150	127.21	132.50	150	19.97
शहरी पुरुष	150	130.13	134.50	150	16.50
शहरी महिला	150	128.84	133.00	150	18.45
ग्रामीण एकूण	300	126.62	131.50	150	20.81
शहरी एकूण	300	129.49	134.00	150	17.49
पुरुष एकूण	300	128.08	133.00	150	19.33
महिला एकूण	300	128.02	133.00	150	19.21
एकूण	600	128.05	133.00	150	19.26

स्रोत : संशोधकाच्या ६०० शिक्षकांच्या माहितीवरील सांख्यिकीय विश्लेषण.

निष्कर्षात्मक निरीक्षण :

एकूण ६०० शिक्षकांची मानसिक आरोग्य सरासरी **128.05** आढळली. ग्रामीण शिक्षकांची सरासरी **126.62**, तर शहरी शिक्षकांची सरासरी **129.49** होती. शहरी शिक्षकांची सरासरी ग्रामीण शिक्षकांपेक्षा 2.87 गुणांनी अधिक होती.

पुरुष शिक्षकांची सरासरी **128.08**, तर महिला शिक्षकांची सरासरी **128.02** होती. दोन्ही गटांमध्ये सरासरी गुण जवळजवळ समान आढळले.

ग्रामीण व शहरी शिक्षकांची तुलना :

तुलना	N	Mean 1	Mean 2	t	df	p
ग्रामीण विरुद्ध शहरी	300	126.62	129.49	-1.829	598	.068

निष्कर्ष :

ग्रामीण व शहरी शिक्षकांच्या मानसिक आरोग्याच्या सरासरी गुणांमध्ये 2.87 गुणांचा फरक आढळला. तथापि, t = -1.829 आणि p = .068 असल्यामुळे 0.05 पातळीवर हा फरक सांख्यिकीयदृष्ट्या लक्षणीय नाही.

त्यामुळे **शून्य गृहीतक १ स्वीकारले जाते.**

९. पुरुष व महिला शिक्षकांची तुलना

तुलना	N	Mean 1	Mean 2	t	df	p
पुरुष विरुद्ध महिला	300	128.08	128.02	0.036	598	.971

निष्कर्ष :

पुरुष आणि महिला शिक्षकांच्या सरासरी मानसिक आरोग्य गुणांमध्ये केवळ 0.06 गुणांचा फरक आढळला. p = .971 असल्याने हा फरक अत्यंत अल्प असून सांख्यिकीयदृष्ट्या लक्षणीय नाही. त्यामुळे **शून्य गृहीतक २ स्वीकारले जाते.**

१०. इतर तुलनात्मक विश्लेषण :

तुलना	t	df	p	निष्कर्ष
ग्रामीण पुरुष – ग्रामीण महिला	-0.491	298	.624	लक्षणीय फरक नाही
शहरी पुरुष – शहरी महिला	0.640	298	.523	लक्षणीय फरक नाही
ग्रामीण पुरुष – शहरी पुरुष	-1.847	298	.066	लक्षणीय फरक नाही
ग्रामीण महिला – शहरी महिला	-0.736	298	.463	लक्षणीय फरक नाही

वरील सर्व तुलनांमध्ये p > .05 असल्यामुळे कोणत्याही तुलनेत सांख्यिकीयदृष्ट्या लक्षणीय फरक आढळला नाही.

११. एकूण नमुन्याची तटस्थ मध्यबिंदूशी तुलना :

मानसिक आरोग्याच्या एकूण गुणांची सरासरी 128.05 होती. साधनाच्या विश्लेषणात 90 हा तटस्थ मध्यबिंदू धरून One Sample t-test करण्यात आला.

N	Sample Mean	Test Mean	t	df	p
600	128.05	90	48.405	599	< .001

निष्कर्ष :

एकूण नमुन्याची सरासरी 128.05 ही तटस्थ मध्यबिंदू 90 पेक्षा लक्षणीयरीत्या अधिक आहे. $t = 48.405$ आणि $p < .001$ असल्यामुळे हा फरक सांख्यिकीयदृष्ट्या अत्यंत लक्षणीय आहे.

मात्र या निष्कर्षाचा अर्थ **"सर्व शिक्षकांचे मानसिक आरोग्य निश्चितपणे चांगले आहे"** असा थेट काढणे योग्य ठरणार नाही. कारण मानसिक आरोग्याच्या उच्च गुणांचा अर्थ साधनातील सकारात्मक/नकारात्मक विधानांच्या scoring direction वर अवलंबून असतो. त्यामुळे प्रकाशनाच्या अंतिम आवृत्तीत scoring key आणि norm-based interpretation स्पष्ट करणे आवश्यक आहे.

१२. संशोधन निष्कर्ष :

प्रस्तुत संशोधनातून पुढील निष्कर्ष प्राप्त झाले :

१. ६०० माध्यमिक शिक्षकांच्या मानसिक आरोग्य गुणांची सरासरी 128.05 आढळली.

२. ग्रामीण शिक्षकांची मानसिक आरोग्य सरासरी 126.62 होती.

३. शहरी शिक्षकांची मानसिक आरोग्य सरासरी 129.49 होती.

४. शहरी शिक्षकांची सरासरी ग्रामीण शिक्षकांपेक्षा किंचित अधिक असली तरी हा फरक सांख्यिकीयदृष्ट्या लक्षणीय नाही.

५. पुरुष शिक्षकांची सरासरी 128.08 आणि महिला शिक्षकांची सरासरी 128.02 होती.

६. पुरुष व महिला शिक्षकांच्या मानसिक आरोग्यामध्ये कोणताही सांख्यिकीयदृष्ट्या लक्षणीय फरक आढळला नाही.

७. ग्रामीण पुरुष व ग्रामीण महिला शिक्षकांमध्ये लक्षणीय फरक आढळला नाही.

८. शहरी पुरुष व शहरी महिला शिक्षकांमध्ये लक्षणीय फरक आढळला नाही.

९. ग्रामीण पुरुष व शहरी पुरुष यांच्यातील फरक 0.05 पातळीवर लक्षणीय आढळला नाही.

१०. ग्रामीण महिला व शहरी महिला यांच्यातही लक्षणीय फरक आढळला नाही.

११. एकूण नमुन्याची सरासरी तटस्थ मध्यबिंदूपेक्षा लक्षणीयरीत्या अधिक आढळली.

१३. शैक्षणिक परिणाम :

प्रस्तुत संशोधनाच्या आधारे पुढील बाबी शिक्षणव्यवस्थेसाठी महत्त्वाच्या ठरतात :

१. माध्यमिक शिक्षकांसाठी मानसिक आरोग्यविषयक समुपदेशन व्यवस्था विकसित करणे.

२. ऑनलाइन व डिजिटल अध्यापनासाठी सातत्यपूर्ण तांत्रिक प्रशिक्षण देणे.

३. शिक्षकांच्या डिजिटल कामाचा ताण कमी करण्यासाठी संस्थात्मक धोरणे विकसित करणे.

४. ग्रामीण शाळांमध्ये डिजिटल पायाभूत सुविधा मजबूत करणे.

५. शिक्षकांना कामाच्या वेळेतील स्पष्टता व विश्रांतीची संधी उपलब्ध करून देणे.

६. शाळास्तरावर शिक्षक wellbeing कार्यक्रम राबविणे.

७. महामारीसारख्या आपत्कालीन परिस्थितीत शिक्षकांसाठी मानसिक आरोग्य सहाय्य प्रणाली तयार करणे.

१४. पुढील संशोधनासाठी सूचना :

१. मानसिक आरोग्य, अध्यापन क्षमता आणि अध्यापन परिणामकारकता या तीनही चलांचा एकत्रित अभ्यास करावा.

२. मानसिक आरोग्य व अध्यापन परिणामकारकता यांच्यातील सहसंबंध तपासावा.

३. ग्रामीण व शहरी शिक्षकांमध्ये अध्यापन क्षमतेचा तुलनात्मक अभ्यास करावा.

४. मानसिक आरोग्याचा अध्यापन परिणामकारकतेवर होणारा परिणाम Regression Analysis द्वारे तपासावा.

५. शिक्षकांच्या मानसिक आरोग्यावर डिजिटल ताण, संस्थात्मक पाठबळ आणि अध्यापन अनुभव यांचा परिणाम तपासावा.

१५. निष्कर्ष :

कोविड-१९ महामारीने माध्यमिक शिक्षकांच्या व्यावसायिक जीवनात मोठे परिवर्तन घडवून आणले. ऑनलाइन अध्यापन, तांत्रिक अडचणी, सामाजिक अलगाव, कामातील अनिश्चितता आणि महामारीशी संबंधित चिंता या सर्व बाबींनी शिक्षकांच्या मानसिक आरोग्याला आव्हान दिले.

प्रस्तुत ६०० माध्यमिक शिक्षकांच्या अभ्यासात ग्रामीण व शहरी शिक्षकांच्या मानसिक आरोग्याच्या सरासरी गुणांमध्ये फरक आढळला असला तरी तो सांख्यिकीयदृष्ट्या लक्षणीय नव्हता. त्याचप्रमाणे पुरुष व महिला शिक्षकांच्या मानसिक आरोग्यातही कोणताही लक्षणीय फरक आढळला नाही.

या निष्कर्षांवरून कोविड काळातील माध्यमिक शिक्षकांचे मानसिक आरोग्य समजून घेताना केवळ ग्रामीण-शहरी स्थान किंवा लिंग या पार्श्वभूमी घटकांवर अवलंबून राहणे पुरेसे नाही. डिजिटल ताण, संस्थात्मक पाठबळ, कामाचा भार, व्यावसायिक अनिश्चितता, सामाजिक आधार आणि भावनिक लवचिकता यांसारख्या घटकांचा एकत्रित विचार करणे आवश्यक आहे.

त्यामुळे भविष्यातील शिक्षक शिक्षण व शैक्षणिक धोरणांमध्ये **"शिक्षकांचे मानसिक आरोग्य" हा शिक्षक गुणवत्ता विकासाचा अविभाज्य घटक** म्हणून स्वीकारणे आवश्यक आहे.

संदर्भसूची :-

1. De Laet, H., Verhavert, Y., De Martelaer, K., Zinzen, E., Deliens, T., & Van Hoof, E. (2022). Impact of the COVID-19 pandemic on risk of burn-out syndrome and recovery need

among secondary school teachers in Flanders: A prospective study. *Frontiers in Public Health, 10*, 1046435. doi:10.3389/fpubh.2022.1046435.

2. Dolighan, T., & Owen, M. (2021). Teacher efficacy for online teaching during the COVID-19 pandemic. *Brock Education: A Journal of Educational Research and Practice, 30*(1), 95–116. doi:10.26522/BROCKED.V30I1.851.
3. Nikolopoulou, K., & Kousloglou, M. (2022). Online teaching in COVID-19 pandemic: Secondary school teachers' beliefs on teaching presence and school support. *Education Sciences, 12*(3), 216. doi:10.3390/educsci12030216.
4. Setua, C. (2022). Effectiveness of techno-pedagogical skills of secondary school teachers on online teaching during COVID-19 pandemic. *MIER Journal of Educational Studies Trends and Practices, 12*(1), 171–183. doi:10.52634/mier/2022/v12/i1/1842.
5. Wahab, N. Y. A., Mahat, H., Razali, M. M., Daud, N. M., & Baharudin, N. H. (2022). A study of technostress levels of secondary school teachers in Malaysia during the COVID-19 pandemic. *International Journal of Learning, Teaching and Educational Research, 21*(4), 380–394.
6. Mohd Nor, M. A., et al. (2021). Secondary school teachers psychological status and competencies in e-teaching during Covid-19. *Heliyon*. doi:10.1016/j.heliyon.2021.e08238.

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2026 Page No. : 108-116

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES PRINT RESEARCH JOURNAL

बेमेतरा जिले की ग्रामीण महिलाओं की वित्तीय साक्षरता एवं वित्तीय निर्णय क्षमता का अध्ययन

डॉ. शारदा वर्मा, अतिथि प्राध्यापक–अर्थशास्त्र,
चन्दुलाल चन्द्राकर शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, धमधा, जिला–दुर्ग (छ.ग.)
अर्चना सिन्हा, पूर्व छात्रा–वाणिज्य,
भिलाई महिला महाविद्यालय, हॉस्पिटल सेक्टर, भिलाई, जिला–दुर्ग (छ.ग.)

शोध सारांश :

प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य बेमेतरा जिले की ग्रामीण महिलाओं के वित्तीय साक्षरता स्तर तथा उनकी वित्तीय निर्णय क्षमता का अध्ययन करना है। अध्ययन में वित्तीय साक्षरता को बचत, ब्याज एवं ऋण, बैंकिंग, बीमा, निवेश तथा डिजिटल वित्तीय सेवाओं के प्रमुख आयामों के आधार पर समझने का प्रयास किया गया है। अध्ययन हेतु बेमेतरा जिले के चार विकासखंडों से चयनित ग्रामों की ग्रामीण महिलाओं को अध्ययन की इकाई के रूप में सम्मिलित किया गया तथा प्राथमिक आँकड़ों का संकलन संरचित प्रश्नावली के माध्यम से किया गया। प्राप्त आँकड़ों का विश्लेषण वर्णनात्मक एवं उपयुक्त सांख्यिकीय विधियों के माध्यम से किया गया। अध्ययन के परिणामों से स्पष्ट हुआ कि बेमेतरा जिले की ग्रामीण महिलाओं का समग्र वित्तीय साक्षरता स्तर निम्न पाया गया। वित्तीय साक्षरता के विभिन्न आयामों में बचत एवं सामान्य बैंकिंग संबंधी समझ अपेक्षाकृत बेहतर रही, जबकि ब्याज एवं ऋण, बीमा, निवेष तथा डिजिटल वित्तीय सेवाओं से संबंधित ज्ञान एवं व्यावहारिक समझ अपेक्षाकृत कमजोर पाई गई। अध्ययन से यह भी स्पष्ट हुआ कि वित्तीय साक्षरता और वित्तीय निर्णय क्षमता के मध्य धनात्मक एवं सार्थक संबंध पाया जाता है। वित्तीय विषयों की बेहतर समझ रखने वाली महिलाएँ वित्तीय विकल्पों की तुलना करने, जोखिम एवं लाभ का आकलन करने तथा अपनी आवश्यकताओं के अनुरूप उपयुक्त वित्तीय निर्णय लेने में अपेक्षाकृत अधिक सक्षम पाई गईं। अतः ग्रामीण महिलाओं के वित्तीय सशक्तीकरण के लिए वित्तीय शिक्षा, बैंकिंग जागरूकता, निवेश एवं बीमा संबंधी जानकारी तथा सुरक्षित डिजिटल वित्तीय व्यवहार को बढ़ावा देना आवश्यक है।

शब्दकुंजी : वित्तीय साक्षरता, वित्तीय निर्णय क्षमता, ग्रामीण महिलाएँ, वित्तीय समावेशन, डिजिटल वित्तीय सेवाएँ, वित्तीय सशक्तीकरण।

प्रस्तावना :

वर्तमान समय में आर्थिक विकास की अवधारणा केवल आय और उत्पादन में वृद्धि तक सीमित नहीं है,

बल्कि इसमें समाज के विभिन्न वर्गों की आर्थिक सहभागिता, वित्तीय संसाधनों तक पहुँच तथा उपलब्ध संसाधनों के विवेकपूर्ण उपयोग को भी महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। इस संदर्भ में वित्तीय समावेशन और वित्तीय साक्षरता आर्थिक एवं सामाजिक विकास के महत्वपूर्ण आधार माने जाते हैं। वित्तीय सेवाओं की उपलब्धता तभी प्रभावी हो सकती है, जब व्यक्ति बैंकिंग, बचत, ऋण, बीमा, निवेश तथा डिजिटल वित्तीय सेवाओं से संबंधित पर्याप्त जानकारी रखता हो और अपनी आवश्यकताओं के अनुरूप उनका उचित उपयोग करने में सक्षम हो। इसलिए वित्तीय साक्षरता व्यक्ति के वित्तीय व्यवहार, आर्थिक सुरक्षा तथा वित्तीय निर्णयों को प्रभावित करने वाला महत्वपूर्ण कारक है। ग्रामीण अर्थव्यवस्था में महिलाओं की भूमिका महत्वपूर्ण और बहुआयामी है। ग्रामीण महिलाएँ कृषि, कृषि–मजदूरी, पशुपालन, घरेलू उत्पादन, स्वरोजगार, लघु व्यवसाय तथा अन्य आय–सृजन गतिविधियों में प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से योगदान देती हैं। इसके बावजूद अनेक परिस्थितियों में आय, बचत, ऋण, निवेश तथा अन्य महत्वपूर्ण आर्थिक निर्णयों में उनकी भागीदारी सीमित रहती है। वित्तीय संस्थाओं एवं वित्तीय उत्पादों की जानकारी का अभाव, सीमित वित्तीय प्रशिक्षण, कम आय तथा पारंपरिक सामाजिक–आर्थिक परिस्थितियाँ उनकी वित्तीय निर्णय क्षमता को प्रभावित कर सकती हैं। अतः ग्रामीण महिलाओं की वित्तीय साक्षरता का अध्ययन उनके आर्थिक सशक्तीकरण को समझने की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। वित्तीय साक्षरता केवल बैंक खाता रखने अथवा डिजिटल भुगतान करने तक सीमित अवधारणा नहीं है। इसमें आय–व्यय का नियोजन, बचत की आवश्यकता, ब्याज एवं ऋण की लागत, बीमा, निवेश, वित्तीय जोखिम तथा विभिन्न वित्तीय उत्पादों की समझ भी सम्मिलित होती है। वित्तीय रूप से जागरूक व्यक्ति उपलब्ध विकल्पों का मूल्यांकन करके अपनी आर्थिक आवश्यकताओं के अनुरूप निर्णय लेने में अपेक्षाकृत अधिक सक्षम हो सकता है। इसी प्रकार वित्तीय निर्णय क्षमता का संबंध महिलाओं की बचत, ऋण, निवेश, बीमा, खर्च तथा परिवार के अन्य आर्थिक निर्णयों में स्वतंत्र अथवा सहभागी भूमिका से है। इसलिए वित्तीय साक्षरता और वित्तीय निर्णय क्षमता को परस्पर संबंधित अवधारणाओं के रूप में देखा जा सकता है।

भारत में बैंकिंग सेवाओं के विस्तार, वित्तीय समावेशन कार्यक्रमों, स्वयं सहायता समूहों, सूक्ष्म वित्त तथा डिजिटल भुगतान जैसी व्यवस्थाओं ने ग्रामीण महिलाओं को औपचारिक वित्तीय प्रणाली से जोड़ने के अवसर बढ़ाए हैं। किंतु वित्तीय सेवा तक पहुँच और उसका प्रभावी उपयोग एक समान नहीं है। किसी महिला के पास बैंक खाता होना यह आवश्यक रूप से नहीं दर्शाता कि वह ब्याज, ऋण की शर्तों, बीमा अथवा निवेश विकल्पों को पर्याप्त रूप से समझती है। इसी कारण ग्रामीण महिलाओं के अध्ययन में वित्तीय सेवाओं की उपलब्धता के साथ उनके वित्तीय ज्ञान, व्यवहार और निर्णय क्षमता का मूल्यांकन आवश्यक हो जाता है। छत्तीसगढ़ की ग्रामीण अर्थव्यवस्था में महिलाओं की आर्थिक सहभागिता को देखते हुए बेमेतरा जिले की ग्रामीण महिलाओं की वित्तीय स्थिति का अध्ययन विशेष महत्व रखता है। महिलाओं की आय, शिक्षा, व्यवसाय, बैंकिंग अनुभव, स्वयं सहायता समूह की सदस्यता, वित्तीय प्रशिक्षण तथा डिजिटल वित्तीय सेवाओं के उपयोग जैसे कारक उनकी वित्तीय साक्षरता और निर्णय क्षमता को प्रभावित कर सकते हैं। अतः प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य बेमेतरा जिले की ग्रामीण महिलाओं की वित्तीय साक्षरता एवं वित्तीय निर्णय क्षमता का अध्ययन करना तथा दोनों के मध्य संबंध को समझना है। साथ ही, महिलाओं की सामाजिक–आर्थिक विशेषताओं के आधार पर वित्तीय साक्षरता एवं निर्णय क्षमता में होने वाले अंतर का विश्लेषण करने का प्रयास किया जाएगा। यह अध्ययन ग्रामीण महिला आर्थिक सशक्तीकरण,

वित्तीय समावेशन तथा ग्रामीण आर्थिक विकास के संदर्भ में उपयोगी निष्कर्ष प्रदान कर सकता है।

साहित्य समीक्षा :

वित्तीय साक्षरता वर्तमान समय में व्यक्तियों की वित्तीय सुरक्षा, आर्थिक व्यवहार तथा उचित वित्तीय निर्णय लेने की क्षमता का महत्वपूर्ण आधार मानी जाती है। विशेष रूप से महिलाओं के संदर्भ में वित्तीय ज्ञान का संबंध उनकी आर्थिक भागीदारी, वित्तीय स्वतंत्रता तथा परिवार के वित्तीय निर्णयों में सहभागिता से देखा जाता है।

ओईसीडी (2013) के अध्ययन में महिलाओं की वित्तीय साक्षरता में विद्यमान लैंगिक अंतर तथा वित्तीय शिक्षा की आवश्यकता को रेखांकित किया गया है। अध्ययन के अनुसार महिलाओं में वित्तीय ज्ञान, कौशल और वित्तीय निर्णयों के प्रति आत्मविश्वास अपेक्षाकृत कम पाया जाता है।

जयंती एवं राउ (2019) ने तमिलनाडु के ग्रामीण क्षेत्रों के 126 परिवारों का अध्ययन करते हुए वित्तीय साक्षरता के निर्धारकों का विश्लेषण किया। अध्ययन में शिक्षा, वैवाहिक स्थिति, परिवार के प्रकार तथा बैंक से संबंध का वित्तीय साक्षरता के साथ सकारात्मक संबंध पाया गया, जबकि आयु, लिंग, व्यवसाय तथा आश्रितों की संख्या का संबंध सांख्यिकीय रूप से सार्थक नहीं पाया गया। अध्ययन में ग्रामीण क्षेत्रों में वित्तीय साक्षरता बढ़ाने के लिए बैंकों द्वारा वित्तीय शिक्षा, प्रशिक्षण एवं जागरूकता कार्यक्रम संचालित करने की आवश्यकता पर बल दिया गया।

हरिकृष्णन् एवं कुमारी (2020) ने हिमाचल प्रदेश के हमीरपुर जिले की ग्रामीण महिलाओं की वित्तीय साक्षरता का अध्ययन 200 महिलाओं के प्राथमिक आँकड़ों के आधार पर किया। अध्ययन में ग्रामीण महिलाओं की वित्तीय जानकारी तथा वित्तीय निर्णयों में उनकी भागीदारी से संबंधित स्थिति का परीक्षण किया गया, जिससे ग्रामीण महिलाओं के लिए वित्तीय जागरूकता को महत्वपूर्ण माना गया।

राजन एवं अन्य (2020) ने पंजाब के जालंधर जिले की 335 ग्रामीण महिलाओं का अध्ययन करते हुए वित्तीय जागरूकता और बचत एवं निवेश व्यवहार के बीच संबंध का परीक्षण किया। अध्ययन में वित्तीय नियंत्रण, वित्तीय नियोजन, वित्तीय उत्पादों के चयन तथा वित्तीय साक्षरता जैसे आयामों को शामिल किया गया। इससे स्पष्ट होता है कि वित्तीय ज्ञान महिलाओं के बचत एवं निवेश व्यवहार को प्रभावित करने वाला महत्वपूर्ण घटक है।

कोचर एवं अन्य (2022) ने भारत के राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन के संदर्भ में महिलाओं की वित्तीय पहुँच और घरेलू निर्णय क्षमता का अध्ययन किया। उनके निष्कर्षों से पता चला कि वित्तीय पहुँच और ऋण की उपलब्धता महिलाओं की निर्णय क्षमता को प्रभावित कर सकती है, हालांकि इसका प्रभाव ऋण की मात्रा और कार्यक्रम के प्रभावी क्रियान्वयन पर भी निर्भर करता है।

उपरोक्त साहित्य से स्पष्ट होता है कि वित्तीय साक्षरता महिलाओं के बचत, ऋण, निवेश, वित्तीय व्यवहार तथा निर्णय क्षमता से संबंधित महत्वपूर्ण कारक है। तथापि, बेमेतरा जिले की ग्रामीण महिलाओं के संदर्भ में वित्तीय साक्षरता के विभिन्न आयामों तथा उनके वित्तीय निर्णय क्षमता पर प्रभाव का स्थानीय स्तर पर अध्ययन अपेक्षाकृत सीमित दिखाई देता है। प्रस्तुत अध्ययन इसी शोध–अंतर को ध्यान में रखते हुए बेमेतरा जिले की ग्रामीण महिलाओं की वित्तीय साक्षरता एवं वित्तीय निर्णय क्षमता का अध्ययन करता है।

उद्देश्य :

- बेमेतरा जिले की ग्रामीण महिलाओं के वित्तीय साक्षरता स्तर का अध्ययन करना।

- बेमेतरा जिले की ग्रामीण महिलाओं की वित्तीय निर्णय क्षमता का मूल्यांकन करना।

परिकल्पनाएँ :

- बेमेतरा जिले की ग्रामीण महिलाओं का वित्तीय साक्षरता स्तर निम्न है।
- बेमेतरा जिले की ग्रामीण महिलाओं की वित्तीय साक्षरता का प्रभाव उनकी वित्तीय निर्णय क्षमता पर पड़ता है।

शोध प्रविधि :

प्रस्तुत अध्ययन वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक शोध प्रविधि पर आधारित रहा। अध्ययन का क्षेत्र बेमेतरा जिले के ग्रामीण क्षेत्र को निर्धारित किया गया। अध्ययन में प्राथमिक एवं द्वितीयक दोनों प्रकार के आँकड़ों का उपयोग किया गया। प्राथमिक आँकड़ों का संकलन चयनित ग्रामीण महिलाओं से संरचित साक्षात्कार अनुसूची/प्रश्नावली के माध्यम से किया गया, जिसमें वित्तीय साक्षरता तथा वित्तीय निर्णय क्षमता से संबंधित प्रश्न सम्मिलित किए गए। नमूना चयन के लिए बेमेतरा जिले के चारों विकासखंड (नवागढ़, बेमेतरा, साजा एवं बेरला) को स्तर (Strata) मानते हुए प्रत्येक विकासखंड से दो गाँवों का चयन सरल यादृच्छिक नमूना पद्धति (Simple Random Sampling) द्वारा किया गया। इस प्रकार कुल 8 गाँव चयनित किए गए तथा प्रत्येक चयनित गाँव से 20 ग्रामीण महिलाओं का चयन किया गया। फलतः अध्ययन में कुल 160 ग्रामीण महिला उत्तरदाताओं को सम्मिलित किया गया। वित्तीय साक्षरता के आकलन के लिए बचत, बजट, ब्याज, ऋण, बीमा, निवेश, बैंकिंग तथा डिजिटल वित्तीय सेवाओं से संबंधित ज्ञान एवं समझ को आधार बनाया गया, जबकि वित्तीय निर्णय क्षमता का आकलन बचत, ऋण, निवेश, व्यय, बीमा तथा घरेलू वित्तीय निर्णयों में महिलाओं की सहभागिता के आधार पर किया गया।

प्राप्त प्राथमिक आँकड़ों का वर्गीकरण, सारणीकरण एवं विश्लेषण प्रतिशत, माध्य तथा मानक विचलन जैसी सांख्यिकीय विधियों द्वारा किया गया। वित्तीय साक्षरता एवं वित्तीय निर्णय क्षमता के मध्य संबंध का परीक्षण करने के लिए आवश्यकतानुसार सहसंबंध एवं प्रतिगमन विश्लेषण का प्रयोग किया गया। अध्ययन में प्रयुक्त द्वितीयक आँकड़े पुस्तकों, शोध–पत्रों, सरकारी रिपोर्टों, जनगणना संबंधी प्रकाशनों तथा बैंकिंग एवं वित्तीय संस्थाओं से संबंधित विश्वसनीय प्रकाशित स्रोतों से प्राप्त किए गए। प्राप्त आँकड़ों के विश्लेषण एवं निष्कर्षों के आधार पर अध्ययन में निर्धारित दोनों शोध–परिकल्पनाओं का परीक्षण किया गया।

अध्ययन क्षेत्र :

बेमेतरा जिला छत्तीसगढ़ के मैदानी क्षेत्र में स्थित एक ग्रामीण–प्रधान जिला है। जनगणना 2011 के अनुसार जिले की कुल जनसंख्या 7,95,759 थी, जिसमें 7,21,192 व्यक्ति ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करते थे। इस प्रकार जिले की लगभग 90.63 प्रतिशत जनसंख्या ग्रामीण थी। ग्रामीण क्षेत्रों में साक्षरता दर लगभग 69.8 प्रतिशत थी, जिसमें पुरुष साक्षरता दर 81.9 प्रतिशत तथा महिला साक्षरता दर 57.8 प्रतिशत थी। इससे ग्रामीण महिलाओं और पुरुषों की साक्षरता में स्पष्ट अंतर दिखाई देता है। जिले की ग्रामीण–प्रधान जनसंख्या, कृषि–आधारित अर्थव्यवस्था तथा महिलाओं की अपेक्षाकृत कम साक्षरता इसे वित्तीय साक्षरता के अध्ययन के लिए उपयुक्त क्षेत्र बनाती है। बैंकिंग सुविधाओं की दृष्टि से जिले में 25 बैंक, 72 शाखाएँ तथा 41 एटीएम उपलब्ध थे, जिनमें 29 बैंक शाखाएँ ग्रामीण क्षेत्रों में संचालित थीं। इस प्रकार जिले में बैंकिंग सुविधाओं का आधार उपलब्ध होने के बावजूद ग्रामीण महिलाओं द्वारा इन वित्तीय सेवाओं के प्रभावी उपयोग के लिए पर्याप्त वित्तीय ज्ञान एवं

जागरूकता आवश्यक है।

आंकड़ों का विश्लेषण :

- **आयुवर्ग** – अध्ययन क्षेत्र की ग्रामीण महिलाओं से प्राप्त आँकड़ों से ज्ञात होता है कि 26–35 वर्ष आयु वर्ग की महिलाएँ सर्वाधिक 30.00 प्रतिशत रहीं। इसके बाद 36–45 वर्ष की 24.38 प्रतिशत तथा 18–25 वर्ष की 21.25 प्रतिशत महिलाएँ पाई गईं। 46–55 वर्ष की महिलाओं का प्रतिशत 15.62 तथा 56 वर्ष एवं अधिक आयु वर्ग का 8.75 प्रतिशत रहा। इससे स्पष्ट होता है कि अध्ययन में युवा एवं मध्यम आयु वर्ग की महिलाओं की भागीदारी अपेक्षाकृत अधिक रही।
- **शैक्षणिक स्तर** – अध्ययन क्षेत्र की ग्रामीण महिलाओं के शैक्षणिक स्तर से ज्ञात होता है कि माध्यमिक स्तर तक शिक्षित महिलाओं का प्रतिशत सर्वाधिक 25.00 रहा। प्राथमिक एवं हाईस्कूल/उच्च माध्यमिक स्तर की महिलाओं का प्रतिशत क्रमशः 22.50 एवं 19.38 पाया गया, जबकि 17.50 प्रतिशत महिलाएँ निरक्षर थीं। स्नातक तथा स्नातकोत्तर एवं अधिक शिक्षित महिलाओं का प्रतिशत क्रमशः 10.62 एवं 5.00 रहा। इससे ग्रामीण महिलाओं में उच्च शिक्षा की भागीदारी अपेक्षाकृत कम होने की स्थिति स्पष्ट होती है।
- **व्यवसाय** – व्यवसाय के आधार पर अध्ययन क्षेत्र की ग्रामीण महिलाओं में गृहिणियों का प्रतिशत सर्वाधिक 38.75 पाया गया। इसके बाद कृषि कार्य से जुड़ी 26.88 प्रतिशत तथा मजदूरी करने वाली 17.50 प्रतिशत महिलाएँ रहीं। स्वरोजगार/लघु व्यवसाय से 9.37 प्रतिशत तथा वेतनभोगी कार्य से 4.38 प्रतिशत महिलाएँ जुड़ी थीं। इससे स्पष्ट होता है कि अध्ययन में अधिकांश महिलाएँ घरेलू, कृषि एवं असंगठित आर्थिक गतिविधियों से संबंधित थीं।
- **बचत संबंधी प्रतिक्रियाएँ** – बचत संबंधी प्रतिक्रियाओं से ज्ञात होता है कि 27.50 प्रतिशत महिलाओं को बचत के मुख्य उद्देश्य की सही जानकारी थी, जबकि 28.75 प्रतिशत महिलाएँ नियमित रूप से बचत करती थीं। 57.50 प्रतिशत महिलाएँ कभी–कभी बचत करती पाई गईं। बचत सूचकांक का औसत स्कोर 2.25/4 अर्थात 56.25 प्रतिशत रहा। इससे स्पष्ट होता है कि बचत वित्तीय साक्षरता का अपेक्षाकृत बेहतर पक्ष है, किंतु नियमित एवं उद्देश्यपूर्ण बचत की प्रवृत्ति अभी पूर्णतः विकसित नहीं है।
- **ब्याज एवं ऋण** – ब्याज एवं ऋण संबंधी प्रतिक्रियाओं से ज्ञात होता है कि केवल 20.00 प्रतिशत महिलाओं को ऋण पर ब्याज लिए जाने के वास्तविक कारण की जानकारी थी। ऋण लेने से पूर्व ब्याज दर एवं पुनर्भुगतान की शर्तों पर विचार करने वाली महिलाओं का प्रतिशत भी केवल 18.75 रहा। इस सूचकांक का औसत स्कोर 1.5625/4 अर्थात 39.06 प्रतिशत प्राप्त हुआ। इससे स्पष्ट होता है कि ग्रामीण महिलाओं में ऋण की लागत एवं पुनर्भुगतान संबंधी वित्तीय समझ अपेक्षाकृत निम्न है।
- **बैंकिंग संबंधी प्रतिक्रियाएँ** – बैंकिंग संबंधी प्रतिक्रियाओं से ज्ञात होता है कि 26.25 प्रतिशत महिलाओं को बैंक खाते के प्रमुख उद्देश्य की सही जानकारी थी, जबकि 23.75 प्रतिशत महिलाएँ स्वयं अपने खाते का संचालन एवं लेन–देन करती थीं। 46.25 प्रतिशत महिलाएँ बैंकिंग कार्यों के लिए परिवार के सदस्य की सहायता लेती थीं। बैंकिंग सूचकांक का औसत स्कोर 2.00/4 अर्थात 50.00 प्रतिशत रहा। इससे स्पष्ट होता है कि बैंकिंग सेवाओं से परिचय तो है, किंतु स्वतंत्र बैंकिंग संचालन की क्षमता अभी सीमित है।
- **बीमा संबंधी प्रतिक्रियाएँ** – बीमा संबंधी प्रतिक्रियाओं से ज्ञात होता है कि केवल 15.62 प्रतिशत महिलाओं

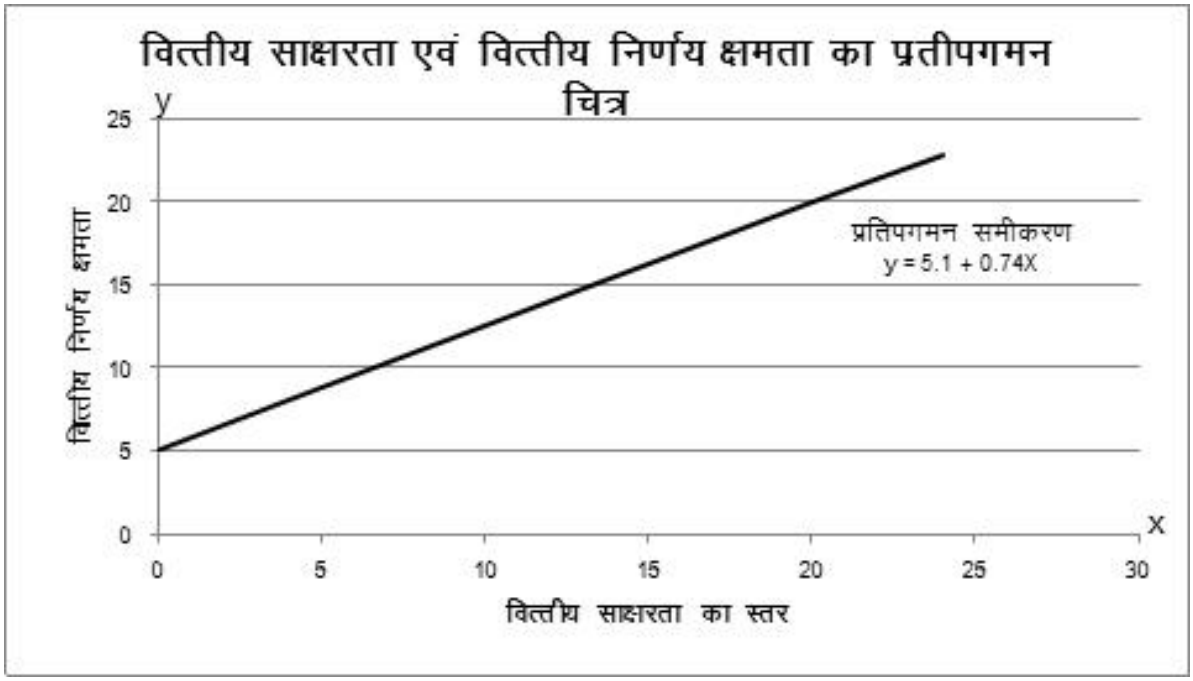
को बीमा के मुख्य उद्देश्य की सही जानकारी थी तथा 13.75 प्रतिशत महिलाएँ बीमा लेते समय कवरेज, प्रीमियम एवं शर्तों पर विचार करती थीं। बीमा सूचकांक का औसत स्कोर 1.1875/4 अर्थात 29.69 प्रतिशत रहा। इससे स्पष्ट होता है कि ग्रामीण महिलाओं में बीमा के जोखिम–सुरक्षा संबंधी उद्देष्य तथा पॉलिसी की शर्तों की समझ अपेक्षाकृत कमजोर है।

- **निवेश संबंधी प्रतिक्रियाएँ** – निवेश संबंधी प्रतिक्रियाओं से ज्ञात होता है कि केवल 12.50 प्रतिशत महिलाओं को निवेश के प्रमुख उद्देश्य की सही जानकारी थी तथा 11.25 प्रतिशत महिलाएँ निवेश का विकल्प चुनते समय लाभ, जोखिम एवं अवधि पर विचार करती थीं। निवेश सूचकांक का औसत स्कोर 0.9375/4 अर्थात 23.44 प्रतिशत रहा, जो सभी सूचकांकों में सबसे निम्न रहा। इससे स्पष्ट होता है कि ग्रामीण महिलाओं में निवेश संबंधी अवधारणाओं एवं जोखिम–लाभ के मूल्यांकन की समझ अपेक्षाकृत कमजोर है।
- **डिजिटल वित्तीय सेवाएँ** – डिजिटल वित्तीय सेवाओं संबंधी प्रतिक्रियाओं से ज्ञात होता है कि केवल 13.75 प्रतिशत महिलाओं को UPI/डिजिटल भुगतान के सही उपयोग की जानकारी थी तथा 12.50 प्रतिशत महिलाएँ OTP एवं PIN को गोपनीय रखने की आवश्यकता समझती थीं। डिजिटल वित्तीय सेवाओं का औसत स्कोर 1.0625/4 अर्थात 26.56 प्रतिशत रहा। इससे स्पष्ट होता है कि ग्रामीण महिलाओं में डिजिटल वित्तीय सेवाओं के उपयोग के साथ–साथ डिजिटल सुरक्षा संबंधी जागरूकता भी अपेक्षाकृत कम है।
- **समेकित वित्तीय साक्षरता** – छहों वित्तीय साक्षरता इंडीकेटरों के समेकित विश्लेषण से ज्ञात होता है कि बचत का औसत स्कोर सर्वाधिक 56.25 प्रतिशत तथा बैंकिंग का 50.0 प्रतिशत रहा, जबकि निवेश का स्कोर सबसे कम 23.44 प्रतिशत पाया गया। बीमा, डिजिटल वित्तीय सेवाओं तथा ब्याज एवं ऋण में भी साक्षरता का स्तर निम्न रहा। सभी सूचकांकों को मिलाकर औसत वित्तीय साक्षरता स्कोर 9.00/24 अर्थात 37.50 प्रतिशत प्राप्त हुआ। अतः समग्र रूप से अध्ययन क्षेत्र की ग्रामीण महिलाओं का वित्तीय साक्षरता स्तर निम्न पाया गया।

परिकल्पना परीक्षण :

- **परिकल्पना–1 :** ''बेमेतरा जिले की ग्रामीण महिलाओं का वित्तीय साक्षरता स्तर निम्न है'' परिकल्पना की जांच हेतु किए गए परीक्षण में अध्ययन क्षेत्र की ग्रामीण महिलाओं से प्राप्त आँकड़ों के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि उनका वित्तीय साक्षरता स्तर अपेक्षाकृत निम्न है। 160 उत्तरदाताओं के वित्तीय साक्षरता स्कोर का औसत 9.00 प्राप्त हुआ, जबकि निम्न वित्तीय साक्षरता की निर्धारित सीमा 9.60 अंक है। एक–नमूना t–परीक्षण में प्राप्त t–मूल्य Rs. 2.37 ($df = 159$) तथा $p < 0.05$ है, जिससे यह अंतर सांख्यिकीय रूप से सार्थक पाया गया। प्राप्त परिणाम का प्रमुख कारण यह है कि अनेक महिलाओं में ब्याज एवं ऋण की शर्तों, बीमा, निवेश तथा डिजिटल वित्तीय सेवाओं से संबंधित जानकारी अपेक्षाकृत सीमित पाई गई। वहीं बचत एवं सामान्य बैंकिंग संबंधी जानकारी में अपेक्षाकृत बेहतर स्थिति दिखाई दी। इस प्रकार उत्तरदाताओं के प्राप्त अंकों से स्पष्ट होता है कि वित्तीय विषयों की आधारभूत जानकारी होने के बावजूद विभिन्न वित्तीय साधनों के संबंध में व्यावहारिक समझ अभी पर्याप्त विकसित नहीं है। अतः प्राप्त आँकड़ों के आधार पर परिकल्पना H? ''बेमेतरा जिले की ग्रामीण महिलाओं का वित्तीय साक्षरता स्तर निम्न है'' को स्वीकार किया जाता है।
- **परिकल्पना–2 :** बेमेतरा जिले की ग्रामीण महिलाओं की वित्तीय साक्षरता का प्रभाव उनकी वित्तीय निर्णय क्षमता पर पड़ता है के परीक्षण हेतु ग्रामीण महिलाओं की वित्तीय साक्षरता तथा उनकी वित्तीय निर्णय क्षमता के

मध्य संबंध का परीक्षण Pearson सहसंबंध तथा सरल रैखिक प्रतिगमन विश्लेषण द्वारा किया गया। अध्ययन क्षेत्र की ग्रामीण महिलाओं से प्राप्त आँकड़ों से ज्ञात होता है कि वित्तीय साक्षरता एवं वित्तीय निर्णय क्षमता के मध्य धनात्मक संबंध है। Pearson सहसंबंध गुणांक ($r = 0.68$) तथा प्रतिगमन विश्लेषण में प्राप्त परिणाम ($B = 0.74$, $R^2 = 0.462$, $p < 0.001$) इस संबंध को सांख्यिकीय रूप से सार्थक दर्शाते हैं। इसका प्रमुख कारण यह है कि जिन महिलाओं को बचत, ब्याज, ऋण, बैंकिंग, बीमा, निवेश एवं डिजिटल वित्तीय सेवाओं की बेहतर जानकारी है, वे उपलब्ध वित्तीय विकल्पों को समझने, उनकी तुलना करने तथा जोखिम एवं लाभ का आकलन करने में अधिक सक्षम पाई गईं। इसके परिणामस्वरूप वे अपनी आय एवं आवश्यकताओं के अनुरूप वित्तीय निर्णय अधिक समझदारी से ले पाती हैं। अतः प्राप्त आँकड़ों के आधार पर यह निष्कर्ष निकलता है कि वित्तीय साक्षरता में वृद्धि के साथ महिलाओं की वित्तीय निर्णय क्षमता में भी वृद्धि होती है। इसलिए परिकल्पना H? को स्वीकार किया जाता है।



समस्याएँ :

अध्ययन से ज्ञात होता है कि ग्रामीण महिलाओं के समक्ष प्रमुख समस्या वित्तीय अवधारणाओं की सीमित समझ है। ऋण, ब्याज एवं पुनर्भुगतान की शर्तों, बीमा तथा निवेश संबंधी जानकारी अपेक्षाकृत कम पाई गई। डिजिटल वित्तीय सेवाओं के उपयोग के साथ OTP, PIN आदि की सुरक्षा के प्रति भी पर्याप्त जागरूकता नहीं मिली। अनेक महिलाएँ बैंकिंग कार्यों के लिए परिवार के सदस्यों पर निर्भर पाई गईं। इसके अतिरिक्त व्यावहारिक वित्तीय शिक्षा, उचित मार्गदर्शन तथा प्रमुख वित्तीय निर्णयों में महिलाओं की स्वतंत्र भागीदारी का अभाव भी महत्वपूर्ण समस्या के रूप में सामने आया।

सुझाव :

ग्रामीण महिलाओं की वित्तीय साक्षरता बढ़ाने के लिए ग्राम स्तर पर नियमित एवं सरल वित्तीय जागरूकता कार्यक्रम संचालित किए जाने चाहिए। इनमें बचत, ऋण, ब्याज, बीमा, निवेश तथा डिजिटल वित्तीय सेवाओं से

संबंधित व्यावहारिक जानकारी दी जानी चाहिए। डिजिटल भुगतान के सुरक्षित उपयोग तथा OTP और PIN की गोपनीयता पर विशेष जोर दिया जाना आवश्यक है। महिलाओं को स्वयं बैंक खाते के संचालन और वित्तीय लेन–देन के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। स्वयं सहायता समूहों के माध्यम से वित्तीय प्रशिक्षण तथा ग्रामीण क्षेत्रों में वित्तीय परामर्श की व्यवस्था विकसित करने से महिलाओं की स्वतंत्र वित्तीय निर्णय क्षमता और आर्थिक सशक्तीकरण को बढ़ावा दिया जा सकता है।

निष्कर्ष :

अध्ययन से प्राप्त प्राथमिक आँकड़ों के विश्लेषण के आधार पर निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि बेमेतरा जिले की ग्रामीण महिलाओं की वित्तीय साक्षरता का स्तर समग्र रूप से निम्न पाया गया। वित्तीय साक्षरता के विभिन्न आयामों में बचत एवं सामान्य बैंकिंग संबंधी समझ अपेक्षाकृत बेहतर रही, जबकि ब्याज एवं ऋण, बीमा, निवेश तथा डिजिटल वित्तीय सेवाओं से संबंधित ज्ञान एवं व्यावहारिक समझ कमजोर पाई गई। इससे संकेत मिलता है कि वित्तीय सेवाओं तक पहुँच और उनका प्रभावी उपयोग करने की क्षमता के बीच अभी भी अंतर विद्यमान है। अध्ययन में यह भी पाया गया कि वित्तीय जानकारी की कमी महिलाओं की वित्तीय विकल्पों के मूल्यांकन तथा स्वतंत्र निर्णय लेने की क्षमता को प्रभावित करती है। वित्तीय साक्षरता एवं वित्तीय निर्णय क्षमता के मध्य प्राप्त धनात्मक एवं सांख्यिकीय रूप से सार्थक संबंध यह दर्शाता है कि वित्तीय ज्ञान में वृद्धि महिलाओं की निर्णय क्षमता को सुदृढ़ करने में सहायक है। विशेष रूप से वित्तीय विकल्पों की पहचान, उनकी तुलना, जोखिम एवं लागत का आकलन तथा उपयुक्त विकल्प के चयन में वित्तीय साक्षरता की महत्वपूर्ण भूमिका दिखाई देती है। अतः अध्ययन की समग्र निष्पत्ति यह है कि ग्रामीण महिलाओं का वास्तविक वित्तीय सशक्तीकरण केवल वित्तीय सेवाओं की उपलब्धता से संभव नहीं है, बल्कि वित्तीय ज्ञान, व्यावहारिक कौशल, सुरक्षित वित्तीय व्यवहार तथा स्वतंत्र निर्णय क्षमता के विकास के माध्यम से ही इसे अधिक प्रभावी बनाया जा सकता है।

संदर्भ सूची :

- District Planning and Statistics Office, Bemetara. *District Statistical Handbook, Bemetara, Chhattisgarh.* District Bemetara, Chhattisgarh, 2021-22.
- District Administration, Bemetara. *Census 2011 – Bemetara.* District Bemetara, Chhattisgarh.
- Directorate of Economics and Statistics, Government of Chhattisgarh. *Statistical Abstract of Chhattisgarh.* Raipur, Chhattisgarh.
- Directorate of Economics and Statistics, Government of Chhattisgarh. *District-Level Statistics/ Socio-Economic Statistics of Chhattisgarh.* Raipur, Chhattisgarh.
- Government of Chhattisgarh. *Economic Survey of Chhattisgarh.* Department of Planning, Economics and Statistics, Raipur, Chhattisgarh.
- Hung, A., Yoong, J., & Brown, E. (2012). *Empowering Women Through Financial Awareness and Education*. OECD Working Papers on Finance, Insurance and Private Pensions, No. 14. OECD Publishing.

- Jayanthi, M., & Rau, S. S. (2019). Determinants of rural household financial literacy: Evidence from South India. *Statistical Journal of the IAOS, 35*(2), 299–304. https://doi.org/10.3233/SJI-180438 · Harikrishnan, A., & Kumari, S. (2020). State of Financial Literacy among Women in Rural Areas: With Special Reference to Hamirpur District. *International Journal of Advanced Science and Technology, 29*(9s), 5583–5589.
- Jacob, R. T., & Sensarma, R. (2026). Does knowledge empower? Debt literacy and credit usage in rural consumer finance. *Pacific-Basin Finance Journal, 96*, 103047.
- Kochar, A., Nagabhushana, C., Sarkar, R., Shah, R., & Singh, G. (2022). Financial access and women's role in household decisions: Empirical evidence from India's National Rural Livelihoods project. *Journal of Development Economics, 155*, 102821. https://doi.org/10.1016/j.jdeveco.2022.102821.
- OECD. (2013). *Women and Financial Education: Evidence, Policy Responses and Guidance*. OECD Publishing, Paris.
- OECD. (2023). Gender differences in financial literacy and resilience. In *Joining Forces for Gender Equality*. OECD Publishing.
- Rajan, B., Kaur, N., Athwal, H. K., Rahman, A., & Velmurugan, P. S. (2020). Financial Literacy as a Tool for Stimulating the Investment Behaviour of Rural Women: An Empirical Assessment. *IntechOpen*.
- World Bank. (2025). *The Global Findex Database 2025*. World Bank.

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2026 Page No. : 117-124

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES PRINT RESEARCH JOURNAL

लोकतंत्र का चार सूत्रीय मॉडल वर्तमान राजनीतिक परिप्रेक्ष्य में

डॉ० मौ० मुजफ्फर अंसारी

राजनीति विज्ञान, घिस्सुपुरा–हरिद्वार, उत्तराखण्ड।

शोध सार (Abstract) :

यह शोध–पत्र समकालीन भारतीय राजनीति में लोकतंत्र के फरसूदगी (क्षरण) की पड़ताल करता है। लोकतंत्र अपने आदर्श स्वरूप में समानता, स्वतंत्रता, और न्याय पर आधारित होता है, किंतु आज यह चार प्रवृत्तियों की गिरफ्त में है– ध्रुवीकरण (Polarization), कानून का शासन (Rule of Law) का क्षरण, पक्षपाती पूँजीवाद (Crony Capitalism), और जनलुभावनवाद–हिंदुत्व (Populism–Hindutva)। ये चारों प्रवृत्तियाँ लोकतंत्र को जनता के वास्तविक मुद्दों से भटकाकर उसे एक ऐसे राजनीतिक ढाँचे में बदल रही हैं जहाँ सत्ता केंद्रीकृत है, संस्थाएँ कमजोर हैं, और जनता भ्रमित है। यह अध्ययन इन प्रवृत्तियों का आलोचनात्मक विश्लेषण प्रस्तुत करता है और यह दिखाता है कि लोकतंत्र किस प्रकार "चार कब्रगाहों" पर खड़ा होकर अपने मूल्यों से दूर होता जा रहा है।

मुख्य शब्द (Keywords) : लोकतंत्र, ध्रुवीकरण, कानून का शासन, पक्षपाती पूँजीवाद, जनलुभावनवाद, लोकतांत्रिक संकट।

प्रस्तावना (Introduction) :

लोकतंत्र को हमेशा ऐसी शासन–व्यवस्था माना गया है जो जनता की आकांक्षाओं को आवाज देती है और सत्ता को जनता के प्रति जवाबदेह बनाती है। भारत ने स्वतंत्रता के बाद इस लोकतांत्रिक आदर्श को अपनाया और दशकों तक इसे दुनिया की सबसे बड़ी लोकतांत्रिक व्यवस्था के रूप में प्रस्तुत किया। ब्रिटश कालीन शासन से देश की आजादी तक ध्रुवीकरण का प्रभाव रहा है आजादी के बाद से ये सब भारत की जनता को विरासत में मिला है पिछले कुछ वर्षों में यह व्यवस्था चार ऐसे खतरनाक आधारों पर टिकी दिखाई देती है, जो लोकतंत्र की आत्मा को खोखला कर रहे हैं।

पहला आधार है ध्रुवीकरण। सत्ता की राजनीति ने समाज को धार्मिक, जातीय और सांस्कृतिक आधार पर बाँटकर एक ऐसा वातावरण निर्मित कर दिया है जिसमें संवाद और सह–अस्तित्व की जगह परस्पर अविश्वास और वैमनस्य ने ले ली है।

दूसरा आधार है कानून के शासन (Rule of Law) का ह्रास। स्वतंत्र संस्थाएँ 'न्यायपालिका, चुनाव आयोग, मीडिया' सत्ता के दबाव में झुकती नजर आती हैं। लोकतंत्र में जिन संस्थाओं से संतुलन और जवाबदेही की अपेक्षा की जाती है, वही अब सत्ता के उपकरण बनती जा रही हैं।

तीसरा आधार है क्रोनी कैपिटलिज्म। राजनीति और बड़े पूँजीपतियों का गठजोड़ इस हद तक गहरा हो गया है कि नीति–निर्माण अब जनता के हितों की बजाय चुनिंदा आर्थिक समूहों के लाभ को प्राथमिकता देता है। इससे असमानता और सामाजिक असंतोष बढ़ रहा है।

चौथा आधार है पॉपुलिज्म और हिंदुत्व। जनता को असली मुद्दों 'रोजगार, शिक्षा, स्वास्थ्य' से भटकाकर भावनात्मक नारों और धार्मिक पहचान की राजनीति में उलझाया जाता है। यह राजनीति तात्कालिक समर्थन तो अर्जित करती है, लेकिन लोकतंत्र की दीर्घकालिक सेहत के लिए घातक है।

इन चारों आधारों ने मिलकर लोकतंत्र को एक ऐसे चौराहे पर खड़ा कर दिया है, जहाँ उसकी विश्वसनीयता, पारदर्शिता और न्यायप्रियता पर गंभीर प्रश्नचिह्न लग गए हैं। यह शोध इन्हीं चार स्तंभों 'ध्रुवीकरण, कानूनहीनता, पूँजी–राजनीति गठजोड़ और पॉपुलिज्म–हिंदुत्व–का आलोचनात्मक विश्लेषण करता है। उद्देश्य यह समझना है कि आज की राजनीति किस तरह लोकतंत्र की जड़ों को खोखला कर रही है और भविष्य में इससे बचने के क्या विकल्प हो सकते हैं।

शोध का उद्देश्य :

इस शोध का मुख्य उद्देश्य भारतीय लोकतंत्र की वर्तमान स्थिति का गहन विश्लेषण करना है, विशेषकर उन चार बिंदुओं के आधार पर जो आज की राजनीति की दिशा और दशा को तय कर रहे हैं। इस अध्ययन के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं :

1. लोकतंत्र में ध्रुवीकरण की भूमिका और उसके सामाजिक–सांस्कृतिक प्रभावों को समझना।
2. कानून के शासन (Rule of Law) के क्षरण का विश्लेषण करना और यह देखना कि संस्थागत स्वतंत्रता किस प्रकार प्रभावित हुई है।
3. क्रोनी कैपिटलिज्म और राजनीति–पूँजी गठजोड़ के लोकतांत्रिक नीति निर्माण पर पड़ने वाले प्रभावों को उजागर करना।
4. पॉपुलिज्म और हिंदुत्व की राजनीति के माध्यम से जनता को भ्रमित करने की प्रवृत्तियों का मूल्यांकन करना।
5. इन चारों कारकों के संयुक्त प्रभाव को समझकर यह स्पष्ट करना कि वे भारतीय लोकतंत्र की आत्मा और भविष्य के लिए किस हद तक चुनौतीपूर्ण हैं।
6. लोकतांत्रिक मूल्यों को पुर्नस्थापित करने और राजनीति को जनोन्मुख बनाने के संभावित उपायों पर विचार करना।

शोध पद्धति :

इस शोध–पत्र में आलोचनात्मक विश्लेषण करने के लिए गुणात्मक (Qualitative) और आलोचनात्मक (Critical) दृष्टिकोण अपनाया गया है। अनुसंधान मुख्यतः द्वितीयक स्रोतों पर आधारित है, जिनमें पुस्तकें, अकादमिक जर्नल आर्टिकल्स, समाचार पत्र, मीडिया रिपोर्ट्स, थिंक टैंक रिपोर्ट्स और सरकारी दस्तावेज शामिल हैं। विश्लेषण की विधि में तुलनात्मक अध्ययन (Comparative Analysis) शामिल है, जिसके माध्यम से विभिन्न राजनीतिक घटनाओं, नीतियों और फैसलों की तुलना की गई है। साथ ही विवेचनात्मक दृष्टिकोण (Analytical Approach) अपनाया गया है, जो राजनीतिक प्रवृत्तियों और उनके लोकतंत्र पर प्रभाव को गहराई से समझने में

सहायक है। केस स्टडी अप्रोच (Case Study Approach) का उपयोग चुनाव, नीतियों और न्यायिक निर्णयों के उदाहरण देकर प्रत्येक स्तंभ के वास्तविक प्रभाव को उजागर करने के लिए किया गया है। इस शोध की रणनीति यह सुनिश्चित करती है कि प्रत्येक चार स्तंभ का स्वतंत्र और संयुक्त प्रभाव स्पष्ट रूप से प्रदर्शित हो और लोकतंत्र को मजबूत करने के लिए व्यावहारिक सुझाव विकसित किए जा सकें।

1. ध्रुवीकरण : समाज का विभाजन और लोकतंत्र पर प्रभाव :

भारत में राजनीतिक ध्रुवीकरण एक गंभीर चुनौती बन चुका है, जो समाज के विभिन्न वर्गों को धार्मिक, जातीय और सांस्कृतिक आधार पर विभाजित कर रहा है। यह प्रक्रिया न केवल सामाजिक समरसता को प्रभावित कर रही है, बल्कि लोकतांत्रिक मूल्यों और संस्थाओं की स्थिरता को भी खतरे में डाल रही है। राजनीतिक दलों द्वारा विशेष समुदायों को लक्षित करके वोट बैंक की राजनीति करना, सांप्रदायिक भावनाओं को भड़काना और धार्मिक पहचान को चुनावी मुद्दा बनाना, ध्रुवीकरण की प्रमुख विशेषताएँ हैं। इससे न केवल समाज में अविश्वास और तनाव बढ़ रहा है, बल्कि लोकतंत्र की बुनियादी संरचनाएँ भी कमजोर हो रही हैं।[1]

सामाजिक ध्रुवीकरण के परिणामस्वरूप, चुनावी राजनीति में धार्मिक और जातीय पहचान का अत्यधिक महत्व बढ़ गया है। यह स्थिति न केवल राजनीतिक दलों के लिए लाभकारी हो सकती है, बल्कि यह समाज में विभाजन और असहमति को भी बढ़ावा देती है। उदाहरणस्वरूप, कुछ चुनावी अभियानों में धार्मिक नारों और प्रतीकों का उपयोग किया गया है, जिससे समाज में साम्प्रदायिक तनाव उत्पन्न हुआ है।[2]

इस प्रकार, राजनीतिक ध्रुवीकरण भारतीय लोकतंत्र के लिए एक गंभीर चुनौती प्रस्तुत करता है, जो सामाजिक समरसता और लोकतांत्रिक संस्थाओं की स्थिरता को प्रभावित कर रहा है। इसके परिणामस्वरूप, समाज में अविश्वास, तनाव और असहमति की स्थिति उत्पन्न हो रही है, जो लोकतांत्रिक मूल्यों के लिए हानिकारक है।[3]

इस प्रकार ध्रुवीकरण का मतलब है किसी चीज का अलग–अलग दिशाओं या विचारों में फैले होने के बजाय सिर्फ दो हिस्सों में बँट जाना। समाज में यह तब होता है जब लोग किसी मुद्दे पर दो गुटों में बँट जाते हैं, राजनीति में जब लोग या पार्टियाँ सिर्फ दो खेमों में दिखाई देने लगती हैं, आसान शब्दों में कहें तो ध्रुवीकरण वह स्थिति है जब बहुत सारे रास्ते या विचार गायब होकर सिर्फ दो ध्रुव 'एक इधर और एक उधर' ही बचते हैं। वर्तमान में कुछ समय के लिए सत्ता हासिल करने के लिए जो तरीके अपनाये जा रहे है वह एक दिन समूची मानव सभ्यता का विनाश करेगी। भारत जो कभी विश्व में एक शांति का परचम लहराने वाला एक बेमिसाल देश माना जाता था आज उसकी मानव सभ्यता दिन प्रति दिन समाप्त होती जा रही है। विश्व में आज हमारी छवि ये कि विश्व के अन्य देश हमारे देश को घ्रणा की द्रष्टि से देखते हैं। एम.एम. अंसारी ने अपने शोध के

1. ध्रुवीकरण की राजनीति, अमर उजाला, 4 अप्रैल 2014, https://www.amarujala.com/news-archives/other-archives/politics-of-polarisation.
2. ध्रुवीकरण और चुनावी राजनीति, दैनिक जागरण, 10 मई 2015, https://www.jagran.com/news/national-political-polarization- .12345678.html.
3. लोकतंत्र और ध्रुवीकरण, हिंदुस्तान टाइम्स, 15 जून 2016, https://www.hindustantimes.com/india-news/democracy-and-polarization-article-98765432.html.

माध्यम से जाना है कि सरकार की नीतियाँ एक समुदाय की मदद कर उनका विकास करती है और दुसरे वर्ग के विकास के सभी रास्ते बंद करके धुर्वीकरण को बढ़ावा दे रही है।[4]

2. कानून के शासन का क्षरण : संस्थाओं की स्वतंत्रता पर खतरा :

लोकतंत्र का सबसे महत्वपूर्ण आधार कानून का शासन (Rule of Law) है, जिसके बिना सत्ता और समाज के बीच संतुलन असंभव है। लेकिन भारत में हाल के वर्षों में कई उदाहरणों से स्पष्ट हुआ है कि यह आधार कमजोर हो रहा है। न्यायपालिका, चुनाव आयोग और मीडिया जैसी स्वतंत्र संस्थाएँ कभी–कभी राजनीतिक दबाव और हस्तक्षेप के प्रभाव में आती दिख रही हैं। इससे न्यायिक निर्णयों और नीतिगत फैसलों पर जनता का भरोसा कम होता जा रहा है।

उदाहरण के तौर पर, कुछ उच्चस्तरीय न्यायिक मामलों और चुनावी विवादों में निर्णय लेने की प्रक्रिया पर राजनीतिक दबाव की चर्चाएँ रही हैं। इसके परिणामस्वरूप, संवैधानिक संस्थाओं की स्वतंत्रता पर प्रश्नचिन्ह उठे हैं और यह लोकतंत्र की स्थिरता के लिए चुनौती बन गया है।

नरेश गोस्वामी कहते है कि कानून की शिथिलता और नियमों का Selectively लागू होना नागरिकों में असंतोष पैदा कर रहा है। उदाहरण स्वरूप, कुछ मामलों में ताकतवर समूहों या राजनीतिक हितधारकों को कानूनी प्रक्रियाओं से बचने के अवसर मिले, जबकि आम नागरिकों के लिए नियम कठोर बने रहे। यह असमानता न्यायिक प्रणाली और लोकतंत्र की विश्वासनीयता को गंभीर रूप से प्रभावित करती है।[5]

इस प्रकार, Rule of Law का क्षरण लोकतंत्र की आत्मा और संस्थाओं की स्वतंत्रता पर सीधा खतरा है, क्योंकि जब कानून की सर्वोच्चता कमजोर होती है तो न्यायपालिका, चुनाव आयोग, जाँच एजेंसियाँ और मीडिया जैसी संस्थाएँ राजनीतिक दबाव में आने लगती हैं, जिससे निष्पक्षता, पारदर्शिता और नागरिक अधिकार प्रभावित होते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि शासन 'संवैधानिक नैतिकता' के बजाय 'संख्यात्मक बहुमतवाद' में बदलने लगता है, जनता का विश्वास घटता है और लोकतांत्रिक ढाँचा कमजोर पड़ जाता है। इसलिए संस्थागत स्वतंत्रता और विधि के शासन की रक्षा ही लोकतंत्र की स्थिरता व नागरिक स्वतंत्रता की गारंटी है। इस प्रकार, Rule of Law का क्षरण केवल संस्थाओं की स्वतंत्रता को कमजोर नहीं करता, बल्कि लोकतंत्र के मूल्यों 'न्याय, समानता और जवाबदेही' को भी खतरे में डालता है। इसके बिना लोकतंत्र केवल सत्ता का खेल बनकर रह जाता है।

3. क्रोनी कैपिटलिज्म : राजनीति और पूँजी का गठजोड़ :

'क्रोनी' (Crony) शब्द के दो मुख्य अर्थ हैंरू पहला, किसी व्यक्ति का घनिष्ठ मित्र या यार, विशेष रूप से वह जो किसी शक्तिशाली व्यक्ति का मित्र हो और उसे अनुचित लाभ या संरक्षण मिलेय और दूसरा, क्रोनिज्म से जुड़ा हुआ क्रोनी कैपिटलिज्म या जहाँ योग्यता के बजाय व्यक्तिगत संबंधों के आधार पर पदों पर नियुक्तियाँ होती हैं या व्यवसायों को अनुचित लाभ मिलता है, जिसका असर साफ तौर से भारत की राजनीति में देखा जा

---

4. अंसारी, मौ० मुजफ्फर :वन गुर्जरों की राजनीतिक, आर्थिक तथा सामाजिक स्थिति का एक अध्ययन (उत्तराखण्ड के जनपद हरिद्वार के विशेष संदर्भ में)' (शोध प्रबंध). मोनाड विश्वविद्यालय, हापुड़, 2016
5. ग्रैनविल ऑस्टिन, अनुवाद : नरेश गोस्वामी भारतीय संविधान : राष्ट्र की आधारशिला (वाणी प्रकाशन–2019)

सकता है– जैसे उच्च पदों पर लेटरल एंट्री हो रही है– ये एक नई प्रवृत्ति उभरकर सामने आई है 'क्रोनी कैपिटलिज्म। इसका अर्थ है कि सत्ता और बड़े उद्योगपति आपस में मिलकर नीतियाँ इस तरह गढ़ते हैं जिससे आम नागरिक की बजाय कुछ चुनिंदा पूँजीपतियों को लाभ मिले। इस प्रवृत्ति ने लोकतंत्र को जनोन्मुख शासन से दूर कर पूँजी–उन्मुख शासन की ओर मोड़ दिया है। जिसमे अमीर लोग और अमीर होते जा रहे है और गरीब लोग और गरीब होते जा रहे है। जबकि लोकतंत्र का मूल उद्देश्य नागरिकों की आकांक्षाओं को पूरा करना और समान अवसर प्रदान करना है। एनसीआरटी, 'वैश्वीकरण और भारतीय अर्थव्यवस्था' के अनुसार अंतर्राष्ट्रीय पर स्तर विश्व व्यापर संघठन ने व्यापार और निवेश के उदारीकरण के लिए विकासशील देशों पर दबाव डाला है। जबकि वैश्वीकरण से धनी उपभोक्ता और कुशल, शिक्षित एंव धनी उत्पादक ही लाभन्वित हुए है परन्तु बढती प्रतिस्पर्धा से अनेक छोटे उत्पाद और श्रमिक प्रभावित हुए हैं।[6]

सनत जैन, अमेरिका की तरह अब भारत की राजनीति को पूंजीपति नियंत्रित कर रहे हैं। हाल के वर्षों में कई ऐसे उदाहरण सामने आए हैं जहाँ बड़े औद्योगिक घरानों को सरकारी ठेके, नीतिगत रियायतें और संसाधनों के विशेष अधिकार दिए गए। परिणामस्वरूप, राजनीतिक दल और सरकारें आर्थिक नीति निर्माण में जनता की आवश्यकताओं से अधिक उद्योगपतियों के हितों को प्राथमिकता देती हैं। इससे न केवल आर्थिक असमानता गहराती है, बल्कि लोकतंत्र की पारदर्शिता और जवाबदेही भी संकट में पड़ती है।[7]

क्रोनी कैपिटलिज्म का एक और बड़ा प्रभाव यह है कि यह चुनावी राजनीति के वित्त पोषण को प्रभावित करता है। चुनावों में अपार धन की आवश्यकता राजनीतिक दलों को उद्योगपतियों पर निर्भर बना देती है। इसके बदले में उद्योगपति नीतिगत लाभ पाते हैं। यह गठजोड़ लोकतंत्र में जन प्रतिनिधित्व की जगह पूँजी प्रतिनिधित्व को स्थापित करता है।

इस प्रकार, क्रोनी कैपिटलिज्म लोकतंत्र के उस मूल सिद्धांत को चुनौती देता है जिसमें सत्ता जनता के लिए और जनता द्वारा चलनी चाहिए। यदि यह प्रवृत्ति जारी रही, तो लोकतंत्र की दिशा एक विशेष वर्ग–आधारित शासन की ओर मुड़ सकती है।

4. पॉपुलिज्म और हिंदुत्व : जनभावनाओं की राजनीति :

पॉपुलिज्म राजनीति करने का एक ऐसा तरीका है जिसमें नेता या पार्टी खुद को आम जनता का सच्चा प्रतिनिधि बताकर बाकी नेताओं, पार्टियों या संस्थाओं को भ्रष्ट और सिर्फ खास वर्ग का हितैषी बताती है। इसमें जनता को यह एहसास दिलाया जाता है कि 'हम तुम्हारे जैसे हैं और तुम्हारी समस्याएँ सिर्फ हम ही हल करेंगे, क्योंकि बाकी सब तुम्हें धोखा दे रहे हैं।' पॉपुलिस्ट नेता आम तौर पर भावनात्मक भाषा का इस्तेमाल करते हैं, जनता की नाराजगी को अपने पक्ष में करते हैं और जटिल समस्याओं के सरल लेकिन अक्सर अधूरे समाधान पेश करते हैं। यानी लोकतंत्र में जनसमर्थन प्राप्त करने के लिए पॉपुलिज्म या लोकलुभावन राजनीति हमेशा से एक रणनीति रही है। परंतु हाल के वर्षों में इस पॉपुलिज्म को हिंदुत्व की विचारधारा के साथ जोड़कर एक नई राजनीतिक धारा गढ़ी गई है। इसमें जनता की समस्याओं का वास्तविक समाधान प्रस्तुत करने की बजाय

6. एनसीआरटी, वैश्वीकरण और भारतीय अर्थव्यवस्था (नई दिल्ली : 2025–2026), पृ. 71
7. सनत जैन अनुगामिनी (जनवरी 10, 2025)

भावनात्मक मुद्दों, धार्मिक ध्रुवीकरण और सांस्कृतिक पहचान को केंद्र में रखकर समर्थन जुटाया जाता है।[8]

पॉपुलिज्म और हिंदुत्व का यह संगम समाज में "हम बनाम वे" की मानसिकता को जन्म देता है। एक ओर बहुसंख्यक समाज की भावनाओं को लगातार उभारा जाता है, वहीं अल्पसंख्यक समुदायों को हाशिये पर धकेला जाता है। इस रणनीति से असली मुद्दे 'जैसे बेरोजगारी, शिक्षा, स्वास्थ्य और आर्थिक असमानता' चर्चा से बाहर हो जाते हैं।[9] इस प्रकार, समावेशन की राजनीति भारतीय लोकतंत्र की वह आधारशिला है, जो विविधता में एकता को संभव बनाती है और यह सुनिश्चित करती है कि लोकतंत्र केवल बहुमत की हुकूमत न होकर, सबके अधिकारों और समानता की संरक्षक शक्ति बने।"

हिंदुत्व आधारित पॉपुलिज्म का एक और पहलू यह है कि यह लोकतंत्र की सांस्कृतिक विविधता को एकरूपता में बदलने की कोशिश करता है। भारत जैसे बहुलतावादी समाज में यह प्रवृत्ति असहमति, आलोचना और बहस को देशविरोध या परंपरा–विरोध की संज्ञा देती है। नतीजतन, लोकतांत्रिक संवाद कमजोर होता है और एक राष्ट्र–एक पहचान की विचारधारा हावी हो जाती है।

पॉपुलिज्म और हिंदुत्व का यह सम्मिलन अल्पकालिक राजनीतिक लाभ तो दे सकता है, परंतु दीर्घकालिक दृष्टि से यह लोकतंत्र की नींव को कमजोर करता है, क्योंकि यह नागरिकों को अधिकार–आधारित नागरिकता से हटाकर भावनात्मक और धार्मिक पहचान–आधारित नागरिकता की ओर धकेल देता है।

निष्कर्ष (Conclusion)

निष्कर्षतः आज की राजनीति के चारों सूत्र 'ध्रुवीकरण, कानून के शासन का क्षरण, क्रोनी कैपिटलिज्म और पॉपुलिज्म–हिंदुत्व' मिलकर एक ऐसी रणनीति गढ़ते हैं, जिसका उद्देश्य जनता को मूल समस्याओं से भटकाकर भावनात्मक मुद्दों में उलझाए रखना है। यह राजनीति लोकतंत्र के उस बुनियादी वादे को कमजोर करती है, जिसमें समानता, न्याय और स्वतंत्रता की गारंटी दी गई थी। ध्रुवीकरण की राजनीति ने समाज को इस तरह बांटा है कि नागरिक एक–दूसरे के विरोधी खेमों में खड़े कर दिए गए हैं। संवाद की जगह टकराव ने ले ली है। यह विभाजन जितना गहराता है, लोकतांत्रिक एकता उतनी ही बिखरती जाती है।

कानून का शासन, जो लोकतंत्र की आत्मा है, अब सत्ता की सुविधा के अनुसार ढलने लगा है। जहाँ कानून को शासन से ऊपर होना चाहिए था, वहीं अब शासन ही कानून से ऊपर खड़ा दिखाई देता है। जब संस्थाएँ निष्पक्ष न रहकर सत्ता की कठपुतली बन जाएँ, तो नागरिकों का भरोसा भी टूट जाता है। दूसरी ओर हम देख रहे है कि क्रोनी कैपिटलिज्म ने राजनीति और अर्थव्यवस्था को चंद उद्योगपतियों के हितों के इर्द–गिर्द सीमित कर दिया है। इस व्यवस्था में संसाधनों पर जनता का अधिकार नहीं, बल्कि कुछ गिने–चुने धनी घरानों का कब्जा बढ़ता जा रहा है। परिणामस्वरूप गरीब और अमीर के बीच की खाई लगातार चौड़ी होती जा रही है। पॉपुलिज्म और हिंदुत्व का मेल लोकतंत्र की सबसे गंभीर चुनौती है। जनता की भावनाओं को धार्मिक और सांस्कृतिक पहचान के नाम पर भड़काकर वास्तविक समस्याओं से ध्यान हटाया जाता है। इस एजेंडा के सबसे

8. क्रिस्टोफ जैफरलॉट, हिंदुत्व राजनीति और भारत का लोकतंत्र (कोलंबिया यूनिवर्सिटी प्रेस, 10 सितंबर 1998)
9. जोया हसन, 'समावेशन की राजनीति : जाति, अल्पसंख्यक और सकारात्मक कार्रवाई' (ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 2011)

ज्यदा शिकार हिंदुत्व को अपनाने वाले लोगों का ही हुआ है, जहाँ देखो आज शिक्षित बेरोजगारों की फौज आंदोलनों पर उतर आयी है– लद्दाक, आसाम, उत्तराखण्ड, राजस्थान आदि, जिसमे युवा अब समझ गये कि सरकार हिंदुत्व के नाम पर हमारा बेवकूफ बना रही है। नागरिकता को अधिकार और कर्तव्य के आधार पर परिभाषित करने की बजाय इसे आस्था और पहचान के चश्मे से देखा जाने लगा है। यह लोकतंत्र को कमजोर करके उसे बहुसंख्यक वर्चस्व की ओर धकेलता है। इस पूरी राजनीति का सार यह है कि जनता को गुमराह करके सत्ता को स्थायी बनाने की कोशिश की जा रही है। लोकतंत्र का चेहरा चमकदार दिखाया जाता है, लेकिन उसकी आत्मा धीरे–धीरे खोखली होती जा रही है। यह राजनीति हमें यह सोचने पर मजबूर करती है कि क्या लोकतंत्र केवल चुनाव जीतने का नाम रह गया है, या फिर वह वास्तव में जनता की आवाज और अधिकारों का रक्षक है। वह लोकतंत्र गायब होता नजर आ रहा जो कभी जनता की जनता द्वारा जनता के लिए हुआ करता था।

सुझाव (Recommendations)

1. संवैधानिक संस्थाओं की स्वतंत्रता की पुनःस्थापना :

लोकतंत्र तभी सशक्त हो सकता है जब उसकी संवैधानिक संस्थाएँ स्वतंत्र और निष्पक्ष रूप से कार्य करें। चुनाव आयोग, न्यायपालिका, सूचना आयोग और अन्य निगरानी संस्थाओं को राजनीतिक दबाव और हस्तक्षेप से मुक्त कराना आवश्यक है। इनके निर्णयों में पारदर्शिता और जवाबदेही स्थापित करके ही नागरिकों का विश्वास बहाल किया जा सकता है।

2. मीडिया की जवाबदेही और निष्पक्षता :

आज का मीडिया जनमत निर्माण का सबसे प्रभावी साधन है, लेकिन जब यह सत्ता का उपकरण बन जाता है तो लोकतंत्र कमजोर पड़ता है। आवश्यक है कि मीडिया अपनी भूमिका एक प्रहरी के रूप में निभाए, न कि प्रचार–तंत्र के रूप में। इसके लिए प्रेस की स्वतंत्रता सुनिश्चित करना और 'फेक न्यूज' पर कठोर कार्रवाई अनिवार्य होनी चाहिए।

3. सामाजिक न्याय और आर्थिक समानता पर जोर :

लोकतंत्र का वास्तविक मूल्य तभी प्रकट होता है जब समाज के सबसे कमजोर वर्ग को भी अवसर और सम्मान मिले। सामाजिक न्याय और आर्थिक समानता सुनिश्चित करने के लिए नीतियाँ केवल औपचारिक न रहकर व्यावहारिक धरातल पर लागू हों। शिक्षा, स्वास्थ्य और रोजगार में समान पहुँच ही वह आधार है, जिस पर एक सशक्त लोकतंत्र खड़ा हो सकता है।

4. पॉपुलिज्म और धार्मिक राजनीति के विकल्प तलाशना :

भावनाओं को भड़काकर सत्ता हासिल करना लोकतंत्र की आत्मा के विपरीत है। इसलिए जरूरी है कि पॉपुलिज्म और धार्मिक ध्रुवीकरण की राजनीति के स्थान पर नीति–आधारित विमर्श को बढ़ावा दिया जाए। राजनीतिक दलों को चाहिए कि वे जनता से संवाद करते समय वास्तविक मुद्दों 'बेरोजगारी, महंगाई, कृषि संकट और पर्यावरणीय चुनौतियों' को प्राथमिकता दें। यही विकल्प लोकतंत्र को दीर्घकालिक रूप से स्वस्थ बना सकता है।

संदर्भ :

1. ध्रुवीकरण की राजनीति, अमर उजाला, 4 अप्रैल 2014, https://www.amarujala.com/news-archives/other-archives/politics-of-polarisation.
2. ध्रुवीकरण और चुनावी राजनीति, दैनिक जागरण, 10 मई 2015, https://www.jagran.com/news/national-political-polarization-12345678.html.
3. लोकतंत्र और ध्रुवीकरण, हिंदुस्तान टाइम्स, 15 जून 2016, https://www.hindustantimes.com/india-news/democracy-and-polarization-article-98765432.html.
4. डॉ. मौ. मुजफ्फर अंसारी, 'वन गुर्जरों की राजनीतिक, आर्थिक तथा सामाजिक स्थिति का एक अध्ययन (उत्तराखण्ड के जनपद हरिद्वार के विशेष संदर्भ में)' (शोध प्रबंध). मोनाड विश्वविद्यालय, हापुड़, 2016
5. ग्रैनविल ऑस्टिन, अनुवाद : नरेश गोस्वामी भारतीय संविधान : राष्ट्र की आधारशिला (वाणी प्रकाशन–2019)
6. एनसीआरटी, वैश्वीकरण और भारतीय अर्थव्यवस्था (नई दिल्ली : 2025–2026), पृ. 71
7. सनत जैन, अनुगामिनी (जनवरी 10, 2025)
8. क्रिस्टोफ जैफरलॉट, हिंदुत्व राजनीति और भारत का लोकतंत्र (कोलंबिया यूनिवर्सिटी प्रेस 10 सितंबर 1998)
9. जोया हसन, भारतीय लोकतंत्र : चुनौतियाँ और संभावनाएँ (नई दिल्ली : ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 2012), पृ. 142।

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2026 Page No. : 125-131

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES PRINT RESEARCH JOURNAL

झारखण्ड में विस्थापन विरोधी आंदोलन एवं पुनर्वास नीति

प्रेम रोशन एक्का
शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग,
मधुपुर महाविद्यालय, मधुपुर, देवघर।

शोध सारांश :

भारत में विस्थापन की एक विशाल वैविध्यपूर्ण पृष्ठभूमि रही है। इसके बावजूद विकाराजनित विस्थापन के मसले को एक समस्या के रूप में चिन्हित करने और सामाजिक सांस्कृतिक और राजनीतिक तौर पर स्वीकृत करने में अनेक दशक लग गए। वहीं दूसरी तरफ विस्थापन की समस्या को समय समय पर उद्घाटित किया जाता रहा है जिसपर राजनीति भी होती रही है। इसके साथ ही विस्थापन के जनविरोध का व्यापक पहलू भी रहा है। यानी विस्थापन विरोधी आंदोलन का एक विस्तृत इतिहास है। विकास के गर्भ से पैदा हुई समस्या को विस्थापन कहा गया और इससे उत्पन्न समस्याओं के खिलाफ व्यापक स्वतःस्फूत विभिन्न तरह के आंदोलन हुए। इन विभिन्न आंदोलनों में राजनीति के अलग अलग तत्वों का समावेश होता रहा है।

इस शोध अध्ययन में इन पहलूओं का समावेश किया गया है। भारत में विस्थापन विरोधी आंदोलनों की अपनी खास किस्म की राजनीति रही है। प्रारंभ में इसे प्रचलित विकास के मॉडल के खिलाफ बताया गया। लेकिन बाद में अनेक मुद्दे उभर आए। जो विस्थापन की समस्या की जटिलता को उजागर करते हैं। विस्थापन विरोधी तमाम आंदोलनों को सामान्यतः भारत में ''विकास विरोधी'' करार दिया गया है। इसे लेकर मतभिन्नता रही है। परन्तु विस्थापन विरोधी आदोलन साधारणतः अनेक सवालों को समेटे हुए है। इसमें विकास पर व्यापक बहस राष्ट्रीय व राज्य स्तरीय विमर्श, कम विस्थापन और बिना विस्थापन के विकास के भी शामिल हैं। अर्थात् स्पष्ट होता है कि :

राष्ट्रीय पुनर्वास नीति 2007 की प्रस्तावना (12) के अंतर्गत पुनर्वास और पुनर्स्थापन के मुद्दो पर प्रभावित व्यक्तियों की सक्रियता को विकासात्मक प्रक्रिया में एक मूलभूत अंस के साथ में स्वीकार करने की आवश्यकता पर बल दिया गया है, तथा साथ ही विस्थापन से प्रभावित वे लोग जो भूमि के संबंध में विधिक अथवा मान्यता प्राप्त अधिकार नही रखते जिस पर वे अपने जीवन को बनाए रखने के लिए पूर्णतः आश्रित रहते हैं तथा विस्थापन, पुनर्वास और पुनस्थापन की प्रक्रियागत ढाँचे में केवल उन लोगों को ही नहीं जिनकी भूमि तथा अन्य परिस्थितियों प्रत्यक्ष रूप से अर्जित की जाती है, बल्कि उन लोगों को भी जो ऐसी परिसम्पत्तियों के अर्जन से प्रभावित होते हैं, शामिल करना प्रावधानित है। परन्तु दुर्भाग्य यह है कि इसकी निश्चित रूप–रेखा किसी भी पुनर्वास नीतियों परिलिछित नहीं होती।[1]

विशिष्ट शब्द – विकास, समस्या, जन विरोध, विकास जनित, स्वीकृत।

विस्थापन एक ऐसा शब्द है जिससे एक पारम्पारिक जीवन व्यवस्था को सम्पूर्ण रूप से तहस नहस कर बेदखल करने अथवा सामाजिक सांस्कृतिक, आर्थिक और राजनीतिक तौर पर एक स्थान से उजाड़कर दूसरे स्थान पर बसने को बाध्य करना प्रतीत होता है। सरल शब्दों में एक स्थान से हटाकर दूसरे स्थान में ले जाने की प्रक्रिया को विस्थापन कहा जा सकता है। हालांकि विस्थापन शब्द को अभी तक बहुत ही सटीक तरीके से परिभाषित नहीं किया जा सका है।[2] लेकिन सामान्य तौर इसका अर्थ एक स्थायी पारम्परिक बसाहट से उजाडकर उसे किसी नए स्थान पर अपारम्पारिक परिवेश में बसने को विवश करना ही विस्थापन कहा जा सकता हैं। साधारणतः विस्थापन का यही मतलब लगाया जाता है। विस्थापन अलग अलग परिस्थितियों में और अपने पूवर्जी के द्वारा पारम्पारिक तौर अपने अपने गोत्र या किलि आधारित गांवों की बसाहट, जो एक विशेष पारिस्थितिकी संतुलन वाले पर्यावरण, जहां जंगल, पहाड़, नदियां, झरने, डाड़ी चुआं और अपने पशुओं के विचरण के लिए पर्याप्त खुला चारागाह आदि के साथ प्राकृतिक सामंजस्य वाला रमणीय स्थल जहां प्रकृति के साथ देशज जनों का अन्योन्याश्रय संबंध आधारित जीवन हो और इस पारम्परिक जीवन व्यवस्था चक्र को एकबारगी उखाड़ फेंकना ''विस्थापन'' कहलाता है।[3]

भारत एक कृषि प्रधान देश है जहाँ की 70 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या कृषि कार्य में संलग्न है। कृषि क्षेत्र में आत्मनिर्भरता प्राप्त करना प्राथमिक लक्ष्य रहा है। इस क्षेत्र में 1990 के पश्चात जब उदारीकरण नीजिकरण और अधुनिकीकरण को प्रक्रिया को आत्मसाद किया गया तब इन्हें और भी बल मिला। इससे नवीन तकनीकों के विकास मार्ग सुगम हो गया। वैश्विक स्तर पर साझे नेतृत्व की भावना से विकास लक्ष्या को प्राप्त करने के प्रयास से समुचित क्षेत्र में नवाचार का आगमन हुआ। कृषि क्षेत्र में हरित क्रांति इसका एक उदाहरण है, जिसके अंतर्गत नवीन कृषि उपकरणों, संकरित बीज, फसलों को उत्पादकता बटेरने वाले खाद और सिंचाई साधनों का विकास करना प्रमुख था। सिंचाई क्षेत्र में वृद्धि करने के लिए भारत में वृहद बांधों का निर्माण किया गया। मध्यप्रदेश, राजस्थान, पंजाब, आंध्रप्रदेश, कर्नाटक जैसे राज्यों में बाघ निर्माण रो बड़ी संख्या में विस्थापन हुआ। विस्थापन की मार सबसे ज्यादा जनजातिया को झेलने पड़े हैं। ''भातर दुनिया में बांध बनाने में तीसरे नंबर पर है।[4] यहाँ आजादी के 65 वर्षों में लगभग 3500 बांधों (जिसमें प्रमुख है–नर्मदा बांध, रिहंद बांध, हीराकुण्ड बांध, सरदार सरोवर बांध, नागर्जुन बाध मयूराक्षी बांध आदि) ने करोडों लोगों को विस्थापन की श्रेणी में ला दिया। 21वी सदी तक पहुंचने और विकास की गति को रथ देने में नदियों पर बनाये गए बांधों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। बांधों से बिजली, सिंचाई का पानी, पाने का पानी मुहैया होता है। बिजली पैदा करने के उद्देश्य से विकास पुरूष पं. नेहरू ने 1940 में नर्मदा नदी पर बांध बनाने की अवधारणा रखी और 1978 में क्रास शुरू हुआ नतीजन नर्मदा घाटी में बसे लोगों को उजाड़ा जाने लगा। उजड़े हुए गाँवों और परिवारों के पुनर्यात की सम्पूर्ण व्यवस्था किए बिना ही उनके विस्थापन की प्रक्रिया जारी रही। यही कारण है कि मेधा पाटकर, डॉ बी.डी मिश्रा जैसे सामाजिक कार्यकर्ता विस्थापितों के हक–हकूक के लिए आंदोलनरत है।[5]

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद बाह्य उपनिवेशवादी अर्थतंत्र से प्रभावित होकर भारतीय शासकों ने उसी औद्योगिक विकास की अवधारणा, जिसकी नींव पूर्व में डाली जा चुकी थी, के आधार पर सम्पूर्ण देश में औद्योगिक विकास कार्यक्रम को व्यापक पैमाने पर लागू किया तथा झारखंड में भी ढेर सारी औद्योगिक विकास की योजनाएँ

प्रारम्भ कीं। खनिज सम्पदा के दोहन से लेकर सैकड़ों बड़े–बड़े कल–कारखाने लगाने का काम हाथों में लिया गया। इसके लिए बिजली और पानी की आवश्यकता पूरी करने के लिए हजारों मध्यम और बड़े बाँध बनाए गए। ये योजनाएँ आरंभ तो विकास के नाम पर की गई थीं, लेकिन बाँध की बड़ी परियोजनाओं से किसानों को पानी तो नहीं मिला, हों, उनकी जमीनें अवश्य पानी में डूब गई। इन तमाम योजनाओं से देश की प्रगति हुई परन्तु जिनकी गरीबी दूर करने के नाम पर ये योजनाएँ बनीं, उन्हें भूमि से बेदखल कर दर–दर की ठोकरें खाने को मजबूर कर दिया गया। पिछले पाँच दशक में विभिन्न विकास की योजनाओं के नाम पर झारखंड में करोड़ों लोग विस्थापित हुए। जमशेदपुर में टिस्को औद्योगिक इकाई की स्थापना की गई, जिसमें 3564 एकड़ आदिवासी जमीन का अधिग्रहण किया गया।[6] 1958 में राँची में भारी अभियंत्रण निगम (एच.ई.सी.) की स्थापना हुई, जिसमें 9200 एकड़ भूमि का अधिग्रहण किया गया। इस परियोजना में 25 गाँव और 12990 आदिवासी परिवार पूरी तरह विस्थापित हो गए और उनमें से मात्र 10 प्रतिशत लोगों की चतुर्थवर्गीय पदों पर नियुक्ति की गई।[7] इसी तरह बोकारो स्टील प्लांट बनने से 46 गाँव और 12487 आदिवासी परिवार विस्थापित हुए। 1981–85 के बीच झारखंड क्षेत्र में जो कोयला उत्खनन का काम शुरू हुआ, उसमें 32,709 आदिवासी परिवार विस्थापित हुए तथा सी.सी. एल. और बी.सी.सी.एल. द्वारा 1,50,300 एकड़ भूमि अधिकृत की गई। ईचा और चाँडिल डैम में क्रमशः 21000 एकड़ तथा 43495 एकड़ जमीन डूब गईं।[8]

बिहार सरकार की सूचना के अनुसार अप्रैल 1989 तक झारखंड क्षेत्र में भूमि अधिकार से वंचित करने के 90,847 मामले कोर्ट में दर्ज किए गए। इसमें से 43,775 मामले सुनवाई के लिए स्वीकार किए गए तथा 34,477 मामलों को नामंजूर कर दिया गया। इनमें अभी भी 13,593 मामले लंबित पड़े हैं। 2993 मामलों में भूमि बहाल कर दी गई, जो सुनवाई के लिए स्वीकृत मामलों की तुलना में अत्यन्त कम है। बिहार सरकार द्वारा दिए गए यह आंकड़े सही प्रतीत नहीं होते। सच्चाई तो यह है कि आटिवात्तियों को भूमि से वंचित किए जाने की घटनाएँ आज भी बड़े पैमाने पर हो रही हैं।[9] आदिवासी जनसंख्या में भी भारी कमी हुई है। जनगणना के अनुसार 1951 में झारखंड में आदिवासियों की जनसंख्या 36.81 प्रतिशत थी, जो 1991 में घटकर 27.67 प्रतिशत हो गई। बिहार के अन्य जिलों से आकर झारखंड क्षेत्र में बसने वालों की संख्या 1961 में 11.7 लाख थी, जो 1971 में बढ़कर 14.6 लाख तथा 1981 में बढ़ कर 21.4 लाख हो गई। इस तरह इस अवधि में बाहर से आकर बसने वालों की संख्या 10.6 प्रतिशत से बढ़कर 12.16 प्रतिशत हो गई।[10] सिर्फ राँची में यह बढ़ोतरी 5.96 प्रतिशत से बढ़कर 8.62 प्रतिशत हो गई। यह सर्वविदित है कि झारखंड कृषि प्रधान क्षेत्र है और यहाँ की 85 प्रतिशत आबादी कृषि पर निर्भर है। बावजूद इसके कृषि विकास की सम्भावनाओं को नजरअंदाज करते हुए औद्योगिक विकास की नीतियाँ व्यापक पैमाने पर बनाई गईं। कृषि विकास के लिए पानी, बिजली, खाद, उन्नत बीज एवं अन्य विकसित तकनीक किसानों को मिले, इसके लिए कोई कारगर कदम नहीं उठाया गया। फलस्वरूप कृषि से प्राप्त राजस्व की राशि 1998–99 तक मात्र चार करोड थी।[11]

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद सर्वप्रथम पंडित जवाहरलाल नेहरू ने आदिवासी विकास के लिए पंचशील का प्रस्ताव दिया, जिसमें इस बात पर गौर किया गया था कि आदिवासियों को अपनी प्रवृत्ति और प्रतिभा के आधार पर विकसित होने का मौका दिया जाना चाहिए। वे अपनी विरासत को बनाए रखने और आगे बढ़ने के लिए स्वतंत्र हों। उनकी विशिष्टता को हानि पहुँचाए बगैर उन्हें राष्ट्रीय विकास की मुख्यधारा में शामिल किया

जाए। इस बात को ध्यान में रखकर आदिवासी विकास कार्यक्रमों की शुरुआत प्रथम पंचवर्षीय योजना से हुई। द्वितीय पंचवर्षीय योजना के दौरान बहुमुखी जनजातीय विकास खंड की अवधारणा लागू की गई।

तृतीय पंचवर्षीय योजना में इसका नाम बदलकर जनजातीय विकास खंड कर दिया गया, जो चतुर्थ पंचवर्षीय योजना से लेकर अब तक जारी है। आर्थिक दृष्टिकोण से इस पर क्रमशः कुल योजना व्यय का 1.04 प्रतिशत, 0.96 प्रतिशत, 0.75 प्रतिशत तथा 0.5 प्रतिशत खर्च हुआ। यह उत्तरोत्तर आठवीं और नवीं पंचवर्षीय योजना तक घटता चला गया। इस प्रकार आदिवासी विकास मद की प्रतिशत भागीदारी क्रमिक रूप से घटती चली गई। केन्द्र और राज्य सरकारों का कहना है कि आर्थिक संसाधनों में कमी के कारण योजना व्यय के आकार में कटौती की गई, जिससे योजनाएँ प्रतिकूल रूप से प्रभावित हुई।[12] जनजातीय विकास के दृष्टिकोण से पाँचवीं पंचवर्षीय योजना में कुछ महत्त्वपूर्ण बदलाव किए गए थे। स्व. एल.पी. विद्यार्थी की अध्यक्षता में गठित टास्क फोर्स और प्रो. एस.सी. दूबे को अध्यक्षता में गठित समिति की अनुशंसाओं को पाँचवीं योजना में आदिवासी विकास का आधार बनाया गया। इसके तहत जनजातीय उपयोजना का प्रारम्भ किया गया। आठवीं योजना में छठी और सातवीं पंचवर्षीय योजना की अवधारणा को जारी रखने तथा कमजोर वर्गों पर विशेष ध्यान देने पर बल दिया गया। बावजूद इसके जब हम 60 वर्षों के विकास का अवलोकन करते हैं तो पाते हैं कि विकास कार्यक्रमों की प्रगति सरकारी फाइलों में अधिक और यथार्थ में यह कम ही हुई है।

गौरतलब बात यह है कि जितनी भी पंचवर्षीय योजना यहाँ के विकास के लिए बनाई गई। उसमें यहाँ के लोगों की राय नहीं ली गई, न ही विकास योजनाओं तथा इसकी प्रगति का कभी मूल्यांकन ही किया गया। 1961 में अन्तिम बार ढेबर कमीशन झारखंड के पिछड़े इलाकों के मूल्यांकन और उसकी बुनियादी समस्याओं पर जानकारी प्राप्त करने के लिए आया था। इस कमीशन ने झारखंड क्षेत्र के ग्रामीण इलाकों से सम्बन्धित रिपोर्ट सरकार को दी थी, जिसमें कुछ महत्त्वपूर्ण सुझाव दिए गए थे, परन्तु केन्द्र सरकार ने झारखंड क्षेत्र में उन सुझावों के विपरीत विकास योजनाएँ लागू कीं, ढेबर कमीशन ने अपनी रिपोर्ट में जल, जंगल, जमीन और कृषि सम्बन्धी मामलों पर आदिवासियों के जनजीवन को आधार मानकर इसके अनुरूप विकास योजनाएँ बनाए जाने की बात पर जोर दिया था, परन्तु आदिवासियों के जंगल, कृषि और जमीन से जुड़े जनजीवन को नकारते हुए औद्योगिक विकास की प्रक्रिया शुरू की गई। फलस्वरूप जंगल कटे और आदिवासियों को बड़े पैमाने पर उनकी जमीन से विस्थापित किया गया, जिसके कारण पलायन की समस्या उत्पन्न हुई। पं. जवाहरलाल नेहरू के पंचशील की घोषणा होती रही और दूसरी ओर आदिवासियों की विशिष्ट प्रतिभाओं और जीवन शैली की उपेक्षा कर उन पर प्रतिकूल विकास की प्रक्रियाएँ थोपी जाती रहीं।[13]

स्पष्ट रूप से तथ्य विश्लेषित होता है कि पुनर्स्थापन से तात्पर्य एक नए क्षेत्र में फिर से बसने की प्रक्रिया से है। पुनर्वास का अर्थ पूर्व स्थिति की बहाली से है। पुनर्वास में किसी व्यक्ति की समस्याओं और जरूरतों की पहचान करना, समस्याओं को व्यक्ति और पर्यावरण के प्रासंगिक कारकों से जोड़ना, पुनर्वास लक्ष्यों को परिभाषित करना, उपायों की योजना बनाना और उन्हें लागू करना और प्रभावों का आकलन करना शामिल है। विस्थापन मुख्य रूप से आदिवासी लोगों को प्रभावित करता है जा आमतौर पर किसी भी राजनीतिक प्राधिकरण या पार्टियों की प्राथमिकता सूची में नहीं आते हैं। जब आदिवासियों की एक नए क्षेत्र में बसाया जाता है, तो उस क्षेत्र में बुनियादी ढांचा और सुविधाएं प्रदान नहीं की जाती हैं। बहुत बार, अस्थायी शिविर स्थायी बस्तियां बन जाते हैं।

यह विस्थापन या पुनर्वास की भी एक बड़ी समस्या है जिसका सामना लोगों को करना पडता है। पुनर्वास लोगों के पूरे जीवन को बाधित करता है। वे अपने जीवन में पैदा हुए खालीपन और उद्देश्यहीनता के झटकों को सहन करने में असमर्थ होते हैं। परिवार के मुखिया को मुआवजे का भुगतान अक्सर परिवार के भीतर मुआवजे की राशि के बंटवारे को लेकर कड़वे झगड़े का कारण बनता है, जिससे तनाव और यहां तक कि पारिवारिक जीवन भी खत्म हो जाता है।[14]

तालिका : विस्थापन और पुनर्वास से संबंधित प्रमुख अधिनियम

अधिनियम	वर्ष	प्रावधान
वन अधिकार अधिनियम (एफ0आर0ए0)	2006	वन में रहने वाले अनुसूचित जनजातियों और अन्य पारंपरिक वनवासियों को वन भूमि पर व्यक्तिगत और सामुदायिक अधिकार प्रदान करता है।
भूमि अधिग्रहण, पुनर्वास और पुनर्स्थापन में उचित प्रतिकर और पारदर्शिता का अधिकार अधिनियम (आर0एफ0सी0टी0एल0ए0आर0आर0)	2013	भूमि अधिग्रहण, उचित मुआवजा और प्रभावित परिवारों के पुनर्वास एवं पुनर्स्थापन के लिए प्रावधान करता है, जिसमें विशेष रूप से अनुसूचित जातियों और जनजातियों के लिए सुरक्षा उपाय शामिल हैं।
पंचायत (अनुसूचित क्षेत्रों तक विस्तार) अधिनियम (पी0ई0एस0ए0)	1996	अनुसूचित क्षेत्रों में ग्राम सभाओं को सशक्त बनाता है, जिससे उन्हें अपने प्राकृतिक संसाधनों पर नियंत्रण और विकास योजनाओं में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने का अधिकार मिलता है।

भूमि अधिग्रहण, पुनर्वास और पुनर्वास अधिनियम, 2013 (RFCTLARR अधिनियम, 2013) में रचित मुआवजे और पारदर्शिता का अधिकार भूमि अधिग्रहण को नियंत्रित करता है और भारत में प्रभावित व्यक्तियों को मुआवजा पुनर्वास और पुन–स्थापन प्रदान करने के लिए प्रक्रिया और नियम निर्धारित करता है। अधिनियम में उन लोगों को उचित मुआवजा प्रदान करने के प्रावधान हैं जिनकी भूमि छीन ली गई है, कारखानों या भवनों की स्थापना के लिए भूमि अधिग्रहण की प्रक्रिया में पारदर्शिता लाता है, ढांचागत परियोजनाएं और प्रभावित लोगों के पुनर्वास का आश्वासन देता है। यह अधिनियम सार्वजनिक–निजी भागीदारी द्वारा संचालित भारत के बड़े पैमाने पर औद्योनिकरण अभियान के एक भाग के रूप में भूमि अधिग्रहण के लिए नियम स्थापित करता है।[15]

आर0एफ0सी0टी0एल0ए0 आर0आर0 अधिनियम, 2013 ने भूमि अधिग्रहण अधिनियम, 1894 की जगह ले ली, जो ब्रिटिश शासन के दौरान अधिनियमित लगभग 120 साल पुराना कानून था।

मूल्यांकन/निष्कर्ष –

भारत में जनजातीय विकास काफी हद तक विस्थापन और पुनर्वास की धुरियों के इर्द–गिर्द केंद्रित रहा है बड़े पैमाने पर विकास परियोजनाओं और संरक्षण प्रयासों के कारण हुए विस्थापन ने इन समुदायों पर गहरा नकारात्मक प्रभाव डाला है, और पुनर्वास के प्रयास अक्सर अपर्याप्त व चुनौतिपूर्ण साबित हुए हैं। हालांकि, यह दृष्टिकोण जनजातीय विकास के समग्र और बहुआयामी स्वरूप को पूरी तरह से प्रतिबिंबित नहीं करता है। वास्तविक जनजातीय विकास में शिक्षा, स्वास्थ्य, आजीविका संवर्धन, सांस्कृतिक संरक्षण और स्वशासन को बढ़ावा देना भी शामिल है। अतः, एक समावेशी और न्यायसंगत जनजातीय विकास के लिए तिस्थापन को कम करने, प्रभावी पुनर्वास सुनिश्चित करने और उनके अधिकारों व सांस्कृतिक पहचान का सम्मान करते हुए एक एकीकृत दृष्टिकोण अपनाना अनिवार्य है। अर्थात् जब विकास और आधुनिकीकरण का सामना करना पड़ता है, तो अक्सर विकास परियोजनायें व्यक्तियों और समुदायों के रूप में आत्म–सम्मान की हानि का अनुभव करती है। एक ग्राम समुदाय के नैतिक मूल्य और सम्मान की हानि पर्याप्त और साथ ही साथ सामाजिक रूप से अपंग भी हो सकती है। विभिन्न अध्ययनों से पता चला है कि आदिवासी जिनके पास मजबूत सामुदायिक नेतृत्व संबंध हैं और अभी तक मुख्यधारा की बाजार अर्थव्यवस्था में शामिल नहीं हुए हैं सरकारी सत्ता पदानुक्रम से खतरा महसूस करते हैं। स्थानांतरण के बाद वे और अधिक खंडित, कमजोर और स्वाभाविक रूप से खुद का व्यवस्थित करने में असमर्थ हैं। भौगोलिक फैलाव और वाणिज्यिक ताकतों के खतरे के कारण लुप्त हो रहे सामुदायिक संबंध उनकी आत्माओं को और निचोड़ते हैं।

विस्थापन के कारण विस्थापितों को अपनी संस्कृति और धार्मिक प्रथाओं को खोने का जोखिम भी उठाना पड़ता है। वे अपनी सांस्कृतिक स्वायत्तता खो देते हैं और इस प्रक्रिया में उनकी पहचान ही दांव पर लग जाती है। नतीजतन, उनके जीवन का हर क्षेत्र भाषा से लेकर शादी के रीति–रिवाजों और धर्म तक पर हमला करता है। धार्मिक लोकाचार का धीरे–धीरे पतन हो रहा है जो उनके पर्यावरण और सामाजिक–कृषि प्रणालियों से निकटता से जुड़ा हुआ है। सामुदायिक चलय जिताधिक महत्व था अपने अर्थ खो देते हैं।

संदर्भ सूची :

1. सिन्हा अनुज कुमार, 2019, असली झारखण्ड, प्रभात प्रकाशन आसफ अली रोड, नई दिल्ली, 110002 पृ०स०– 179–80
2. सिंह डॉ० सुरेश कुमार, 2018 जंगल, जमीन और विकास द्वितीय संस्करण, विनय प्रकाशन, त्रिवेणी मार्केट, दिल्ली पृ०स०– 89–90
3. हरिवंश, 2012, झारखण्ड समय और सवाल, प्रभात प्रकाशन, 4/19 आसफ अली, रोड, नई दिल्ली–110002 पृ०स०– 153–154
4. हरिवंश, 2002. झारखण्ड दिसुम युक्तिगाथा और सृजन के सपने, प्रकाशक राज कमल प्रकाशन प्रा०लि०–1 बी० ने ताजी सुभाष मार्ग नई दिल्ली–1100002, पृ०स०– 176–177

5. हरिवंश अनुराग फैसल, 2009. झारखण्ड (अस्मिता के आयाम) प्रथम सस्करण, प्रकाशन संस्थान दरियागंज, नयी दिल्ली–11000 पृ०स०– 76–77
6. त्रिपाठी बी. एन. 2003, जमीन बचाओ आदोलन प्रभात प्रकाशन 4/19 आसफ अली रोड, नई दिल्ली पृ०स०– 76–77
7. कोइलकारो जल विद्युत परियोजना, भू–अर्जन एवं पुनर्वास निदेशालय, राची, हमारा संकल्प, 1991, बिहार सरकार, रांची, पृ०स०– 211
8. नेशनल हाइडोइलेक्टिक पॉवर कोरपोरशन लिमिटेड, मई 2000, कोइलकारोय, प्रोजेक्ट तोरपा रांची, बिहारव इनफारमशन ब्रोसर। पृ०स०– 304
9. पर्यावरण समिति, प्रतिवेदन, झरिया, जमीन धसने की घटना से उत्पन्न परिस्थिति तथा स्थानीय आबादी के पुनवांत की समस्या बिहार विधान परिषद पटना, 01 दिसम्बर 1996, पृ०स०– 89–90
10. बिहार विधान परिषद तीरारा प्रतिवदन, 'ए रिपोर्ट ऑन वर्स्स्ट इम्पेक्ट ऑफ यूरेनियम रेडियेशन, राजमहल परियोजना वाक्याइ माईनिग पब्लिशर्स बाई बिहार विधान परिषद दिसम्बर 1996, पृ०स०– 188
11. महतो शैलेन्द्र 2011, झारखण्ड की समरगाथा, प्रथम संस्करण, द्वितीय वर्दित संस्करण–2015) दानिश बुक्स 25 से स्काई लाइक अपार्टमेट गाजीपुर, दिल्ली–110096
12. लुईस पी., 2002. झारखण्ड भारजेलाइजेशन ऑफ ट्राइबल्स इ0पी0डब्ल्यू0 35 (18)–4087 XXV–36
13. लकडा रॉबिन, 2015, विकास के नाम पर आदिवासिया का विस्थापन प्रथम सस्करण, प्रकाशक नवारूण विकास प्रिंटर्स, पटना।
14. वीरोतम डॉ. बी. 2017. झारखण्डः इतिहास एवं सस्कृति प्रकाशक बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, राजेन्द्र नगर, पटना–800016
15. वासवी, 2003, ताबेन जाम आधार प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, एस0सी0एफ0 267, सेक्टर–16 पंचकूला–134113, हरियाणा

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2026 Page No. : 132-135

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES PRINT RESEARCH JOURNAL

सोशल मीडिया का भारतीय राजनीति और मतदाता व्यवहार पर प्रभाव

प्रिया जायसवाल
रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर।

सारांश :

इक्कीसवीं सदी में सूचना–प्रौद्योगिकी की तीव्र प्रगति ने राजनीतिक संचार के स्वरूप को मौलिक रूप से परिवर्तित कर दिया है। फेसबुक, ट्विटर (अब एक्स), व्हाट्सएप, यूट्यूब तथा इंस्टाग्राम जैसे सोशल मीडिया मंचों ने भारतीय राजनीति के प्रचार–प्रसार, जनसंपर्क तथा मतदाता संवाद के पारंपरिक तरीकों को नया रूप दिया है। प्रस्तुत शोध–पत्र भारतीय राजनीतिक परिदृश्य में सोशल मीडिया की बढ़ती भूमिका, राजनीतिक दलों द्वारा इसके रणनीतिक उपयोग, मतदाता व्यवहार पर इसके प्रभाव तथा इससे उत्पन्न चुनौतियों जैसे भ्रामक सूचना (फेक न्यूज), ध्रुवीकरण एवं डेटा गोपनीयता के मुद्दों का विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है।

मुख्य शब्द : सोशल मीडिया, मतदाता व्यवहार, राजनीतिक संचार, भ्रामक सूचना, डिजिटल प्रचार

1. प्रस्तावना :

भारत विश्व में इंटरनेट तथा स्मार्टफोन उपयोगकर्ताओं की दृष्टि से सबसे तीव्र गति से बढ़ने वाले देशों में से एक है। सस्ते डेटा तथा व्यापक मोबाइल पहुँच के कारण करोड़ों भारतीय आज सोशल मीडिया मंचों से जुड़े हुए हैं (कुमार, पी., 2025)। इस डिजिटल क्रांति ने राजनीतिक दलों, नेताओं तथा मतदाताओं के बीच संवाद के स्वरूप को पूर्णतः बदल दिया है (बालासुंदरम, ए., 2024)। 2014 के लोकसभा चुनाव को प्रायः भारत का पहला 'सोशल मीडिया चुनाव' कहा जाता है, जिसके पश्चात 2019 तथा 2024 के चुनावों में सोशल मीडिया की भूमिका और अधिक व्यापक तथा रणनीतिक हो गई (दलाल, आर. एस., 2025)।

वर्तमान समय में राजनीतिक दल सोशल मीडिया का उपयोग न केवल प्रचार–प्रसार के लिए, अपितु जनमत निर्माण, कार्यकर्ताओं के संगठन, चंदा–संग्रहण तथा प्रतिद्वंद्वियों के विरुद्ध रणनीति बनाने के लिए भी कर रहे हैं (गर्ग, ए., 2022, मलिक, एन., 2014)।

2. अध्ययन के उद्देश्य :

- भारतीय राजनीति में सोशल मीडिया के बढ़ते उपयोग की प्रवृत्तियों का अध्ययन करना।
- राजनीतिक दलों द्वारा सोशल मीडिया के रणनीतिक प्रयोग का विश्लेषण करना।
- मतदाता व्यवहार तथा राजनीतिक जागरूकता पर सोशल मीडिया के प्रभाव का मूल्यांकन करना।

- सोशल मीडिया से उत्पन्न चुनौतियों, यथा भ्रामक सूचना तथा ध्रुवीकरण, की पहचान करना।

3. शोध पद्धति :

प्रस्तुत अध्ययन में वर्णनात्मक तथा विश्लेषणात्मक शोध पद्धति अपनाई गई है। इसके अंतर्गत विभिन्न सरकारी रिपोर्टों, चुनाव आयोग के दस्तावेजों, शैक्षणिक शोध–पत्रिकाओं, समाचार माध्यमों तथा सर्वेक्षण एजेंसियों द्वारा प्रकाशित आँकड़ों का द्वितीयक विश्लेषण किया गया है। प्राप्त तथ्यों को व्यवस्थित रूप में तालिकाओं के माध्यम से प्रस्तुत कर उनका तुलनात्मक अध्ययन किया गया है।

4. परिणाम और चर्चा :

पिछले एक दशक में भारत में सोशल मीडिया उपयोगकर्ताओं की संख्या में अभूतपूर्व वृद्धि देखी गई है। यह वृद्धि ग्रामीण क्षेत्रों में भी तेजी से हो रही है, जिससे राजनीतिक दलों के लिए मतदाताओं तक पहुँचने का दायरा और अधिक व्यापक हो गया है। सस्ते स्मार्टफोन तथा किफायती डेटा योजनाओं ने इस विस्तार में निर्णायक भूमिका निभाई है, जिसके परिणामस्वरूप छोटे कस्बों तथा गाँवों के मतदाता भी अब राष्ट्रीय राजनीतिक विमर्श का सीधा हिस्सा बन गए हैं।

तालिका 1 : भारत में सोशल मीडिया उपयोगकर्ताओं की वृद्धि

वर्ष	अनुमानित सक्रिय सोशल मीडिया उपयोगकर्ता (करोड़ में)	प्रमुख उपयोग किए गए मंच
2014	लगभग 10–12	फेसबुक, ट्विटर
2019	लगभग 40	फेसबुक, व्हाट्सएप, यूट्यूब
2024	लगभग 75–80	व्हाट्सएप, इंस्टाग्राम, यूट्यूब, एक्स

भारतीय राजनीतिक दलों ने सोशल मीडिया को अपने प्रचार तंत्र का अभिन्न अंग बना लिया है। प्रत्येक प्रमुख राजनीतिक दल के पास समर्पित सोशल मीडिया प्रकोष्ठ कार्यरत है, जो सामग्री निर्माण, प्रसार तथा जनमत निर्माण का कार्य करता है। इसके प्रमुख उपयोग निम्नलिखित हैं :

- नेताओं की छवि निर्माण तथा व्यक्तिगत ब्रांडिंग हेतु।
- सरकारी योजनाओं तथा उपलब्धियों के प्रचार–प्रसार हेतु।
- युवा मतदाताओं को सीधे संबोधित करने तथा उन्हें संगठन से जोड़ने हेतु।
- वास्तविक समय में विरोधी दलों की आलोचना तथा प्रत्युत्तर देने हेतु।
- चंदा–संग्रहण तथा स्वयंसेवकों की भर्ती हेतु।

सोशल मीडिया ने मतदाताओं की राजनीतिक सूचना प्राप्त करने की आदतों को मौलिक रूप से बदल दिया है। पारंपरिक रूप से मतदाता समाचार–पत्रों तथा टेलीविजन पर निर्भर रहते थे, परंतु अब बड़ी संख्या में, विशेषकर युवा वर्ग, अपनी राजनीतिक जानकारी सोशल मीडिया मंचों से ही प्राप्त करते हैं। इससे राजनीतिक जागरूकता में वृद्धि तो हुई है, परंतु सूचना की गुणवत्ता तथा विश्वसनीयता को लेकर भी गंभीर प्रश्न उठे हैं। सोशल मीडिया ने मतदाताओं, विशेषकर युवा वर्ग, की राजनीतिक जानकारी प्राप्त करने तथा राजनीतिक विमर्श में भाग लेने की प्रक्रिया को सरल बना दिया है। परंतु इसके साथ ही इसने मतदाता व्यवहार पर कुछ नकारात्मक

प्रभाव भी डाले हैं, जैसे प्रतिध्वनि कक्ष प्रभाव, जिसमें मतदाता केवल अपनी विचारधारा से मेल खाने वाली सामग्री ही देखते हैं, जिससे उनके पूर्वाग्रह और सुदृढ़ होते जाते हैं। निम्न तालिका में सोशल मीडिया के मतदाता व्यवहार पर पड़ने वाले सकारात्मक तथा नकारात्मक प्रभावों का तुलनात्मक विवरण प्रस्तुत है।

तालिका 2 : मतदाता व्यवहार पर प्रभाव

पक्ष	सकारात्मक प्रभाव	नकारात्मक प्रभाव
सूचना पहुँच	त्वरित व सुलभ राजनीतिक जानकारी	असत्यापित व भ्रामक सूचना का प्रसार
सहभागिता	युवाओं की बढ़ती राजनीतिक सहभागिता	सतही व भावनात्मक सहभागिता में वृद्धि
विमर्श	खुला व विविध राजनीतिक विमर्श	ध्रुवीकरण व प्रतिध्वनि कक्ष प्रभाव
पारदर्शिता	नेताओं की सीधी जवाबदेही संभव	व्यक्तिगत आँकड़ों का दुरुपयोग

भारत में चुनावों के दौरान भ्रामक सूचनाओं तथा अफवाहों के प्रसार में उल्लेखनीय वृद्धि देखी गई है। व्हाट्सएप जैसे एन्क्रिप्टेड मंचों के माध्यम से फैलने वाली भ्रामक सूचनाओं पर नियंत्रण रखना विशेष रूप से कठिन है, क्योंकि इनकी सामग्री का सत्यापन प्रायः असंभव हो जाता है। इससे कई बार सामाजिक तनाव तथा हिंसा की घटनाएँ भी सामने आई हैं। इसके निवारण हेतु चुनाव आयोग द्वारा राजनीतिक दलों के साथ स्वैच्छिक आचार संहिता, फैक्ट–चेकिंग एजेंसियों के साथ सहयोग तथा सोशल मीडिया कंपनियों के साथ समन्वय जैसे प्रयास किए जा रहे हैं। सोशल मीडिया मंचों पर उपलब्ध विशाल आँकड़ों के आधार पर राजनीतिक दल मतदाताओं को उनकी रुचि, आयु, स्थान तथा विचारधारा के अनुसार लक्षित विज्ञापन (माइक्रो–टार्गेटिंग) भेजते हैं। यद्यपि यह प्रचार को अधिक प्रभावी बनाता है, तथापि इससे मतदाताओं की निजता तथा उनके स्वतंत्र निर्णय की क्षमता पर भी प्रश्नचिह्न लगते हैं। अतः डेटा संरक्षण संबंधी कानूनों का प्रभावी क्रियान्वयन आवश्यक हो जाता है।

2014, 2019 तथा 2024 के लोकसभा चुनावों के केस अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि प्रत्येक चुनाव में सोशल मीडिया की भूमिका पूर्व की तुलना में अधिक व्यापक तथा सुनियोजित होती गई है। 2014 के चुनाव में मुख्यतः फेसबुक तथा ट्विटर के माध्यम से छवि–निर्माण पर बल दिया गया, जबकि 2019 के चुनाव में व्हाट्सएप समूहों के माध्यम से सीधे मतदाताओं तक संदेश पहुँचाने की रणनीति प्रमुख रही। 2024 के चुनाव में इंस्टाग्राम रील्स तथा यूट्यूब शॉर्ट्स जैसे लघु वीडियो प्रारूपों का उपयोग युवा मतदाताओं को लक्षित करने के लिए बड़े पैमाने पर किया गया।

तालिका 3 : केस अध्ययन : प्रमुख चुनावों में सोशल मीडिया की भूमिका

चुनाव वर्ष	प्रमुख रणनीति	लक्षित वर्ग
2014	छवि–निर्माण व हैशटैग अभियान	शहरी युवा मतदाता
2019	व्हाट्सएप समूह व सीधा संदेश प्रसार	व्यापक जनसमूह, ग्रामीण–शहरी दोनों
2024	लघु वीडियो व प्रभावशाली व्यक्तियों का सहयोग	युवा व प्रथम बार मतदाता

5. निष्कर्ष :

सोशल मीडिया ने निःसंदेह भारतीय राजनीति तथा मतदाता व्यवहार को गहराई से प्रभावित किया है। यह राजनीतिक संवाद के लोकतंत्रीकरण का एक शक्तिशाली माध्यम बनकर उभरा है, किंतु इसके साथ जुड़ी चुनौतियों का समुचित समाधान किए बिना इसकी पूर्ण क्षमता का सदुपयोग संभव नहीं है। अतः यह आवश्यक है कि सरकार, चुनाव आयोग, सोशल मीडिया कंपनियाँ तथा नागरिक समाज मिलकर एक ऐसा पारिस्थितिकी तंत्र विकसित करें, जिसमें सोशल मीडिया लोकतांत्रिक प्रक्रिया को सुदृढ़ करने वाला माध्यम बने, न कि उसे कमजोर करने वाला।

संदर्भ सूची :

1. कुमार, पी. (2025). भारत में सोशल मीडिया और चुनावी राजनीति : बदलती गतिशीलताएँ। DosLV—, पीयर रिव्यूड रिसर्च जर्नल, 3(1)।
2. बालासुंदरम, ए., श्रीधरन, एन. वी., बाबू, डी. डी., – गोपीनाथ, पी. पी. (2024). केरल में मतदाताओं और उम्मीदवारों पर सोशल मीडिया के उपयोग और प्रभाव। जर्नल ऑफ क्रिएटिव कम्युनिकेशन्स, 09732586231223841।
3. दलाल, आर. एस. (2025). भारतीय राजनीति में सोशल मीडिया की भूमिका : एक विश्लेषण। एशियन जर्नल ऑफ मल्टीडायमेंशनल रिसर्च, 14(5), 1–12।
4. गर्ग, ए. (2022). भारतीय राजनीति में सोशल मीडिया की भूमिका : एक समीक्षा। जर्नल ऑफ कम्युनिकेशन एंड मैनेजमेंट, 1(01), 66–76।
5. मलिक, एन. (2014). भारत में व्यक्तिगत मतदाताओं पर सोशल मीडिया का प्रभाव (डॉक्टोरल शोधप्रबंध, डबलिन बिजनेस स्कूल)।
6. शर्मा, बी. के., – परमा, एस. (2016). मतदाता व्यवहार पर सोशल मीडिया का प्रभाव 'ग्वालियर, मध्य प्रदेश का एक वर्णनात्मक अध्ययन। इंटरनेशनल जर्नल ऑफ रिसर्च इन कंप्यूटर साइंस एंड मैनेजमेंट, 4(1), 5–8।
7. सिंह, एस. (2025). भारतीय चुनावों पर सोशल मीडिया का प्रभाव। अनुसंधानवल्लरी, 4535–4548।
8. मुथु, यू. टी. (2025). केरल में सोशल मीडिया और राजनीतिक सहभागिता : संचार रणनीतियाँ और मतदान व्यवहार। कम्युनिकेशन रिसर्च, 1(2), 26–50।
9. कार्नी, के. (2022). मतदाताओं पर सोशल मीडिया का प्रभाव : एक भारतीय चुनाव से प्रायोगिक साक्ष्य। जॉब मार्केट पेपर, 2022, 1–44।
10. कुमार, जे. आर., घाउस, एस. एम., – रेड्डी, टी. एन. (2021). मतदाता व्यवहार पर सोशल मीडिया का प्रभाव। एशियन जर्नल ऑफ मैनेजमेंट, 12(4), 367–374।

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2026 Page No. : 136-142

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES PRINT RESEARCH JOURNAL

A META-ANALYTIC REVIEW OF INTERVENTIONS FOR THE PREVENTION AND REDUCTION OF BURNOUT AMONG EMPLOYEES IN THE CORPORATE SECTOR

Monika Sahai

Department of Psychology, S. N. Sen B. V. P. G. College, Kanpur.

Abstract :

Occupational burnout has become an important organizational and psychological concern in contemporary corporate work. High workload, prolonged availability, performance pressure, low autonomy, work–life imbalance and rapidly changing technological demands can undermine employees' psychological resources. The present paper provides a meta-analytic review of evidence on interventions intended to prevent or reduce burnout, with emphasis on individual, organizational and combined approaches and with particular attention to evidence relevant to India. Rather than presenting a new statistical meta-analysis, the paper synthesizes findings reported by previous quantitative reviews and selected Indian and international intervention studies.

Maricutoiu et al. (2016) reported small effects for general burnout (d = .22) and exhaustion (d = .17), whereas Bes et al. (2023) found a small overall reduction in exhaustion (d = -.30), with larger effects for workload-focused interventions (d = -.44) and combined interventions (d = -.54). Indian evidence includes workplace mindfulness, meditation and yoga-based programmes, while an Indian scoping review indicates that workplace mental-health interventions remain comparatively under-evaluated.

Overall, the literature favours multilevel strategies that combine employee-focused psychological skills with changes in workload, participation, leadership and work organization. The paper identifies methodological gaps and proposes directions for future corporate-sector research.

Keywords : burnout, corporate employees, occupational stress, workplace intervention, mindfulness, organizational intervention, employee well-being, meta-analysis.

1. Introduction :

Burnout is increasingly understood as a consequence of sustained occupational stress rather than as a temporary episode of tiredness. The World Health Organization classifies burnout as an occupational phenomenon associated with chronic workplace stress that has not been successfully managed. Its central manifestations include exhaustion, psychological distancing or cynicism toward work, and diminished professional efficacy. In corporate environments, these experiences may be intensified by demanding targets, long or irregular working hours, continuous digital connectivity, job insecurity, role ambiguity and pressure to maintain performance under changing conditions.

The consequences extend beyond individual discomfort. Persistent burnout can affect motivation, work engagement, interpersonal functioning, productivity, absenteeism and intention to leave an organization. Consequently, organizations have increasingly introduced employee assistance programmes, wellness activities, mindfulness training, stress-management workshops, flexible work policies and organizational redesign. Yet an important question remains: which forms of intervention are most consistently associated with reduced burnout?

The present paper addresses this question through a review of quantitative meta-analytic evidence together with selected Indian and international studies published broadly during 2010–2026. The term meta-analytic review is used deliberately : the paper does not claim to have independently recalculated pooled effect sizes from every primary study. Instead, it retains authentic effect estimates from established meta-analyses and interprets them alongside relevant intervention evidence.

2. Conceptual Background :

Burnout is commonly conceptualized through emotional exhaustion, cynicism or depersonalization, and reduced professional efficacy. Emotional exhaustion reflects depletion of psychological energy; cynicism reflects distancing from work; and reduced efficacy concerns perceptions of competence and effectiveness. These dimensions do not necessarily respond equally to intervention. Earlier quantitative evidence suggests that interventions may influence exhaustion more reliably than the attitudinal dimensions of burnout.

A useful distinction is between individual and organizational sources of intervention. Individual approaches attempt to strengthen coping, self-regulation and psychological flexibility through mindfulness, cognitive-behavioural methods, relaxation, meditation, resilience training or counselling. Organizational approaches alter working conditions through workload management, participation, work-schedule changes, supervisory support or job redesign. Combined approaches operate at both levels.

3. Review of Meta-Analytic Evidence :

Maricutoiu, Sava, and Butta (2016) conducted a controlled-intervention meta-analysis using a random-effects model. They reported a small overall effect for general burnout (d = .22; k = 13) and exhaustion (d = .17; k = 34). Effects for depersonalization (d = .04) and personal accomplishment (d = -.02) were not statistically significant. Their findings indicate that intervention effects are more dependable for exhaustion than for all dimensions of burnout. The review also suggested that cognitive-behavioural and relaxation approaches were particularly relevant to exhaustion.

Bes et al. (2023) subsequently concentrated on organizational interventions and exhaustion. From 2,425 identified records, 228 full texts were assessed and 11 original articles representing 13 studies were included. The overall pooled effect was d = -.30 (95% CI -.42 to -.18), with $I^2 = 62.28\%$, indicating meaningful heterogeneity. Workload-focused interventions produced d = -.44, participatory interventions d = -.34, while combined interventions showed d = -.54. The authors nevertheless rated the overall evidence as very low quality because of limited studies, heterogeneity and risk of bias.

These two meta-analyses provide complementary conclusions. The earlier synthesis supports modest benefits from controlled interventions generally, while the later synthesis points toward organizational and combined approaches as especially promising for exhaustion. The large estimate for combined interventions should be interpreted cautiously because it was based on only two studies.

4. Individual-Level Interventions :

Individual interventions include mindfulness-based programmes, meditation, relaxation, cognitive-behavioural techniques, resilience training and counselling. Their rationale is that employees can acquire skills for attentional regulation, cognitive restructuring, emotional regulation and recovery from work demands. Such programmes are relatively easy to implement and can be delivered in person or digitally.

Indian evidence provides examples of this approach. Biswal and Srivastava (2022) studied 52 mid-level and senior business executives who participated in classroom-based mindfulness programmes. The reported findings indicated improved psychological capital and reduced burnout and performance anxiety. Upadhyay et al. (2022) evaluated an online multicomponent yogic and meditation programme among 71 information-technology employees using a randomized active-control design; the study was designed to assess stress, burnout, anxiety, depression, mindfulness and positive affect. These studies are useful for corporate relevance, although their samples and designs do not justify generalizing their findings to all Indian employees.

Individual interventions should therefore be regarded as one component of burnout prevention rather than as a substitute for organizational change. Teaching employees to cope more effectively

cannot fully compensate for chronically excessive workload, inadequate staffing or unsupportive management.

5. Organizational-Level Interventions :

Organizational interventions target the conditions that generate or maintain chronic occupational stress. Common strategies include workload redistribution, staffing adjustments, participatory problem solving, improved scheduling, greater autonomy, leadership development, clearer role structures and stronger employee voice. Their theoretical advantage is that they attempt to modify the stress-producing environment rather than requiring employees to adapt indefinitely to it.

Bes et al. (2023) provide the strongest recent quantitative evidence in this category. Their analysis found a small overall reduction in exhaustion, with statistically beneficial effects for participatory and workload-focused interventions. The workload result is particularly important because excessive job demand is a central pathway to exhaustion. However, scheduling interventions did not show the same clear benefit, demonstrating that not every organizational change automatically reduces burnout.

Evidence from India also indicates that organizations are experimenting with corporate wellness programmes, employee assistance services, counselling, yoga and meditation, work–life balance measures, peer support and psychological first-aid. A rapid systematic scoping review of Indian workplace mental-health interventions identified 1,311 records and included 30 records.

It concluded that many programmes were primarily curative and that relatively few included comprehensive needs assessment, rigorous impact evaluation or organizational policy change. This is an important research gap for corporate psychology in India.

6. Combined Interventions :

Combined interventions integrate individual psychological support with organizational modifications. They may include mindfulness or stress-management training alongside workload redesign, participatory organizational change, managerial support or work-schedule reforms. Conceptually, this approach is consistent with the view that burnout develops through interaction between personal resources and job demands.

Bes et al. (2023) reported the largest pooled effect for combined interventions, d = -.54 (95% CI -.76 to -.32), although this estimate was derived from only two studies. The result should therefore be treated as encouraging rather than definitive.

Maricutoiu et al. (2016) similarly found that intervention benefits were strongest and most consistent for exhaustion, reinforcing the importance of targeting the energy-depletion component of burnout.

An Indian corporate example is the study of the Yoga Prana Vidya intervention among employees and executives, which examined changes in anxiety, depression and burnout. Other Indian workplace studies have examined meditation and mindfulness-oriented programmes. Taken together, these findings suggest that culturally acceptable mind–body practices may have potential, but stronger randomized, adequately powered corporate trials with long-term follow-up are needed.

7. Study-Wise Review of Selected Evidence

Study / year	Context / sample	Intervention	Main finding
Maricutoiu et al. (2016)	International; controlled employee studies	Mixed interventions	Burnout d=.22; exhaustion d=.17; depersonalization and personal accomplishment nonsignificant.
Bes et al. (2023)	International; 13 studies	Organizational / combined	Overall exhaustion d=−.30; workload −.44; participatory −.34; combined −.54.
Biswal & Srivastava (2022)	India; 52 executives	Mindfulness	Reported reduced burnout and performance anxiety; improved psychological capital.
Upadhyay et al. (2022)	India; 71 IT employees	Online yogic/mindfulness programme	Randomized active-control study assessing stress, burnout and related outcomes.
Nanduri (2020)	India; corporate employees/executives	Yoga Prana Vidya	Reported improvement in anxiety, depression and burnout-related outcomes.
Indian scoping review (2022)	India; 30 workplace intervention records	Wellness, EAP, counselling, health promotion	Interventions existed but rigorous impact evaluation and policy-level approaches were limited.

Note. The table summarizes findings reported by the cited studies; it is not a newly calculated pooled analysis.

8. Indian and International Evidence : Comparative Interpretation :

The international literature has a longer tradition of controlled workplace-intervention research and quantitative synthesis. Indian research is growing but remains more heterogeneous. The Indian scoping evidence indicates that organizations use counselling, employee assistance, wellness sessions, work–life balance initiatives, peer support and psychological first-aid, yet systematic outcome evaluation is comparatively limited. Corporate studies involving mindfulness, meditation and yoga suggest promising individual-level effects, but organizational-level trials are less common.

This difference has implications for future research. Indian corporate workplaces vary substantially across information technology, banking, insurance, manufacturing, education-related services and start-up environments. Cultural expectations concerning work, hierarchy, family responsibilities and managerial authority may influence both burnout and intervention uptake. Consequently, interventions imported from other countries should be culturally adapted and tested

rather than assumed to have identical effects.

9. Discussion :

The reviewed evidence supports three broad conclusions. First, burnout interventions can work, but average effects are usually modest. Second, exhaustion is more responsive to intervention than cynicism or professional efficacy. Third, organizational and combined interventions deserve greater emphasis because burnout is partly produced by job demands and working conditions.

The larger effect associated with combined interventions in the 2023 meta-analysis is encouraging but requires replication.

A multilevel prevention model therefore appears most appropriate for corporate organizations. At the primary level, organizations should reduce preventable stressors through realistic workload, adequate staffing, supportive leadership, autonomy and recovery opportunities. At the secondary level, employees can receive mindfulness, cognitive-behavioural, relaxation and resilience training. At the tertiary level, organizations should provide confidential psychological support and referral mechanisms for employees experiencing substantial distress or functional impairment.

Importantly, wellness programmes should not become symbolic substitutes for structural reform. Offering meditation sessions while maintaining unrealistic workloads may place responsibility for burnout on the individual. A psychologically informed organization instead treats employee well-being as an organizational design issue as well as an individual health issue.

10. Limitations and Research Gaps :

The available evidence has several limitations. Studies differ in burnout measures, intervention duration, occupational groups, follow-up periods and methodological quality. Heterogeneity is substantial in some quantitative syntheses. Indian research is particularly limited by small samples, quasi-experimental designs and short follow-up periods. Corporate-sector studies also frequently focus on single organizations, restricting generalizability.

Future studies should use larger randomized or cluster-randomized designs, preregister protocols, report standardized effect sizes, include follow-up of at least 6–12 months, and examine organizational moderators such as leadership, workload, autonomy, psychological safety and hybrid work. Indian research should also compare sectors and consider gender, career stage, remote work and digital overload without reducing burnout to an individual coping deficit.

11. Conclusion :

Burnout control in the corporate sector requires more than isolated stress-management activities. The meta-analytic literature indicates modest but meaningful benefits from interventions, with the clearest evidence for reductions in exhaustion.

Organizational approaches that address workload and employee participation appear promising, while combined individual–organizational interventions may produce larger effects. Indian studies of mindfulness, meditation and yoga-based programmes add culturally relevant evidence, but the national literature still needs stronger evaluation and longer-term designs.

The most defensible conclusion is therefore not that one intervention eliminates burnout, but that sustained reduction is more likely when organizations modify sources of chronic stress while simultaneously strengthening employees' psychological resources. Future Indian corporate research should build on this multilevel perspective and develop rigorously evaluated, culturally responsive programmes.

12. References :

- Bes, I., Shoman, Y., Al-Gobari, M., Rousson, V., & Guseva Canu, I. (2023). Organizational interventions and occupational burnout : A meta-analysis with focus on exhaustion. International Archives of Occupational and Environmental Health, 96, 1211–1223. https://doi.org/10.1007/s00420-023-02009-z
- Biswal, K., & Srivastava, K. B. L. (2022). Mindfulness-based practices, psychological capital, burnout and performance anxiety. Development and Learning in Organizations. https://doi.org/10.1108/DLO-10-2021-0188
- Maricutoiu, L. P., Sava, F. A., & Butta, O. (2016). The effectiveness of controlled interventions on employees' burnout : A meta-analysis. Journal of Occupational and Organizational Psychology, 89(1), 1–27. https://doi.org/10.1111/joop.12099
- Nanduri, V. S. (2020). A study on the effects of Yoga Prana Vidya System (YPV) intervention at the workplace for corporate employees and executives to alleviate anxiety, depression and burnout; and participants' perceptions and experiences of the YPV intervention. International Journal of Indian Psychology, 8(3). https://doi.org/10.25215/0803.047
- Upadhyay, A. K., et al. (2022). The effect of Inner Engineering Online (IEO) program on reducing stress for information technology professionals: A randomized control study. Evidence-Based Complementary and Alternative Medicine, 2022, 9001828. https://doi.org/10.1155/2022/9001828
- World Health Organization. (2019). Burn-out anoccupational phenomen on : International Classification of Diseases. World Health Organization.

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2026 Page No. : 143-150

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES PRINT RESEARCH JOURNAL

युवा और दीर्घकालिक नेतृत्व

डॉ. पुनीता गिरि
शोधार्थी (शिक्षा)
सोना देवी विश्वविद्यालय, घाटशिला।

किसी भी राष्ट्र में युवा शक्ति उसकी रीढ़ होती है। जिस पर राष्ट्र के हर परिदृश्य का विकास टिका होता है। अतः राष्ट्र की युवा शक्ति को सुदृढ़ बनाने के लिए देश में 2020 से नई शिक्षा नीति लागू की गई है, जो संयुक्त राष्ट्र के सतत् विकास लक्ष्यों (एस.डी.जी.4) के अनुरूप है। जिसका उद्देश्य 2030 तक सार्वभौमिक रूप से गुणवत्तापूर्ण और समावेशी शिक्षा सुनिश्चित करना है। एन.ई.पी. 2020 शिक्षा में सुधार करके समावेशी शिक्षा और सतत् विकास के लिए शिक्षा (ई.एस.डी.) को एकीकृत करके समग्र विकास में योगदान करती है। जिसके अंतर्गत बुनियादी साक्षरता, गुणवत्तापूर्ण शिक्षा तक पहुंच और आजीवन सीखने पर जोर दिया गया है। जो 21वीं सदी के लक्ष्यों को प्राप्त करने में मदद करेगा। सितंबर 2016 में संयुक्त राष्ट्र द्वारा 17 युवा नेताओं के पहले वर्ग की घोषणा की गई। युवा मामलों के दूत द्वारा आयोजित सतत् विकास लक्ष्यों (एस.डी.जी.) के युवा जो विभिन्न पृष्ठभूमियों, क्षेत्रों से आते हैं और अधिक टिकाऊ विश्व के निर्माण में उनके नेतृत्व और योगदान के लिए सम्मानित किया जाता है। ये युवा नेता, युवा मामलों के साथ मिलकर युवाओं के सतत् विकास लक्ष्यों (एस.डी.जी.) की प्राप्ति के लिए काम करते हैं। आज देश और समाज में युवा लगातार सतत् विकास के लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं, लेकिन युवा वर्ग का एक बड़ा हिस्सा आज नशाखोरी, अपराध, बेरोजगारी, गिरते नैतिक मूल्य जैसी चिंताजनक सामाजिक बुराइयों से ग्रस्त है। जिस वजह से समाज को आगे बढ़ाने की जिम्मेदारी युवा वर्ग के दूसरे हिस्से पर आ जा रही है। युवाओं में मौजूदा सत्ता, संरचनाओं और बदलाव की बाधाओं को पहचाने और उन्हें चुनौती देने और विरोधाभासों तथा पूर्वाग्रहों को उजागर करने की क्षमता होती है लेकिन यह सब गुणवत्तापूर्ण शिक्षा से ही संभव है। अतः सबसे पहले शिक्षा के आधारभूत ढांचे को अर्थात् शिक्षक, भवन, संस्थान, शैक्षिक माहौल बनाने, बच्चों को पूर्ण विकास का अवसर प्रदान करने, यहां तक कि अभिभावकों की भी जवाबदेही निश्चित करने, सामाजिक जागरूकता आदि को बेहतर करने पर ही हो सकता है। एक स्वस्थ बच्चा जिसका सर्वांगीण विकास हो चुका है, जाहिर सी बात है कि कल समाज में वह अपनी जिम्मेदारी और भागीदारी सुनिश्चित करेगा। युवाओं में कार्य करने और दूसरों को प्रेरित करने की अपार संभावनाएं और शक्ति विद्यमान होती है, बस इन्हें सही दिशा और मार्गदर्शन देने की जरूरत है।

किसी भी राष्ट्र की वास्तविक शक्ति उसके युवाओं में निहित होती है, यदि यह शक्ति सही दिशा में प्रयुक्त हो तो देश विकास और प्रगति के उच्चतम शिखर तक पहुंच सकता है। हमें यह समझना होगा कि राष्ट्र निर्माण

केवल सरकार या जनप्रतिनिधियों का कार्य नहीं है। यह प्रत्येक व्यक्ति की जिम्मेदारी है, जिसमें युवा भी शामिल है इसलिए बहुत जरूरी है कि देश का प्रत्येक युवा सकारात्मक दिशा में आगे बढ़े और देश की तरक्की में अपना योगदान दे। देश बढ़ेगा तभी हम भी बढ़ेंगे।[1]

सस्टेनेबल (Sustainable) का अर्थ होता है टिकाऊ, दीर्घकालिक या लंबे समय तक कायम रहने वाला अर्थात् ऐसी प्रक्रिया जो पर्यावरण को नुकसान पहुंचे बिना या प्राकृतिक संसाधनों को खत्म किए बिना लंबे समय तक जारी रह सके। इसे संधारणिय, संपोषणीय या संवहनीय के रूप में समझा जा सकता है। सतत् व संपोषणीय विकास के कई आयाम है जैसे :–

- **पर्यावरणीय** – ऐसी गतिविधियाँ या उत्पाद जो पर्यावरण पर न्यूनतम नकारात्मक प्रभाव डालें और लंबे समय तक चले।
- **आर्थिक** – आर्थिक विकास का ऐसा स्तर जिसे प्राकृतिक संसाधनों को खत्म किए बिना बनाए रखा जा सकता है।
- **सामाजिक** – ऐसी नीतियाँ जो सभी के लिए बेहतर जीवन स्तर सुनिश्चित करती है जैसे शिक्षा, स्वास्थ्य सेवा तक सभी की पहुंच में सुधार आदि।

किसी भी समाज में युवा कई समस्याओं के समाधानकर्ता हैं। ये समाज के अभिन्न अंग हैं। कई बार उनमें असीम ऊर्जा और उत्साह दिखाई देता है और वह अक्सर प्रासंगिक मुद्दों पर नई दृष्टिकोण प्रस्तुत कर सकते हैं।[2] वहीं समाज में युवाओं का एक बड़ा वर्ग है जो चोरी, डकैती, नशाखोरी, जुआ, स्मगलिंग, तस्करी जैसी अपराधिक गतिविधियों में व्याप्त हैं। जो समाज के विकास में कई समस्याएं पैदा करती हैं। अगर हम ऐसे युवाओं को एक 'समस्या' कहें तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। अगर इसके कारण को देखें तो सीधे से समाज के शिक्षा तंत्र तथा सामाजिक माहौल जिम्मेदार हैं।

भारत में राष्ट्रीय युवा नीति 2014 के अनुसार 15 से 29 वर्ष की आयु के युवाओं की संख्या अनुमानित रूप से 371.4 मिलियन से अधिक है, जो देश की कुल जनसंख्या का लगभग 27.2 प्रतिशत है। यह संख्या भारत को दुनिया के सबसे बड़े युवा देश में से एक बनती है और यह जनसंख्या लाभांश डेमोग्राफिक डिविडेंड का एक महत्वपूर्ण अवसर प्रस्तुत करता है।[3]

युवाओं की परिभाषा और संख्या[4] :–

- **आयु वर्ग** – राष्ट्रीय युवा नीति 2014 के अनुसार भारत में युवाओं की आयु सीमा 15 से 29 वर्ष निर्धारित की गई है।
- **युवाओं की परिभाषा** - राष्ट्रीय युवा नीति के अनुसार 18 से 29 वर्ष की आयु वर्ग को युवा माना जाता है। जबकि यूनिसेफ के अनुसार 15 से 29 वर्ष की आयु के लोगों को युवा माना जाता है। वर्ष 2014 में राष्ट्रीय युवा नीति में बदलाव करने के बाद 15 से 30 वर्ष के लोगों को युवा माना गया है।
- **महत्व और अवसर – जनसंख्या की लाभांश** – युवाओं की बड़ी संख्या देश के जनसंख्या लाभांश में योगदान करती है। जिसका अर्थ है कामकाजी उम्र की आबादी का बड़ा हिस्सा आर्थिक विकास को गति देता है।
- **वैश्विक पहचान** – भारत के युवाओं की आज वैश्विक पहचान बनी है। भारत के युवाओं का एक बड़ा

हिस्सा यू.एस.ए., यू.ए.ई., इंग्लैंड, रुस आदि दुनिया के विभिन्न देशों में जाकर शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं तथा वहां हर क्षेत्र में अपना योगदान दे रहे हैं या फिर अपने देश भारत में आकर नित–नए अन्वेषण कर रहे हैं। जब से भारत में कौशल विकास जैसी योजनाएं चल रही हैं, भारत के कुशल युवा यहां के विकास में योगदान दे रहे हैं साथ ही इजराइल, रूस, सऊदी अरब जैसे देशों में भारत के कुशल युवाओं की मांग बढ़ी है। अतः हम कह सकते हैं कि इस तरह से प्रशिक्षित व कौशल युवा आज देश के लिए बड़ी संसाधन हैं, जो राष्ट्र की आय को बढ़ाने में योगदान दे रहे हैं।

चुनौतियाँ –

जहाँ युवा वर्ग देश के लिए एक अवसर है वहीं यह कई चुनौतियां भी पैदा करता है। इतनी बड़ी युवा आबादी होने के कारण भारत को शिक्षा, रोजगार और स्वास्थ्य देखभाल जैसे क्षेत्रों में बड़ी चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। जिनका समाधान करना अति आवश्यक है।[5]

हाल ही में 'सांख्यिकी और कार्यक्रम कार्यान्वयन मंत्रालय' (MOSPI) ने 'भारत में युवा 2022' रिपोर्ट जारी की है, जो दर्शाता है कि युवाओं की जनसंख्या हिस्सेदारी घटने लगी है जबकि 2021–36 के दौरान बुजुर्गों की हिस्सेदारी बढ़ने की उम्मीद है। इसके कई कारण हैं। प्रजनन क्षमता में निरंतर गिरावट के कारण कार्यशील आयु वर्ग 25 से 64 वर्ष के बीच में जनसंख्या का संकेंद्रण बढ़ गया और आयु वितरण में यह बदलाव त्वरित आर्थिक विकास के लिए समयबद्ध अवसर प्रदान करती है, जिसे जनसंख्या लाभांश के रूप में जाना जाता है। इस रिपोर्ट के अनुसार कुल युवा जनसंख्या 1991 में 222.7 मिलियन से बढ़कर 2011 में 333.4 मिलियन हो गई तथा अनुमान तथा कि 2021 तक यह 371.4 मिलियन हो जाएगी तथा 2036 तक घटकर यह 345.5 मिलियन हो जाएगी।[6]

युवा और बुजुर्ग जनसंख्या का अनुपात –

1991 में कुल जनसंख्या में युवाओं का अनुपात 26.6% था जो 2016 में बढ़कर 27.9% हो गया, लेकिन इसके बाद इसमें गिरावट नजर आने लगी तथा 2036 तक इसके 22.7 प्रतिशत तक पहुंचाने का अनुमान है। जबकि एक अध्ययन के अनुसार कुल जनसंख्या वृद्धि का अनुपात 1991 में 6.8 प्रतिशत था जो 2016 में 9.2% हो गया और अनुमान है कि 2036 तक यह 14.9% तक पहुंच जाएगा। अनुमानित है कि 2036 तक केरल, तमिलनाडु और हिमाचल प्रदेश आदि राज्यों में युवाओं की तुलना में वृद्धों की संख्या अधिक होगी वहीं बिहार, यू.पी. में 2021 के बाद युवा जनसंख्या के अनुपात में गिरावट शुरू होने की उम्मीद है। महाराष्ट्र, एम.पी. और राजस्थान जैसे राज्यों में आधे से अधिक युवा अर्थात् 52% रहने की उम्मीद है।[7]

भारत जैसे विशाल देश में बढ़ती आबादी के लिए विशेष रूप से युवाओं को कई चुनौतियों का सामना करना पड़ता है जैसे – शिक्षा तक पहुंच, लाभकारी रोजगार, लैंगिक असमानता, युवा अनुकूल स्वास्थ्य सेवाएं और किशोर गर्भावस्था आदि।

बढ़ती जनसंख्या के साथ वृद्घों का अनुपात भी बढ़ेगा। इससे बेहतर स्वास्थ्य सेवाओं और वृद्धजनों के लिए कल्याणकारी योजनाओं/कार्यक्रमों की मांग बढ़ेगी। सामाजिक सुरक्षा और लोक कल्याणकारी प्रणालियों पर दबाव पड़ेगा। सरकार को समाज में स्थिरता लाने के लिए अगले 4 से 5 वर्षों का उपयोग उत्पादक रोजगार सृजन में तेजी लाने के लिए किया जाना चाहिए। आमतौर पर अनौपचारिक रोजगार में लगे लोगों के पास

सामाजिक सुरक्षा नहीं होती, इससे संबंधित राज्य पर बोझ बढ़ जाता है। अतः सरकार को सक्रिय श्रम बाजार नीतियों को अपनाने की आवश्यकता है। विनिर्माण क्षेत्र में रोजगार का हिस्सा बढ़ाने की आवश्यकता है क्योंकि वर्तमान श्रम शक्ति में जो लोग हैं वह कुछ वर्षों में सेवानिवृत हो जाएंगे। इसके बाद ही वृद्ध व्यक्तियों के बढ़ते अनुपात के अनुसार सार्वजनिक कार्यक्रमों को अनुकूलित करने के लिए कदम उठाने की जरूरत है।

भारत में युवाओं की भूमिका[8] –

भारत में युवाओं की भूमिका देश के आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक विकास के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। वे देश के भविष्यनिर्माता हैं। जिनमें नवाचार, जोश और बदलाव लाने की क्षमता है। युवा न केवल आर्थिक विकास में योगदान देते हैं, बल्कि सामाजिक न्याय और राष्ट्रीय एकता को भी बढ़ावा देते हैं। युवाओं की भूमिका के मुख्य पहलू निम्नलिखित है :–

1. **आर्थिक विकास** – युवा देश की सबसे बड़ी संपत्ति है और उनका ऊर्जावान योगदान सकल राष्ट्रीय आय में वृद्धि करता है। वह नवाचार और प्रौद्योगिकी के माध्यम से आर्थिक विकास को गति प्रदान करते हैं।
2. **सामाजिक परिवर्तन** – युवा समाज में प्रचलित बुराइयों, सामाजिक अन्याय और भेदभाव के विरूद्ध आवाज उठाने में सक्षम होते हैं। वह सामाजिक समानता और जागरूकता फैलाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।
3. **नवाचार और उद्यमिता** – युवाओं में नए विचारों और तकनीकी समाधानों को विकसित करने की अपार क्षमता है, जो भारत को एक स्मार्ट और विकसित राष्ट्र बनाने में मदद करते हैं।
4. **शासन में भागीदारी** – युवा शासन के भविष्य का निर्माता है और स्थानीय शासन से लेकर राष्ट्रीय स्तर तक अपनी सक्रिय भागीदारी के माध्यम से सकारात्मक बदलाव ला सकते हैं।
5. **राष्ट्रीय एकता** – युवा राष्ट्र के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। जाति, धर्म, भाषा और अन्य मतभेदों से ऊपर उठकर राष्ट्रीय एकता को मजबूत करते हैं।
6. **जागरूक नागरिक** – सरकार और गैर सरकारी संगठन युवाओं को प्रोत्साहित करते हैं कि वह सक्रिय और जिम्मेदार नागरिक बने, स्वयं सेवा करें और राष्ट्र निर्माण में अपना योगदान दें।

इस तरह से राष्ट्र के विकास में युवाओं की भागीदारी अत्यंत महत्वपूर्ण है। वह अपनी उर्जा नवाचार और नए विचारों से राष्ट्र को प्रगति की ओर ले जा सकते हैं। युवाओं का योगदान स्वास्थ्य, शिक्षा, प्रौद्योगिकी और शासन जैसे विभिन्न क्षेत्रों में हो सकता है। जहां वे अपने कौशल का उपयोग करके राष्ट्र निर्माण में मदद कर सकते हैं।

सामाजिक और राजनीतिक भागीदारी[9]–

- **सक्रिय नागरिकता** – युवा सामाजिक और राजनीतिक प्रक्रियाओं में सक्रिय रूप से भाग ले सकते हैं, जैसे कि मतदान के माध्यम से एक ईमानदार और विकास उन्मुख सरकार चुनना।
- **सकारात्मक बदलाव** – यह मौजूदा सामाजिक समस्याओं को पहचान कर और नवीन सकारात्मक प्रभाव डाल सकते हैं।
- **नेतृत्व विकास** – युवा नेतृत्व और जिम्मेदारी की भावना विकसित करके अपने समुदायों और राष्ट्र का नेतृत्व कर सकते हैं।

- **जागरूकता और शिक्षा** – वे अपने साथियों और समुदाय में राष्ट्रीय और वैश्विक मुद्दों के बारे में जागरूकता फैला सकते हैं।

आर्थिक और कौशल आधारित योगदान –

शिक्षा और व्यावसायिक प्रशिक्षण के माध्यम से युवा खुद को राष्ट्र के निर्माण के लिए तैयार कर सकते हैं। वह अपने कौशल का उपयोग करके समाज और राष्ट्र में योगदान दे सकते हैं।

किसी भी राष्ट्र का विकास भावी पीढ़ी पर निर्भर करता है। लोकतंत्र, अर्थव्यवस्था, प्रौद्योगिकी और चिकित्सा जगत की प्रगति का भविष्य युवाओं पर निर्भर करता है। गरीबी, बेरोजगारी, ग्लोबल वार्मिंग और कई प्रकार के प्रदूषण आज विश्व के सामने मौजूद समस्याएं हैं। इन सभी समस्याओं का समाधान भावी पीढ़ी के पास है।

इतिहास गवाह है कि अगली पीढ़ी ने हमेशा ही भविष्य की समस्याओं का समाधान किया है। समय के साथ समाज में बदलाव लाना जरूरी है। युवा इस बदलाव की अगुवाई कर सकते हैं। स्वामी विवेकानंद ने कहा था 'मेरा विश्वास युवा पीढ़ी में है, आधुनिक पीढ़ी में और उन्हीं में से मेरे कार्यकर्ता निकलेंगे।' यह उद्धरण युवाओं के समाज पर पड़ने वाले प्रभाव को दर्शाता है। ब्रिटिश शासन से मुक्त कराने में युवाओं ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। युवाओं में दुनिया बदलने के अपार क्षमता है। जब युवा एकजुट होते हैं तो हम दुनिया में रहने के लिए एक बेहतर जगह बना सकते हैं और जब हम विभाजित होते हैं तो हमारे पास दुनिया को नष्ट करने की भी शक्ति होती है। युवा किसी भी देश की जनसंख्या का सबसे गतिशील और महत्वपूर्ण वर्ग होता है। अतः युवाओं को अच्छे नेता, आविष्कारक और प्रवर्तक बनने के लिए, उन्हें भविष्य बदलने के लिए अच्छा स्वास्थ्य, प्रशिक्षण और शिक्षा प्रदान की जानी चाहिए। जब युवा किसी पर निर्भर रहने के बजाय काम करेंगे और कमाएंगे तो देश की अर्थव्यवस्था को बढ़ावा मिलेगा।[10]

आज भारत दुनिया के सबसे युवा देश में है, जिसकी 55% से अधिक जनसंख्या 25 वर्ष से कम आयु की है और 60% से अधिक जनसंख्या कार्यशील आयु वर्ग की है, जो 25 से 60 वर्ष के बीच है। एक अनुमान के अनुसार 2023 तक भारत में जनसंख्या की औसत आयु 29 वर्ष जबकि जापान में 47 वर्ष और संयुक्त राज्य अमेरिका में 40 वर्ष होने की थी।[11]

आजादी के लगभग 80 वर्षों बाद भी हम अपने देश में बेरोजगारी, गरीबी, भ्रष्टाचार, अशिक्षा और हिंसा से लड़ने में सफल रहे हैं। विभिन्न विकास सूचकांक में भारत की रैंकिंग हाल के वर्षों में मुश्किल से बढी है। जैसे – भारत मानव पूंजी सूचकांक में 116वें, विश्व प्रसन्नता सूचकांक में 126वें, मानव विकास सूचकांक में 108वें स्थान पर है। यदि भारत अपनी स्थिति में सुधार करना चाहता है तो युवाओं की भागीदारी निश्चित करते हुए उनके नेतृत्व विकास का पूरा अवसर देना होगा।[12]

युवाओं में बदलाव लाने की असीम शक्ति है। उनमें न्याय की मांग करने की शक्ति है। उदाहरण के लिए दिल्ली में सी.ए.ए. विधायक के खिलाफ युवाओं का व्यापक विरोध प्रदर्शन या निर्भया मामले में न्याय के लिए दिल्ली में युवाओं का व्यापक विरोध प्रदर्शन, युवाओं की ताकत का एहसास कराता है। भ्रष्टाचार और महिलाओं पर अत्याचार के खिलाफ प्रदर्शन में हम देखते हैं कि हर जाति, वर्ग, धर्म के युवा एकजुट होकर प्रदर्शन करते हैं। आज दुनिया में नस्लवाद, इस्लामोफोबिया जैसी समस्याएं बनी हुई हैं। राजनेता इसका फायदा उठाते हैं और

युवाओं के भीतर द्वेष व भ्रम पैदा कर झगड़ा पैदा किए जाते हैं। युवाओं को विवेकशील बने रहना चाहिए और देश हित में कदम उठाना चाहिए। कोई भी धर्म या व्यक्ति राष्ट्र से बड़ा नहीं हो सकता। उन्हें पहचानना होगा कि उनकी एकजूटता ही देश की असली ताकत है। युवा को यदि सही दिशा दी जाए तो वह समाज पर सकारात्मक प्रभाव डाल सकते हैं, और नव अन्वेषी एवं प्रभावशाली विचारों को प्रस्तुत करके समस्याओं का समाधान भी कर सकते हैं।[13]

राष्ट्रीय युवा नीति 2024[14] –

सरकार ने राष्ट्रीय युवा नीति 2024 का मसौदा जारी किया है, जो पांच मुख्य क्षेत्रों पर ध्यान केंद्रित करती है – शिक्षा, रोजगार, युवा, नेतृत्व, स्वास्थ्य, सामाजिक न्याय।

इसके मुख्य बिंदुओं में शामिल है :–

- वर्ष 2030 तक युवा विकास लक्षयों को प्राप्त करने के लिए एक स्पष्ट योजना।
- कैरियर और जीवन कौशल में सुधार के लिए राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के साथ संरेखण।
- नेतृत्व एवं स्वयंसेवा के अवसरों को मजबूत करना और युवाओं को सशक्त बनाने के लिए प्रौद्योगिकी का उपयोग करना।
- स्वास्थ्य सेवा, विशेष रूप से मानसिक स्वास्थ्य एवं प्रजनन स्वास्थ्य को बढ़ावा देना और खेल तथा फिटनेस को बढ़ावा देना।
- हाशिए पर स्थित युवाओं के लिए सुरक्षा, न्याय व सहायता सुनिश्चित करना।

युवा शक्ति के विकास के लिए सरकार के प्रयास[15] :–

कौशल विकास पर बल – केंद्रीय बजट 2024–25 में 5 साल की अवधि में 4.1 करोड़ युवाओं के लिए रोजगार एवं कौशल विकास के लिए प्रधानमंत्री की पांच योजनाओं के पैकेज की घोषणा की गई है :–

1. **कर्मचारी भविष्य निधि संगठन** (EPFO) में पंजीकृत पहली बार नौकरी करने वाले कर्मचारियों को तीन किस्तों में रू. 15000 तक का 1 महीने का वेतन दिया जाएगा।
2. **विनिर्माण क्षेत्र में रोजगार सृजन** – रोजगार के पहले 4 वर्षों में कर्मचारी और नियोक्ता दोनों को उनके ई.पी.एफ.ओ. अंशदान के संबंध में सीधे निर्दिष्ट पैमाने पर प्रोत्साहन प्रदान किया जाएगा।
3. **नियोक्ताओं को सहायता** – सरकार प्रत्येक अतिरिक्त कर्मचारियों के लिए नियुक्ताओं के ई.पी.एफ.ओ. अंशदान के लिए 2 वर्ष तक रू. 3000 प्रति माह तक की प्रतिपूर्ति करेगी।
4. **कौशल विकास के लिए केंद्रीय प्रायोजित योजना** – 5 वर्ष की अवधि में 20 लाख युवाओं को कौशल विकास का प्रशिक्षण तथा 1000 औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थानों को हब एवं स्पोक मॉडल में अपग्रेड किया जाएगा।
5. 5 वर्षों में एक करोड़ युवाओं को 500 शीर्ष कंपनियों में इंटर्नशिप की नई योजना।

विकसित भारत युवा नेता संवाद –

इसके अंतर्गत भारत के युवाओं को राष्ट्र की विकास यात्रा में शामिल करने के उद्देश्य से शुरू किया गया है। इसका लक्ष्य युवा मस्तिष्क की सामूहिक ऊर्जा, रचनात्मक एवं नेतृत्व क्षमता का उपयोग करके विकसित भारत के निर्माण में योगदान देना है। यह युवा नेताओं को चर्चा में शामिल होने, विचारों का आदान–प्रदान करने

और देश की चुनौतियों के समाधान पर सहयोग करने के लिए एक मंच प्रदान करता है।[16]

राष्ट्रीय युवा महोत्सव का आयोजन – राष्ट्रीय युवा महोत्सव भारत के युवाओं में राष्ट्रीय एकीकरण की भावना के साथ ही युवा सशक्तिकरण और रचनात्मकता के आदर्शों को बढ़ावा देता है।[17]

मेरा युवा भारत[18] – मेरा युवा भारत युवा कार्य एवं खेल मंत्रालय के तहत स्वायत्त निकाय है जो राष्ट्रीय युवा महोत्सव की दिशा को आकार देने और मार्गदर्शन करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है :–

1. यह युवाओं को जुड़ाव, ज्ञान, साझा कारण और राष्ट्र निर्माण गतिविधियों में भागीदारी को बढ़ावा देकर सशक्त बनाता है।
2. इसके माध्यम से युवा लोग संसाधनों, सलाह एवं अवसरों तक पहुंच प्राप्त कर सकते हैं, जो देश के विकास में सार्थक योगदान देने की उनकी क्षमता में वृद्धि करेगा।
3. राष्ट्रीय युवा नेता कार्यक्रम – यह युवाओं में नेतृत्व एवं नवाचार को बढ़ावा देने पर ध्यान केंद्रित करता है ताकि वह सामाजिक व आर्थिक विकास में प्रभावी रूप से योगदान दे सकें।
4. इस कार्यक्रम का उद्देश्य एक संस्थागत मंच बनाना है जहां युवा सामुदायिक विकास एवं सामाजिक कल्याण गतिविधियों पर अपने अनुभव और विचार साझा कर सकें।

राष्ट्रीय युवा पुरस्कार -

राष्ट्र निर्माण/सामुदायिक सेवा के क्षेत्र में युवाओं और शैक्षिक युवा संगठनों को उनके द्वारा किए गए उत्कृष्ट कार्यो के लिए हर साल राष्ट्रीय युवा पुरस्कार प्रदान किए जाते हैं।[19]

युवा एवं किशोर विकास के लिए राष्ट्रीय कार्यक्रम[20]– इस योजना के तहत युवा एवं किशोर विकास के लिए गतिविधियों को शुरू करने के लिए सरकारी/गैर सरकारी संगठनों को वित्तीय सहायता प्रदान की जाती है। इसके तहत पांच प्रमुख घटकों के लिए सहायता दी जाती है :

1. युवा नेतृत्व एवं व्यक्तित्व विकास प्रशिक्षण।
2. राष्ट्रीय एकता को बढ़ावा देने वाली गतिविधियां जैसे – राष्ट्रीय एकता शिविर, अंतर राज्यीय युवा विनिमय कार्यक्रम आदि।
3. साहसिक गतिविधियों को बढ़ावा देना जैसे – तेनजिंग नोर्गे राष्ट्रीय साहसिक पुरस्कार।
4. किशोरों का विकास एवं सशक्तिकरण (जीवन कौशल, शिक्षा, परामर्श, कैरियर, मार्गदर्शन आदि)
5. तकनीकी एवं संसाधन विकास, जैसे – युवा मुद्दों पर अनुसंधान एवं अध्ययन, दस्तावेजीकरण, सेमिनार, कार्यशालाएं आदि।

राष्ट्रीय सेवा योजना – इसका प्रारंभ 1969 में हुआ।

आदर्श वाक्य : स्वयं से पहले ।

उद्देश्य : सामाजिक जिम्मेदारी, नेतृत्व, नागरिक जुड़ाव एवं राष्ट्रीयकरण को बढ़ावा देना।

राष्ट्रीय छात्रावास – युवा छात्रावास किफायती आवास उपलब्ध कराकर यात्रा एवं अन्वेषण के साथ ही सामाजिक और सांस्कृतिक आधार प्रदान को बढ़ावा देते हैं। केंद्र सरकार द्वारा नियुक्त प्रबंधकों और वार्डन द्वारा इन छात्रावासों की देखभाल की जाती है।

निष्कर्ष :

युवाओं की असीम क्षमता और उत्साह राष्ट्र को बेहतर भविष्य की ओर ले जा सकती है। इस तरह से राष्ट्र के विकास में युवाओं की भागीदारी अत्यंत महत्वपूर्ण है। वह अपनी उर्जा नवाचार और नए विचारों से राष्ट्र को प्रगति की ओर ले जा सकते हैं। युवाओं का योगदान स्वास्थ्य, शिक्षा, प्रौद्योगिकी और शासन जैसे विभिन्न क्षेत्रों में हो सकता है। जहां वे अपने कौशल का उपयोग करके राष्ट्र निर्माण में मदद कर सकते हैं।

संदर्भ :

1. प्रभात खबर 17 अक्टूबर 2025 पृष्ठ संख्या 16.
2. https://rm.coe.int
3. https://www.drishtias.com
4. Ibid.
5. Ibid.
6. Ibid.
7. Ibid.
8. Nehru Yuva Kendra Sangh : Jagran
9. Google.com
10. https://www.vedantu.com
11. Ibid.
12. Ibid.
13. Ibid.
14. Sanskritiias.com
15. Ibid.
16. Ibid.
17. Ibid.
18. Ibid.
19. Ibid.
20. Ibid.

punita.mphil@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2026 Page No. : 151-160

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES PRINT RESEARCH JOURNAL

कुरूक्षेत्र के व्यक्तिवाची सांस्कृतिक शब्दों का अर्थतात्विक विवेचन

डॉ० अजय सिंह चौहान, शोध निर्देशक,
असिस्टेन्ट प्रोफेसर, हिंदी विभाग, फीरोज़ गाँधी कॉलेज, रायबरेली
अनूप कुमार, शोध छात्र,
हिंदी तथा आधुनिक भारतीय भाषा विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ।

कुरूक्षेत्र का कथानक :

राष्ट्रीय जनजागरण के ओजस्वी कवि रामधारी सिंह 'दिनकर' कृत विश्वप्रसिद्ध दार्शनिक प्रधान प्रबंधकाव्य 'कुरुक्षेत्र' का प्रकाशन सन् 1946 में हुआ था। इसका मूलस्रोत महाभारत का शांतिपर्व है। इसका कथानक महाभारत युद्ध की समाप्ति के ठीक बाद शुरू होता है। भीषण नरसंहार और सगे–संबंधियों की मृत्यु को देखकर युधिष्ठिर का मन घोर ग्लानि, पश्चाताप तथा वैराग्य से भर जाता है। वे राजपाठ छोड़कर वन जाने का निश्चय करके पितामह भीष्म के पास पहुँचते हैं।

पूरी रचना युधिष्ठिर (जो अहिंसा और शांति के प्रतीक हैं) और भीष्म (जो न्याय के लिए शस्त्र उठाने के समर्थक हैं) के मध्य दार्शनिक संवाद है। यह द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद लिखा गया था। दिनकर जी ने इसके माध्यम से यह सिद्ध किया है कि "जब तक संसार में विषमता और अन्याय रहेगा, तब तक शांति की बात ढोंग है।" और न्याय की रक्षा के लिए लड़ा जाने वाला युद्ध वास्तव में धर्म है।

सांस्कृतिक शब्दों एवं अर्थतात्विक से अभिप्राय एवं अर्थ –

सांस्कृतिक शब्दों का सरल और स्पष्ट अर्थ है कि वे शब्द जो मानव को संस्कृत बनाते हैं, जो उसके आचरण को प्रभावित करते हैं, जो उसे पशु से इतर बनाते हैं, जो उसे परिष्कृत करते हैं, जो उसकी बौद्धिक श्रेष्ठता को प्रकट करते हैं, जो उसे नैतिक बनाते हैं, जो उसे सामूहिक जीवन के उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायक होते हैं; जिससे मानव एक सभ्य सामाजिक प्राणी बनता है। इन शब्दों से मानव के ज्ञान, विश्वास, कला, आचार, नियम, कानून आदि का सम्यक् भान होता है। ये सभी शब्द जो मनुष्य की भौतिक और अभौतिक, प्रकृति–प्रदत्त एवं मानव–निर्मित वस्तुओं से जुड़े हैं; जैसे– साइकिल, रेडियो, हवाई जहाज, वस्त्र, धर्म, विज्ञान, प्रथाएँ, असंख्य वस्तुएँ आदि अर्थात संपूर्ण सामाजिक जीवन से संबद्ध शब्द सांस्कृतिक शब्द हैं।

किसी भी रचना में प्रयुक्त पर्याय शब्दों का विशेष महत्व होता है। अर्थतात्विक अध्ययन का अर्थ यही है कि उनमें प्रयुक्त पर्याय शब्दों का प्रयोग किस प्रकार किया गया है और शब्दों के पर्याय शब्दों (किस शब्द का प्रयोग क्यों किया गया है?)। पर्याय या पर्यायवाची शब्दों की सामान्य परिभाषा है– ऐसे शब्द जिनके मूल अर्थ समान हों, किंतु पर्यायवाची शब्दों में भी किंचित् अर्थभेद होता है। एक शब्द का जो सूक्ष्म और वास्तविक अर्थ

होता है, वह उसके पर्यायवाची में नहीं हो सकता। यथा 'रात' शब्द के 'निशा' शब्द जिस अर्थ का द्योतन कराता है, 'रजनी' शब्द उसी का बोधक नहीं है। रचनाकार ने एक शब्द के पर्यायवाची शब्दों का प्रयोग कैसे किया है, किस प्रकार किया है, क्यों किया है? आदि का विवेचन अर्थतात्विक अध्ययन का संकेत करता है। अर्थतात्विक अध्ययन का आशय यह भी है कि रचनाकार ने एक शब्द का प्रयोग किन–किन संदर्भों में, किन–किन अर्थों में किया है। क्या उस शब्द का कोई केंद्रीय अर्थ है या नहीं, यदि है, तो उस शब्द के अर्थ को विशेष रूप से स्पष्ट किया जाए और अन्य अर्थों को भी उजागर किया जाए। उन शब्दों के मूल अर्थों में क्या समानता है, क्या भिन्नता है; यह समझने का प्रयास किया गया है।

क्रसं.	शब्द	पर्याय	अर्थगत विवक्षा	विशेष व्याख्या
1.	अर्जुन	1. अर्जुन –पृष्ठ संख्या 16	पवित्रता एवं विशुद्धता सूचक	'अपने कार्यों में पवित्र और विशुद्ध होने के कारण वह अर्जुन कहलाया' (1) पांच पांडवों में से एक जो सबसे कुशल धनुर्धारी था। पांडु की ज्येष्ठ पत्नी, वासुदेव कृष्ण की बुआ कुंती और इंद्र के संसर्ग से अर्जुन का जन्म हुआ। महाभारत में पांडवों को विजय का बहुत कुछ श्रेय अर्जुन को है। आधुनिक युग में भारत सरकार द्वारा पराक्रमी अर्जुन के नाम पर सर्वश्रेष्ठ खिलाड़ियों को प्रतिवर्ष 'अर्जुन पुरस्कार' से सम्मानित किया जाता है। रचनाकार ने अर्जुन शब्द का प्रयोग कहीं इसी विवक्षा में किया, और कहीं सामान्य अर्थ मे।
	2.	2. पार्थ – (16)	अपत्यवाचक	कुंती का एक नाम पृथा था और अर्जुन पृथा के पुत्र, इसलिए अर्जुन 'पार्थ' कहलाए। कवि ने इस शब्द का सामान्य प्रयोग किया है।
		3. कौंतेय – 70 4. पांडुनंदन–49	अपत्य बोधक	कुंती का पुत्र होने के कारण ये कौंतेय कहलाए, कवि ने इस पर्याय का प्रयोग अर्जुन सहित सभी पांडवों के लिए किया है। रूढ़ प्रयोग।
2.	अभि–मन्यु	अभिमन्यु – 17	सामान्य नाम बोधक	अर्जुन और सुभद्रा के पुत्र। इनका विवाह राजा विराट की पुत्री उत्तरा से हुआ था। अभिमन्यु ने महाभारत युद्ध में बड़ी वीरता का परिचय दिया था, कवि ने इस शब्द का सामान्य प्रयोग किया है।
3.	अशोक	अशोक – 18	शोक रहितता बोधक	प्राचीन भारत के मौर्य सम्राट बिंदुसार का पुत्र (जिसका जन्म लगभग 297 ई.पू. माना जाता है)। अशोक की प्रसिद्धि इतिहास में उसके साम्राज्य विस्तार के कारण नहीं बल्कि धार्मिक भावना और मानवतावाद के रूप में अधिक है। यह सर्वमान्य है कि अशोक अपने काल का अकेला सम्राट था, जिसकी प्रशस्ति

				उसके गुणों के कारण होती आयी है, न कि डर से। इस शब्द का प्रयोग कवि ने बहुत सुंदर ढंग से किया है।
4.	इंद्र–प्रस्थ	इंद्रप्रस्थ – (44)	पांडवनगरी वाचक	पांडवों की राजधानी जो वर्तमान नई दिल्ली के दक्षिण में स्थित थी, इंद्रप्रस्थ गाँव आज भी उसका स्मरण दिलाता है। इसे पांडवों ने खांडव वन को जलाकर बसाया था। 12वीं शताब्दी तक इसकी गणना उत्तर भारत के प्रसिद्ध तीर्थों में ही होती थी, बाद में तुर्कों के आक्रमण से इसका यह रूप जाता रहा। कवि ने इस शब्द का प्रयोग बड़ा सार्थक ढंग से किया है।
5.	ईश्वर	1. ईश्वर – 97	ऐश्वर्यशाली सूचक	भारतीय दर्शन मे ईश्वर शब्द का प्रयोग सृष्टि के रचयिता, पालनकर्ता और संहार कर्ता के लिए होता है। वह सर्वोच्य है, शक्तिमान है और सब कुछ करने में समर्थ है। वह जीवों को उनके कर्मों का फल देता और दुखों से मुक्ति दिलाता है। कवि ने इस शब्द का बहुत सुंदर प्रयोग किया है।
		2. ईश – 36	,,	कवि ने इसी रूप में इस शब्द का भी प्रयोग किया है।
		3. प्रभु – 96	प्रभुता सूचक	इस शब्द का भी रचनाकार ने बडा सुप्ठु प्रयोग किया।
		4. ईसू – 81	पैगंबर सूचक	यहूद देश के एक प्रसिद्ध पैगंबर, जो एक धर्म के प्रवर्तक थे; और जिन्हें सूली दी गई थी। कहते हैं कि इन्होंने अनेक अलौकिक शक्तियाँ पायी थीं, इसीलिए इन्हें 'ईसामसीह' भी कहते हैं। रचनाकार ने इस शब्द का प्रयोग बड़े ही सार्थक रूप में किया।
6.	उत्तरा	उत्तरा – 16	सामान्य नाम बोधक	राजा विराट की पुत्री जिसका विवाह अर्जुन के पुत्र अभिमन्यु के साथ हुआ था। अज्ञातवास के समय अर्जुन ने बृहन्नला के वेश में उत्तरा को संगीत और नृत्य की शिक्षा दी थी। अभिमन्यु और उत्तरा के संसर्ग से राजा परीक्षित का जन्म हुआ था।
7.	कृष्ण	1. कृष्णा – 17	आकर्षक बोधक	देवकी के गर्भ से उत्पन्न वासुदेव के आठ पुत्रों में से सबसे कनिष्ठ कृष्ण कहीं। विष्णु के 23वें तथा कहीं 20वें अवतार बताए गए हैं। बाल्यकाल से ही कृष्ण के पराक्रम के प्रमाण मिलने लगे थे। कुरुक्षेत्र में कृष्ण की अहम भूमिका का वर्णन है। रचनाकार ने इस शब्द का रूढ़ प्रयोग किया है।
		2. केशव – 44	लंबे और काले सुंदर बालों के सूचक, कृष्ण नामबोधक	विष्णु के पूर्वावतार कृष्ण का एक नाम केशव भी है।

		3. घनश्याम – 25	श्यामवर्ण बोधक	
		4. नंदन – 49	अपत्यवाचक	नंद के पुत्र होने के कारण इन्हें नंदन कहा जाता है।
8.	कुरुक्षेत्र	1. कुरुक्षेत्र – 39	राजा कुरु के प्रदेश का वाचक	दिल्ली और अंबाला के बीच का प्रदेश, जिसका प्राचीन नाम कुरुक्षेत्र था, जहाँ महाभारत का युद्ध हुआ था।
		2. कुरूक्षेत्र–''	''	रचनाकार ने इस शब्द का बड़ा सुंदर प्रयोग किया है।
9.	कुरुकुल	1. कुरुकुल – 43	कुरुवंश सूचक	एक प्राचीन राजा का नाम जिसके वंश में पांडव और धृतराष्ट्र हुए। अत: इनके वंश का नाम कुरुवंश या गुरुकुल कहा जाता है। कवि ने इस शब्द का सार्थक प्रयोग किया।
		2. कुरुवंश – 42	,,	
10.	गजेंद्र	1. गजेंद्र – 34	श्रेष्ठ गजराज का बोधक	इंद्रद्युम्न नामक राजा जो अगस्त्य मुनि के शाप से हाथी हो गया और ग्राहग्रस्त होने पर भगवान को याद कर शाप गुक्त हुआ।
		2. गजराज – 41	एक विशेष गज बोधक	कवि ने इस शब्द का सामान्य अर्थ में प्रयोग किया है।
11.	गीता	गीता – 17	धार्मिक ग्रंथ सूचक	भगवद्गीता स्वतंत्र ग्रंथ नहीं वरन् महाभारत के भीष्म पर्व का एक अंश है; परंतु अब यह एक बहुमान्य स्वतंत्र ग्रंथ हो गया है। 700 श्लोक तथा 18 अध्यायों की गीता की लोकप्रियता विश्वव्यापी है। विश्व की लगभग समस्त भाषाओं में इसका अनुवाद हो चुका है।
12.	चाँद	1. चाँद – 70	सौंदर्यबोधक	अत्रि और अनसूया का पुत्र जो सोम नाम से भी प्रसिद्ध है। दक्ष प्रजापति की सत्ताइस पुत्रियों का इसके साथ विवाह हुआ था। इन पत्नियों के नाम से ही सत्ताइस नक्षत्रों का नाम पड़ा। कवि ने इस शब्द का बड़ा सुदर प्रयोग किया है।
		2. विधु – 85	सुधाधारक बोधक	
		3. सोम – 90	रस बोधक	अमृत रस युक्त चंद्रमा। रूढ़ अर्थ में प्रयोग।
13.	जरासंध	जरासंध – 39	अपत्यवाचक	मगध देश का एक नरेश जो बृहद्रथ का पुत्र था। काशिराज की जुड़वां कन्याएँ इससे ब्याही थीं। दोनों ने आधे–आधे टुकड़े को जन्म दिया तो इसे चौराहे पर फेंक दिया गया। जरा अथवा ग्रहदेवी नाम की राक्षसी ने जोड़ दिया तो शिशु जीवित हो उठा,

				इसी से इसका नाम जरासंध पड़ा, इसे जरासुत भी कहा जाता है। रचनाकार ने इस शब्द का सामान्य प्रयोग किया है।
14.	द्वापर	द्वापर – 82	काल सूचक	यह चार युगों में तीसरा युग है। इसका प्रारंभ भाद्रपद कृष्ण त्रयोदशी से होता है। पुराणों में इसकी अवधि आठ लाख चौंसठ हजार वर्ष मानी गई है। यह युद्ध प्रधान युग था। भगवान श्रीकृष्ण ने इसी काल में अवतार लिया था। कवि ने बहुत युक्तिसंगत प्रयोग किया है।
15.	द्रुपद	द्रुपद – 43	विशेष राजा का नामबोधक	ये उत्तर तथा दक्षिण पांचाल देश के एक राजा थे, जो द्रौपदी एवं धृष्टद्युम्न के पिता थे। ये द्रोणाचार्य के सहपाठी भी थे। महाभारत युद्ध में इसने पांडवों का साथ दिया तथा द्रोण के हाथों मारा गया; शिखंडी इसी की संतान था जो भीष्म की मृत्यु का कारण बना। (सार्थक प्रयोग)
16.	दुर्योधन	1. दुर्योधन – 49 2.सुयोधन–17	दुर्धर्ष योद्धा सूचक नाम अच्छे बलशाली योद्धा का सूचक	दुर्योधन शब्द का अर्थ होता है जिससे युद्ध करना और विजय पाना बहुत कठिन हो। दुर्योधन भी पराक्रमी योद्धा था। कुरुवंश के राजा धृतराष्ट्र के सो पुत्रों में सबसे बड़ा। अपने वंश के कारण ये लोग कौरव कहलाए। जुए में जीती द्रौपदी को जब दुःशासन भरी सभा में खींच लाया तो दुर्योधन ने उसे अपनी जंघा पर बैठाने का प्रयास किया। उसी समय भीम ने दुर्योधन की जंघा तोड़ने की प्रतिज्ञा की थी। (सुष्ठु प्रयोग)
17.	द्रोण	द्रोण – 43	अपत्यवाचक	कौरवों तथा पांडवों के गुरु द्रोणाचार्य भारद्वाज के पुत्र थे। इनका यह नाम द्रोण नामक कलश पात्र में पैदा होने के कारण पड़ा। वे शस्त्र विद्या के अपूर्व ज्ञाता थे। उन्होंने महाभारत युद्ध में कौरवों की ओर से अद्भुत वीरता दिखाई थी। पितामह के बाद कौरव सेना के सेनापति भी वही बने। रूढ़ अर्थ में प्रयोग हुआ है।
18.	द्रौपदी	1. द्रौपदी – 11 2. द्रुपदसुता–54	अपत्यवाचक ,,	पांचाल नरेश द्रुपद की पुत्री द्रौपदी, उसका एक अन्य नाम कृष्णा भी था। द्रुपद ने उसके विवाह के लिए स्वयंवर रचा। इसमें चक्र में घूमती मछली का भेदन करने में सफल अर्जुन ने उसका वरण किया तथा माँ के अनदेखे ही यह कहने पर कि 'पाँचों भाई

		3.राजबधूटी –51	वैभवशाली बोधक	आपस में बाँट लो', द्रौपदी का विवाह पाँचों पांडवों के साथ हुआ। विद्वानों का मत है कि इस विवाह का कारण उस समय प्रचलित बहुपतित्व था। सामान्य प्रयोग।
19.	ध्रुव	ध्रुव – 35	शाश्वतवाचक	ध्रुव की कथा विष्णुपुराण में मिलती है। स्वयंभू मनु के राजा उत्तानपाद की दो रानियाँ थीं – सुरुचि एवं सुनीति। बड़ी रानी सुरुचि के पुत्र का नाम उत्तम तथा छोटी रानी सुनीति के पुत्र का नाम ध्रुव। ध्रुव अटल स्थिरता का प्रतीक है। इसीलिए हिंदू विवाह के अवसर पर दांपत्य जीवन की स्थिरता के लिए वधू को ध्रुव का दर्शन कराया जाता है। ध्रुव शब्द का रचनाकार ने सार्थक प्रयोग किया है।
20.	पांडव	पांडव – 11	अपत्यवाचक	हस्तिनापुर के राजा पांडु के पुत्रों को पांडव कहा जाता है।
21.	भीष्म	1. भीष्म – 15	दृढता सूचक	कुरुवंश के राजा शांतनु और गंगा के 8वें पुत्र। पहले इनका नाम देवव्रत था। इन्होंने सत्यवती के साथ अपने पिता के विवाह की बाधा दूर करने के लिए आजीवन ब्रह्मचारी रहने की भीषण प्रतिज्ञा की थी। इस कारण वह भीष्म कहलाए। इन्हें इच्छा मृत्यु का वरदान भी प्राप्त था। युक्तिसंगत प्रयोग।
		2. पितामह – 14	गुरुता सूचक	कौरव–पांडवों के पितामह के रूप में महाभारत में इनकी छवि का वर्णन है।
		3. तात – 76	,,	
		4. संन्यासी – 69	ब्रह्मचर्य सूचक	आजीवन विवाह न करने के कारण ये संन्यासी भी कहलाए। सामान्य अर्थ में प्रयोग।
22.	बुद्ध	बुद्ध – 81	प्रज्ञा बोधक	बौद्ध धर्म के प्रवर्तक तापस्वी महात्मा बुद्ध। इनका जन्म हिमालय तराई के शाक्य जनपद (लुंबिनी बन) में 563 ई.पू. हुआ था। इनके माता–पिता का नाम माया तथा शुद्घोधन था। इनका जन्म का नाम सिद्धार्थ था। बाल्यावस्था से ही चिंतनशील, संसार के दुख से व्याकुल हो उठे थे। इन्हें बोधवृक्ष (पीपल) के नीचे सम्यक् ज्ञान प्राप्त हुआ। इसी समय से सिद्धार्थ (बुद्ध – जिसकी बुद्धि जागरित हो गई हो) कहलाए। रचनाकार ने इस शब्द का बहुत सुंदर प्रयोग किया है।
23.	ब्रह्मा	ब्रह्मा – 97	सृष्टिकर्ता सूचक	हिंदू देवताओं की त्रिमूर्ति के प्रथम देवता ब्रह्मा, पुराण काल के देवता हैं। पुराणों में ब्रह्मा के जन्म की अनेक कथाएँ मिलती हैं। जल की सृष्टि करके भगवान ने उसमें एक बीज फेंका, उससे

				उत्पन्न ज्योतिर्मय अंड से ब्रह्मा पैदा हुए। हंस ब्रह्मा का वाहन है। ब्रह्मा के दस मानस पुत्र प्रजापति कहलाए। आगे की सृष्टि इन्हीं से चली। सार्थक प्रयोग।
24.	भारत –वर्ष	1. भारतवर्ष – 42 ,, 2. भारत 45 3. भारत भूमि 64 ,,	अपत्यवाचक	1. प्राचीन साहित्य के अनुसार जंबू द्वीप के अंतर्गत सर्वश्रेष्ठ भूमि जिसका नाम ऋषभ के पुत्र भरत के नाम पर पड़ा। इसका क्षेत्रफल 9000 योजन बताया गया है। 2. पुरुवंश के राजा दुष्यंत के शकुंतला के गर्भ से उत्पन्न पुत्र भरत की गणना महाभारत में वर्णित सोलह सर्वश्रेष्ठ राजाओं में होती है। मान्यता है कि इसी के नाम पर इस देश का नाम भारतवर्ष पड़ा। सामान्य प्रयोग।
25.	भीम	भीम – 24	पराक्रमी योद्धा सूचक	कुंती के गर्भ से उत्पन्न वायु के पुत्र भीम पाँच पांडवों में दूसरे थे। ये बड़े पराक्रमी और गदा चलाने में निपुण थे। अज्ञातवास में भीम ने (बल्लभ) नाम से विराट के यहाँ (रसोईए का कार्य किया)। उसी समय द्रौपदी से छेड़छाड़ करने के कारण विराट के साले कीचक का वध कर डाला था। प्राचीन साहित्य में भीम के नाम के 18 व्यक्तियों का उल्लेख मिलता है। प्रधानता भीम को ही है। युक्तिसंगत प्रयोग।
26.	मनु	मनु – 80	मानव सृष्टि के प्रवर्तक सूचक	मनु का उल्लेख ऋग्वेद काल से ही मानव सृष्टि के आदि प्रवर्तक और सगस्त गानव जाति के आदि पिता के रूप गें किया जाता है। इन्हें आदिपुरुष भी कहा जाता है। पुराणों के अनुसार मनु 14 हुए हैं। सार्थक प्रयोग।
27.	महा भारता	महाभारत – 26	महायुद्ध सूचक	यह भारतवर्ष के इतिहास का सबसे बड़ा युद्ध था। इसमें भीषण नरसंहार हुआ था। इस कारण इसे महाभारता कहा जाता है। सार्थक प्रयोग।
28.	युधिष्ठिर	1. युधिष्ठिर	युद्ध में स्थिर रहने का बोधक	'युधि + स्थिर' शब्द से निर्मित है। युधि के सप्तमी का रूप है अर्थात युद्ध गें। इस प्रकार से युधिष्ठिर का अर्थ हुआ– युद्ध गें स्थिर रहने वाला। महाभारत के नायकों में समुज्ज्वल चरित्र वाले ज्येष्ठ पांडव। वे सत्यवादिता तथा धार्मिक आचरण के कारण विख्यात हैं, उनकी गणना ज्ञानी व नीतिज्ञ के रूप में की जाती है। उन्हें 'विदेह' (जनक) जैसे तत्वदर्शियों की श्रेणी का माना जाता है।
		2. धर्मराज –	धर्मनिष्ठा बोधक	कुंती के गर्भ से उत्पन्न पांडवों में ज्येष्ठ जो धर्म के पुत्र कहे

		26		जाते हैं। ये बहुत सत्यवादी व कर्तव्य परायण थे, इसलिए धर्मराज कहलाए। सुंदर प्रयोग।
29.	रघुपति	1. रघुपति – 32 2. राम 32	वंशवाचक हर्षदायक बोधक	रघुकुल के होने के कारण ये रघुपति कहलाए। अयोध्या नरेश दशरथ के ज्येष्ठ पुत्र राम का जीवनवृत्त सर्वज्ञात है। वे दशरथ द्वारा आयोजित पुत्रेष्टि यज्ञ के बाद कौशल्या के गर्भ से उत्पन्न हुए थे। राम ने न्यायपूर्वक बहुत वर्षों तक राज्य किया था। राम को भगवान विष्णु का 9वॉ अवतार माना जाता है। सामान्य प्रयोग।
30.	विदुर	विदुर – 107	बुद्धिमान सूचक	महाभारत के चर्चित पात्र जो अपनी नीतिज्ञता के लिए, न्यायप्रियता के लिए प्रसिद्ध हैं। वे पहले राजा धृतराष्ट्र के मंत्री थे। उन्होंने कौरवों–पांडवों के बीच वैमनस्य मिटाने के लिए बहुत प्रयास किए। युद्ध के पश्चात् ये पांडवों के भी मंत्री रहे। इनकी 'विदुर नीति' प्रसिद्ध है। सामान्य प्रयोग।
31	व्यास	1. व्यास – 15. 2. व्यास – 47 3. सिद्धदृप्टा– 48 4. मुनि – 48	एक अंतः स्फूर्ति मुनिबोधक " " " " " "	ये पराशर के पुत्र थे, सत्यवती इनकी माता थीं। सत्यवती का शांतनु से विवाह होने के पूर्व इनका जन्म हुआ था। ऐसा विश्वास किया जाता है कि इन्होंने महाभारत की रचना कर इसे गणपति द्वारा लेखबद्ध कराया। इन्हें 18 पुराणों, ब्रह्मसूत्रों का भी रचयिता कहा जाता है। ये 07 चिरंजीवियों में से एक हैं।
32.	शकुनि	शकुनि – 43	दुर्वृत्तिबोधक पात्र	प्राचीन साहित्य में इस नाम से अनेक व्यक्तियों का परिचय मिलता है। सर्वाधिक चर्चित नाम गांधारी के भाई और कौरवों के मामा शकुनि का नाम है। ये दुप्ट स्वभाव का था; कौरवों तथा पांडवों के मध्य शत्रुता बढ़ाने में इसका बहुत बड़ा हाथ था। कवि ने इस शब्द का सुंदर प्रयोग किया है।
33.	शारदे	शारदे – 65	सामान्य अर्थ बोधक	कश्मीर को अधिप्ठात्री देवी। इन्हीं के नाम पर वह क्षेत्र शारदा मण्डल के नाम से जाना जाता है। वहाँ की प्राचीन लिपि का नाम भी शारदा था। मान्यता है कि शारदा लिपि का प्रचलन 10वीं शताब्दी के आसपास हुआ। सार्थक प्रयोग।
34.	शिव	शिव – 33	मांगलिक बोधक	एक ही परम तत्व की तीन मूर्तियों – (ब्रह्मा, विष्णु और शिव) में

		शिव – 38	"	अंतिम मूर्ति। ब्रह्मा का कार्य सृष्टि निर्माण, विष्णु का स्थिति पालन और शिव का कार्य संहार करना है। इन्हें नाट्य योग और संगीत शैली का आरंभकर्ता भी माना जाता है। रचनाकार ने इस शब्द का बहुत सार्थक प्रयोग किया है।
35.	सूर्य	सूर्य – 90	शौर्य, प्रचंडता या तेज बोधक	वैदिक और पौराणिक साहित्य में वर्णित देवमण्डल का एक प्रधान देवता – इसके अन्य नाम हैं – सविता, उषा, विवस्वत आदि। पुराणों में सूर्य को कश्यप ऋषि की पत्नी अदिति का पुत्र आदित्य बताया गया है। वेद के अनुसार यह देवताओं का मुख है। स्वास्थ्य से सूर्य का सीधा संबंध है। यह रोगों को दूर भगाता है। कवि ने इस शब्द का प्रयोग इसी विवक्षा के निर्वाहार्थ किया है।

'कुरुक्षेत्र' के अन्य व्यक्तिवाची संज्ञा शब्दों की सूची

शब्द	पृष्ठ संख्या
गाँधारी	81
द्रोणसुत	11
परीक्षित	85
मन्दराचल	111
राधेय	43
लाखभवन	49
लाक्षागृह	31
शिशुपाल	43

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. कुरुक्षेत्र : रामधारी सिंह 'दिनकर' (राजपाल एण्ड सन्स, कश्मीरी गेट, दिल्ली) तीसरा संस्करण (21वां) 1975 ई०
2. आदर्श हिन्दी शब्दकोश
   संपादक – प्रो० रामचंद्र पाठक
   भार्गव बुक डिपो, चौक वाराणसी – 2014
3. कुरुक्षेत्र : रामधारी सिंह 'दिनकर'
   राजपाल एण्ड सन्स, संस्करण–2008

4. वर्धा हिन्दी शब्दकोश
वाणी प्रकाशन ग्रुप, चौथा संस्करण 2019
5. हिन्दी साहित्यकोश, भाग–2
प्रधान संपादक – डॉ० धीरेंद्र वर्मा
ज्ञानमंडल लिमिटेड, तृतीय संस्करण 2023
6. मानक हिंदी कोश (5 खण्ड)
प्रधान संपादक – रामचंद्र वर्मा
सहायक – बदरीनाथ कपूर
हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, प्रथम संस्करण सं० 2019
7. बृहत् हिंदी कोश, कालिका प्रसाद
ज्ञानमंडल लिमिटेड, वाराणसी – 2023

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2026 Page No. : 161-172

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES PRINT RESEARCH JOURNAL

Geospatial Delineation of Low-Grade Ore Zones and Their Metallurgical Amenability to Beneficiation : Field and Laboratory Evidence from the Noamundi and Kiriburu Sectors, Jharkhand

Aayush Chawla
Independent Researcher, UGC-NET(Geography)

Abstract :

This paper reports field and laboratory results from a pilot geospatial-metallurgical study of low-grade iron ore in two sectors of the Singhbhum belt, Jharkhand: Noamundi (NOA) and Kiriburu (KIR). Twelve samples (three per delineated zone across four zones : NOA-Z01, NOA-Z02, KIR-Z01, KIR-Z02) were collected and located spatially by GPS, supported by twelve confirmatory boreholes and a GIS workflow combining Sentinel-2 imagery, SRTM-derived structural data, and ordinary-kriging interpolation of Fe assay values. Head assays across the twelve samples ranged from 49.84% to 58.24% Fe, with silica and alumina content decreasing systematically as Fe grade increased across zones (mean SiO2 8.76-14.32%; mean Al2O3 2.32-4.14%). Mineralogical characterisation identified hematite as the dominant phase in nine of twelve samples, with goethite dominant in two and a mixed hematite-goethite assemblage in one, gangue dominated throughout by quartz with kaolinite/ clay present in the more weathered Noamundi material. Twelve beneficiation trials were conducted across three routes -- magnetic separation, gravity separation, and selective flocculation. At comparable average feed grade (~54% Fe), selective flocculation achieved the highest mean concentrate grade (65.5% Fe) and mean recovery (76.3%), outperforming magnetic separation (62.3% Fe, 69.3% recovery) and gravity separation (61.8% Fe, 67.3% recovery). Integrating these results into the GIS framework produced a zone-level beneficiation-amenability classification: three of four zones (NOA-Z02, KIR-Z01, KIR-Z02) reached a High amenability rating (concentrate =64% Fe at recovery =70%) via selective flocculation, while NOA-Z01 reached only Moderate amenability. These results demonstrate, with field-based evidence, that grade and beneficiation amenability are not

interchangeable and that a spatially explicit, zone-differentiated beneficiation strategy can substantially improve recoverable value from an ostensibly uniform low-grade resource.

Keywords : Low-grade iron ore, GIS, kriging, beneficiation, Jharkhand, Noamundi, Kiriburu, selective flocculation, magnetic separation

1. Introduction :

Reserve statements built around a single Fe cut-off understate what a deposit actually offers, because they say nothing about where sub-cut-off material sits in space or whether it can be economically upgraded. This paper follows directly from a methodological framework proposed for the Jharkhand region, and reports the results of its first field application across two sectors of the Singhbhum iron ore belt: Noamundi and Kiriburu. Jharkhand's Singhbhum belt hosts extensive low-grade Banded Iron Formation (BIF), Banded Hematite Quartzite/Jasper (BHQ/BHJ), and lateritic-goethitic material alongside its higher-grade hematite ore (Limaye, Dutta, & Lodhari, 2012; Mihir & Veeramani, 2026). As high-grade ore is progressively depleted, the economic use of this low-grade fraction depends on two things that conventional grade-cut-off reporting does not supply: precise spatial delineation of where the low-grade material occurs, and metallurgical evidence on whether it responds to beneficiation.

This paper addresses both requirements directly with field data. Twelve samples were collected across four GIS-delineated zones spanning the two sectors, supported by borehole confirmation and a kriging-based grade surface; each sample was chemically assayed, mineralogically characterised, and (for one representative sample per zone) subjected to washability analysis, before undergoing a beneficiation trial using a route selected to match its mineralogy. The paper reports these results in full and integrates them into a zone-level beneficiation-amenability map -- the concrete, evidence-based output that the earlier methodological framework set out to produce.

2. Literature Review

2.1 GIS-Based Mineral Resource Mapping :

GIS-based integration of geological, geophysical, and remote-sensing layers is now standard practice in mineral exploration, allowing exploration targets to be ranked by the spatial convergence of favourable evidence. Ordinary kriging remains a preferred technique for interpolating discrete borehole assay values into continuous grade surfaces because it accounts for the spatial autocorrelation structure of sample data. Multi-criteria decision-making frameworks applied within GIS have been used elsewhere to combine heterogeneous evidential layers -- aeromagnetic, radiometric, lineament, and alteration data -- into validated prospectivity surfaces, with reported prediction accuracies in the range of 78-80 percent when checked against known mineral occurrences using Receiver Operating

Characteristic analysis (Gajere, Adekeye, Tende, & Aminu, 2024). India's mineral-mapping practice is moving in the same direction, with multi-layer prospectivity analysis increasingly positioned as central to national mineral-systems mapping.

2.2 Characterisation and Beneficiation of Jharkhand Low-Grade Iron Ore :

A substantial body of Jharkhand-specific research has characterised the mineralogy of low-grade ore from the Singhbhum belt and the neighbouring Jharkhand-Odisha region, distinguishing friable/porous, shaly/flaky, and lateritic canga-type low-grade ores (Limaye, Dutta, & Lodhari, 2012). Detailed characterisation of goethitic low-grade ore from the Gua mines in Jharkhand reported a bulk composition close to 56.5% Fe, 5.7% silica, and 5.2% alumina, and demonstrated that selective flocculation using amylopectin as flocculant with sodium silicate as dispersant could usefully upgrade iron-bearing fines from such material (Nanda & Mandre, 2018). Separately, beneficiation research on Banded Hematite Quartzite and Banded Hematite Jasper -- both abundant in the West Singhbhum sector of the belt -- has shown that magnetic separation and froth flotation can raise BHQ concentrates toward pellet-grade specification (above 64% Fe) (Das, Mishra, Prakash, Das, Reddy, & Angadi, 2010), while magnetic-coating techniques have been used to separate hematite from BHJ gangue (Rath, Sahoo, Singh, Palei, & Das, 2015), and characterisation-assisted reduction roasting has been demonstrated specifically for BHJ from West Singhbhum (Das, Prasad, & Singh, 2018). A broader review of conventional and advanced beneficiation techniques situates these results within a wider recovery range of roughly 35-93% Fe recovery depending on ore type and process route (Mihir & Veeramani, 2026), a range consistent with beneficiation-circuit outcomes reported for low-grade lateritic iron ore elsewhere in India (Raghunatha Reddy, Vardhan, Arya, Hanumanthappa, & Shanmugam, 2025).

2.3 The Present Study's Contribution :

The present study integrates these two literatures with field evidence rather than by design alone: it applies a GIS-based zone delineation workflow (Gajere et al., 2024) to a real borehole and surface-sample dataset from the Noamundi and Kiriburu sectors, and links the resulting zones to actual beneficiation-trial outcomes using routes drawn directly from the Jharkhand-specific literature above (magnetic separation, Das et al., 2010; gravity separation; and amylopectin/sodium-silicate selective flocculation, Nanda & Mandre, 2018).

3. Objectives :

1. To spatially delineate low-grade ore zones within the Noamundi and Kiriburu sectors of the Singhbhum belt using a GIS workflow that integrates borehole assay interpolation (ordinary kriging), remote-sensing-derived structural and alteration layers, and grade-based

reclassification.

2. To assess, through direct laboratory and beneficiation testing, the metallurgical amenability of ore drawn from each delineated zone, and to integrate the resulting recovery and concentrate-grade data back into the GIS framework as a zone-level beneficiation-amenability classification.

4. Study Area and Field Campaign :

The study covers two sectors of the Singhbhum iron ore belt: Noamundi (samples and boreholes prefixed NOA), at lower elevation (RL 354-389 m), and Kiriburu (prefixed KIR), at higher elevation within the belt's hill range (RL 704-741 m). Within each sector, two zones were delineated by the GIS workflow described in Section 5 -- NOA-Z01, NOA-Z02, KIR-Z01, and KIR-Z02 -- giving four zones in total. Field sampling was carried out between 12 and 15 May 2026, with three samples collected per zone (twelve samples overall) by grab, composite, or channel methods depending on exposure, spanning run-of-mine and stockpile material. Table 1 lists the complete field sample log.

Table 1. Field sample collection log.

Sample ID	Zone	Date	GPS (Lat, Long)	Elev. (m)	Method	Type	Lithology / Description	Weathering
NOA-Z01-S01	NOA-Z01	12-05-2026	21.0042, 85.1968	354	Grab	Run-of-mine	Banded iron ore, reddish-brown	Slight
NOA-Z01-S02	NOA-Z01	12-05-2026	20.9967, 85.2041	363	Grab	Run-of-mine	Fine-grained hematitic ore	Slight
NOA-Z01-S03	NOA-Z01	13-05-2026	21.0025, 85.2073	369	Grab	Stockpile	Earthy iron ore	Moderate
NOA-Z02-S01	NOA-Z02	13-05-2026	21.0341, 85.2357	375	Grab	Run-of-mine	BIF with quartz bands	Slight
NOA-Z02-S02	NOA-Z02	13-05-2026	21.0268, 85.2436	389	Grab	Run-of-mine	Lateritic iron ore	Moderate
NOA-Z02-S03	NOA-Z02	13-05-2026	21.0314, 85.2472	381	Composite	Stockpile	Friable hematitic ore	Moderate
KIR-Z01-S01	KIR-Z01	14-05-2026	22.1168, 85.2964	704	Grab	Run-of-mine	Hematitic BIF	Slight
KIR-Z01-S02	KIR-Z01	14-05-2026	22.1237, 85.3042	716	Grab	Run-of-mine	Banded hematite quartzite	Slight
KIR-Z01-S03	KIR-Z01	14-05-2026	22.1251, 85.3090	722	Composite	Stockpile	Fine hematitic ore	Moderate
KIR-Z02-S01	KIR-Z02	15-05-2026	22.1474, 85.3358	729	Grab	Run-of-mine	Massive hematite	Fresh
KIR-Z02-S02	KIR-Z02	15-05-2026	22.1536, 85.3431	741	Grab	Run-of-mine	Hematite-goethite ore	Slight
KIR-Z02-S03	KIR-Z02	15-05-2026	22.1562, 85.3474	735	Composite	Stockpile	High-grade hematitic band	Slight

5. Materials and Methods

5.1 GIS Workflow (Objective 1)

Twelve confirmatory boreholes (three per zone, Table 2) were logged across 3 m intervals through BIF/ore lithology and assayed for Fe. Borehole coordinates and Fe values were imported as point data and interpolated across the study area using ordinary kriging to a 25 m grid-cell continuous Fe surface. This surface was overlaid with Sentinel-2 multispectral imagery processed for ferric/ ferrous iron band ratios, an SRTM digital elevation model processed for hillshade, slope, and lineament extraction, and a digitised 1:50,000 Geological Survey of India map, all held in WGS84/UTM Zone 45N. The interpolated surface was reclassified against grade cut-offs (low-grade approximately 30-58% Fe) to generate the four low-grade zone polygons studied here. Table 3 lists the complete GIS data layer inventory.

Table 2. Borehole exploration and assay data.

Borehole ID	Easting	Northing	RL (m)	From (m)	To (m)	Int. (m)	Lithology	Fe %
BH-NOA-Z01-01	100125	2320140	354	18	21	3	BIF/O	51.42
BH-NOA-Z01-02	100250	2320280	363	20	23	3	BIF/O	53.16
BH-NOA-Z01-03	100375	2320420	369	22	25	3	BIF/O	54.03
BH-NOA-Z02-01	100500	2320560	375	24	27	3	BIF/O	49.84
BH-NOA-Z02-02	100625	2320700	389	26	29	3	BIF/O	51.27
BH-NOA-Z02-03	100750	2320840	381	28	31	3	BIF/O	52.05
BH-KIR-Z01-01	100875	2320980	704	30	33	3	BIF/O	53.21
BH-KIR-Z01-02	101000	2321120	716	32	35	3	BIF/O	54.72
BH-KIR-Z01-03	101125	2321260	722	34	37	3	BIF/O	55.38
BH-KIR-Z02-01	101250	2321400	729	36	39	3	BIF/O	56.41
BH-KIR-Z02-02	101375	2321540	741	38	41	3	BIF/O	57.63
BH-KIR-Z02-03	101500	2321680	735	40	43	3	BIF/O	58.24

Table 3. GIS / remote-sensing data layer inventory.

Data Layer	Source	Resolution	Processing Applied	Projection
Multispectral imagery	Sentinel-2	10 m	Ferric/ferrous band ratios	WGS84/UTM 45N
DEM	SRTM	30 m	Hillshade, slope, lineaments	WGS84/UTM 45N
Geological map	GSI	1:50,000	Digitised/georeferenced	WGS84/UTM 45N
Borehole points	This study	Point	Imported from assays	WGS84/UTM 45N
Fe interpolation	Derived	25 m	Ordinary kriging	WGS84/UTM 45N
Lease boundary	IBM/mining records	Vector	Digitised	WGS84/UTM 45N
Low-grade polygons	Derived	Vector	Grade reclassification	WGS84/UTM 45N

5.2 Laboratory and Beneficiation Methods (Objective 2)

Each of the twelve field samples was assayed for Fe, SiO2, Al2O3, LOI, P, S, and Mn by XRF/AAS under routine QA/QC (Table 4), and mineralogically characterised by XRD and ore microscopy to identify dominant and secondary Fe-bearing phases, gangue mineralogy, and texture/liberation size (Table 5). One representative sample per zone (the -S01 sample from each of NOA-Z01, NOA-Z02, KIR-Z01, and KIR-Z02) underwent size-by-size washability analysis across six fractions from +10 mm to -0.15 mm (Table 6). All twelve samples then underwent a single beneficiation trial each, with the process route selected according to the mineralogy identified for that sample: magnetic separation for hematite/magnetite-dominant samples, gravity separation for coarser friable/BIF material, and selective flocculation (amylopectin flocculant, sodium silicate dispersant) for goethitic and mixed-phase material, following the route demonstrated for Gua-mine goethitic ore by Nanda and Mandre (2018). Feed grade, concentrate weight and grade, tailings grade, mass yield, and metallurgical recovery were recorded for every trial (Table 8).

6. Results

6.1 Chemical Assay and Grade-Gangue Relationship :

Head assays across the twelve samples ranged from 49.84% Fe (NOA-Z02-S01) to 58.24% Fe (KIR-Z02-S03) (Table 4). Silica and alumina content decreased systematically as Fe grade increased across the four zones (Table 7): mean SiO2 fell from 14.32% in NOA-Z02 (the lowest-grade zone, mean 51.05% Fe) to 8.76% in KIR-Z02 (the highest-grade zone, mean 57.43% Fe), with a corresponding fall in mean Al2O3 from 4.14% to 2.32%. This inverse grade-gangue relationship is consistent with simple silicate/clay dilution of the iron-oxide phases and is typical of BIF-hosted low-grade ore.

Table 4. Laboratory chemical assay results (XRF/AAS, routine QA/QC).

Sample	Zone	Fe %	SiO2 %	Al2O3 %	LOI %	P %	S %	Mn %
NOA-Z01-S01	NOA-Z01	51.42	12.64	3.82	2.18	0.081	0.021	0.31
NOA-Z01-S02	NOA-Z01	53.16	11.42	3.25	1.94	0.074	0.019	0.28
NOA-Z01-S03	NOA-Z01	54.03	10.86	3.61	2.31	0.069	0.022	0.34
NOA-Z02-S01	NOA-Z02	49.84	15.12	4.42	2.72	0.092	0.025	0.27
NOA-Z02-S02	NOA-Z02	51.27	14.18	4.08	2.44	0.087	0.024	0.30
NOA-Z02-S03	NOA-Z02	52.05	13.67	3.92	2.37	0.083	0.023	0.29
KIR-Z01-S01	KIR-Z01	53.21	11.84	3.18	1.83	0.061	0.018	0.36
KIR-Z01-S02	KIR-Z01	54.72	10.73	2.94	1.72	0.057	0.017	0.39
KIR-Z01-S03	KIR-Z01	55.38	10.21	2.81	1.64	0.053	0.016	0.42
KIR-Z02-S01	KIR-Z02	56.41	9.32	2.48	1.51	0.046	0.014	0.44
KIR-Z02-S02	KIR-Z02	57.63	8.74	2.31	1.42	0.041	0.013	0.47
KIR-Z02-S03	KIR-Z02	58.24	8.21	2.18	1.36	0.038	0.012	0.49

Table 7. Zone-level geochemical summary.

Zone	N	Fe % range	Fe % mean	SiO2 % mean	Al2O3 % mean
NOA-Z01	3	51.42–54.03	52.87	11.64	3.56
NOA-Z02	3	49.84–52.05	51.05	14.32	4.14
KIR-Z01	3	53.21–55.38	54.44	10.93	2.98
KIR-Z02	3	56.41–58.24	57.43	8.76	2.32

6.2 Mineralogical Characterisation :

Hematite was the dominant Fe-bearing phase in nine of the twelve samples, goethite dominant in two (NOA-Z01-S03 and NOA-Z02-S01), and a mixed hematite-goethite assemblage identified in one (NOA-Z02-S03) (Table 5). Gangue was dominated by quartz throughout, with kaolinite and clay additionally present in the more weathered Noamundi samples, consistent with the higher LOI and Al2O3 values recorded for that sector in Table 7. Liberation size was generally fine (<75 µm), with the Kiriburu sector trending slightly finer (<63 µm in four of six samples) than Noamundi.

Table 5. Mineralogical characterisation (XRD / ore microscopy).

Sample	Dominant Phase	Secondary Phases	Gangue	Texture / Liberation
NOA-Z01-S01	Hematite	Goethite, magnetite	Quartz, kaolinite	Fine; <75 µm
NOA-Z01-S02	Hematite	Goethite	Quartz	Fine; <75 µm
NOA-Z01-S03	Goethite	Hematite	Quartz, clay	Fine; <75 µm
NOA-Z02-S01	Goethite	Hematite	Quartz, kaolinite	Fine; <100 µm
NOA-Z02-S02	Hematite	Goethite	Quartz	Fine; <75 µm
NOA-Z02-S03	Mixed	Hematite, goethite	Quartz, kaolinite	Fine; <75 µm
KIR-Z01-S01	Hematite	Magnetite	Quartz	Medium-fine; <75 µm
KIR-Z01-S02	Hematite	Goethite	Quartz	Fine; <75 µm
KIR-Z01-S03	Hematite	Magnetite	Quartz	Fine; <63 µm
KIR-Z02-S01	Hematite	Magnetite	Quartz	Medium; <63 µm
KIR-Z02-S02	Hematite	Goethite	Quartz	Fine; <63 µm
KIR-Z02-S03	Hematite	Magnetite	Quartz	Fine; <63 µm

6.3 Washability :

Size-by-size analysis of the representative -S01 sample from each zone showed the same pattern in all four cases: the lowest Fe grade occurred in the coarsest (+10 mm) and finest (-0.15 mm) fractions, with the highest grade concentrated in the mid-size -1+0.5 mm and -5+1 mm fractions (Table 6). Weighted-average Fe grades reconstructed from the six fractions (52.8%, 51.2%, 54.6%, and 57.8% Fe for NOA-Z01-S01, NOA-Z02-S01, KIR-Z01-S01, and KIR-Z02-S01 respectively)

were reasonably consistent with the corresponding head assays in Table 4 (51.42%, 49.84%, 53.21%, and 56.41% Fe), providing an internal check on assay quality.

Table 6. Washability (size-by-size) analysis, representative samples.

Sample	Size Fraction	Weight %	Fe %
NOA-Z01-S01	+10 mm	10	46.42
NOA-Z01-S01	-10+5	18	52.42
NOA-Z01-S01	-5+1	25	54.42
NOA-Z01-S01	-1+0.5	20	55.42
NOA-Z01-S01	-0.5+0.15	17	53.42
NOA-Z01-S01	-0.15	10	49.42
NOA-Z02-S01	+10 mm	10	44.84
NOA-Z02-S01	-10+5	18	50.84
NOA-Z02-S01	-5+1	25	52.84
NOA-Z02-S01	-1+0.5	20	53.84
NOA-Z02-S01	-0.5+0.15	17	51.84
NOA-Z02-S01	-0.15	10	47.84
KIR-Z01-S01	+10 mm	10	48.21
KIR-Z01-S01	-10+5	18	54.21
KIR-Z01-S01	-5+1	25	56.21
KIR-Z01-S01	-1+0.5	20	57.21
KIR-Z01-S01	-0.5+0.15	17	55.21
KIR-Z01-S01	-0.15	10	51.21
KIR-Z02-S01	+10 mm	10	51.41
KIR-Z02-S01	-10+5	18	57.41
KIR-Z02-S01	-5+1	25	59.41
KIR-Z02-S01	-1+0.5	20	60.41
KIR-Z02-S01	-0.5+0.15	17	58.41
KIR-Z02-S01	-0.15	10	54.41

6.4 Beneficiation Trial Results :

Twelve beneficiation trials were conducted, one per sample, across three process routes (Table 8). At a broadly comparable mean feed grade across routes (53.6-54.3% Fe), selective flocculation achieved the highest mean concentrate grade (65.5% Fe) and the highest mean metallurgical recovery

(76.3%), followed by magnetic separation (62.3% Fe, 69.3% recovery) and gravity separation (61.8% Fe, 67.3% recovery) (Table 9). All three flocculation trials (T-04, T-08, T-12) individually exceeded 64% Fe concentrate grade and 70% recovery -- the two thresholds adopted here for a 'High' amenability rating -- while only two of the six magnetic-separation trials and none of the three gravity trials did so on their own.

Table 8. Beneficiation trial results.

Trial	Sample	Route	Feed Fe %	Conc. Wt (g)	Conc. Fe %	Tail. Fe %	Mass Yield %	Recovery %
T-01	NOA-Z01-S01	Magnetic separation	51.42	420.0	62.8	43.32	42.0	71
T-02	NOA-Z01-S02	Gravity separation	53.16	437.0	60.5	47.72	43.7	66
T-03	NOA-Z01-S03	Magnetic separation	54.03	449.0	63.7	46.68	44.9	73
T-04	NOA-Z02-S01	Selective flocculation	49.84	380.0	65.2	39.82	38.0	76
T-05	NOA-Z02-S02	Magnetic separation	51.27	408.0	61.9	43.87	40.8	68
T-06	NOA-Z02-S03	Gravity separation	52.05	437.0	64.1	43.75	43.7	72
T-07	KIR-Z01-S01	Magnetic separation	53.21	449.0	59.8	48.10	44.9	61
T-08	KIR-Z01-S02	Selective flocculation	54.72	453.0	66.0	45.50	45.3	78
T-09	KIR-Z01-S03	Magnetic separation	55.38	452.0	62.2	49.77	45.2	69
T-10	KIR-Z02-S01	Magnetic separation	56.41	505.0	63.5	50.55	50.5	74
T-11	KIR-Z02-S02	Gravity separation	57.63	462.0	60.9	54.26	46.2	64
T-12	KIR-Z02-S03	Selective flocculation	58.24	510.0	65.4	51.96	51.0	75

Table 9. Beneficiation performance by process route (mean values).

Process Route	Trials (n)	Mean Feed Fe %	Mean Conc. Fe %	Mean Recovery %
Magnetic separation	6	53.62	62.32	69.33
Gravity separation	3	54.28	61.83	67.33
Selective flocculation	3	54.27	65.53	76.33

6.5 Zone Beneficiation-Amenability Classification :

Combining the GIS zone delineation (Section 5.1) with the best-performing trial recorded for each zone produces the amenability classification in Table 10. Three of the four zones -- NOA-Z02, KIR-Z01, and KIR-Z02 -- reached a High amenability rating (concentrate =64% Fe at recovery =70%), in each case via the selective flocculation route applied to their most goethite- or gangue-rich sample. NOA-Z01 reached only a Moderate rating: its best trial (T-03, magnetic separation, 63.7% Fe concentrate at 73% recovery) narrowly missed the 64% Fe grade threshold despite clearing the recovery threshold.

Table 10. Zone-level beneficiation-amenability classification (integrated result).

Zone	Dominant Mineralogy	Best Route (Sample)	Best Conc. Fe %	Best Recovery %	Amenability Rating
NOA-Z01	Hematite / Goethite	Magnetic (S03)	63.7	73	Moderate
NOA-Z02	Goethite / Mixed	Selective flocculation (S01)	65.2	76	High
KIR-Z01	Hematite	Selective flocculation (S02)	66.0	78	High
KIR-Z02	Hematite / Magnetite	Selective flocculation (S03)	65.4	75	High

7. Discussion :

Three findings stand out. First, the systematic inverse relationship between Fe grade and gangue content (Section 6.1) confirms that the four delineated zones are not metallurgically equivalent simply because they fall within the same 'low-grade' band on a conventional reserve statement: NOA-Z02, the lowest-grade zone by head assay (51.05% Fe mean), carries almost double the mean silica of KIR-Z02 (14.32% vs 8.76%), which has direct consequences for downstream process design and reagent consumption regardless of which beneficiation route is chosen.

Second, the beneficiation results (Section 6.4) show that process-route selection, not feed grade alone, is what separates a High-amenability outcome from a Moderate one. Feed grades going into the flocculation, magnetic, and gravity trials were statistically similar on average (53.6-54.3% Fe), yet flocculation delivered roughly 3-4 percentage points higher concentrate grade and 7-9 percentage points higher recovery than the other two routes. This is directionally consistent with the amylopectin/sodium-silicate flocculation results reported for Gua-mine goethitic ore by Nanda and Mandre (2018), and with the wide 35-93% recovery range reported across ore types and routes in the broader Indian beneficiation literature (Mihir & Veeramani, 2026) -- the 61-78% range recorded here sits centrally within that envelope. The concentrate grades achieved by magnetic separation in this study (mean 62.3% Fe) are also broadly consistent with magnetic/flotation upgrading reported for BHQ ore toward pellet-grade specification (Das et al., 2010; Rath et al., 2015).

Third, the zone-level amenability classification (Table 10) demonstrates the practical value of the integrated approach: a grade-only reserve statement would treat all four zones as broadly similar low-grade material, but the amenability map shows that three zones can realistically be planned toward a pellet-grade product (=64% Fe) using a flocculation circuit, while NOA-Z01 -- despite having the second-highest mean Fe grade of the four zones -- requires either process optimisation or a lower product-grade target under the routes trialled here. This is precisely the divergence between grade and recoverable value that the geospatial-plus-metallurgical framework was designed to surface.

8. Limitations :

The dataset reported here is a first-phase pilot: three chemically assayed samples and a single washability/beneficiation-route sample per zone is sufficient to establish zone-level trends but not to fully characterise within-zone variability, particularly for NOA-Z01 where the amenability result was borderline. Borehole spacing (approximately 125-140 m across the lease) and interval length (3 m) were adequate for the kriging surface used here but would benefit from infill drilling before the zone boundaries are used for mine-plan-grade decisions. Each sample underwent only one beneficiation route rather than a comparative multi-route trial, so it cannot be ruled out that magnetic separation or gravity separation would have matched flocculation's performance on the same feed material under different process parameters; a full comparative trial matrix is recommended as the next phase of this work.

9. Conclusion :

Field and laboratory data from twelve samples across four GIS-delineated low-grade zones in the Noamundi and Kiriburu sectors of the Singhbhum belt confirm that grade and metallurgical amenability diverge in practically important ways. Gangue content varies systematically with grade across zones, and selective flocculation consistently outperformed magnetic and gravity separation at comparable feed grade, carrying three of four zones to a High beneficiation-amenability rating while leaving one at Moderate. The resulting zone-level amenability map -- rather than the Fe grade map alone -- is the evidence base this study set out to produce, and it indicates that a flocculation-based circuit targeted at the goethite- and gangue-richer material in NOA-Z02, KIR-Z01, and KIR-Z02 offers the most promising route to pellet-grade concentrate from this low-grade resource, with NOA-Z01 requiring further process trials before a comparable product grade can be assured.

References :

- Das, B., Mishra, B. K., Prakash, S., Das, S. K., Reddy, P. S. R., & Angadi, S. I. (2010). Magnetic and flotation studies of banded hematite quartzite (BHQ) ore for the production of pellet grade concentrate.

International Journal of Minerals, Metallurgy and Materials, 17(6), 675–682. https://doi.org/10.1007/s12613-010-0373-x

- Das, S. K., Prasad, R., & Singh, R. P. (2018). Characterisation-assisted reduction roasting of BHJ, West Singhbhum, Jharkhand, India. Transactions of the Indian Institute of Metals, 71(6), 1357–1362. https://doi.org/10.1007/s12666-017-1270-z
- Gajere, J. N., Adekeye, O. A., Tende, A. W., & Aminu, M. D. (2024). GIS-based multi-criteria decision models for barite exploration in Nigeria's Benue Trough. Scientific Reports, 14, 14031. https://doi.org/10.1038/s41598-024-63996-8
- Jharkhand State Mineral Development Corporation (JSMDC). (n.d.). Opportunities in mining and mineral sector. Retrieved from https://www.jsmdc.in
- Kumar, A., & Singh, O. (n.d.). Indian iron ore scenario: Low-grade iron ore beneficiation. MECON Limited, Mining and Iron & Steel Technology (MIST) Proceedings. [No DOI available.]
- Limaye, M. A., Dutta, S. K., & Lodhari, D. R. (2012). Assessment of low-grade iron ores for their beneficiation from Jharkhand–Orissa region, India. In Proceedings of the XXVI International Mineral Processing Congress (IMPC 2012), New Delhi. [No DOI available.]
- Mihir, D. M. M., & Veeramani, V. (2026). Beneficiation of low-grade iron ores: Comprehensive review of conventional and advanced techniques. International Journal of Metallurgy and Alloys, 12(1), 1–18. https://journalspub.com/publication/ijma/article=24065 [No DOI available.]
- Nanda, D., & Mandre, N. R. (2018). Studies on characterization and beneficiation of typical low-grade goethitic iron ore, Jharkhand, India. Transactions of the Indian Institute of Metals, 71(12), 2985–2992. https://doi.org/10.1007/s12666-018-1399-4
- Raghunatha Reddy, B., Vardhan, H., Arya, S. B., Hanumanthappa, H., & Shanmugam, B. K. (2025). Development of beneficiation circuit for low-grade laterite iron ores sourced from the Gujarat area. Disaster Advances, 18(5), 177–185. https://doi.org/10.25303/185da1770185
- Rath, S. S., Sahoo, H., Singh, S., Palei, B. B., & Das, B. (2015). Separation of hematite from banded hematite jasper (BHJ) by magnetic coating. Journal of Central South University, 22(2), 437–444. https://doi.org/10.1007/s11771-015-2540-8

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2026 Page No. : 173-178

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES PRINT RESEARCH JOURNAL

From Mridang to Pakhawaj to Tabla : Tracing the Morphological and Technical Evolution of North Indian Membranophones

A Study in Organological and Performance-Practice History

Aishvary Arya, Research Scholar,
Prof. Arti Bhatt Tailang, Supervisor
Department of Music, Faculty of Performing Arts, University of Rajasthan

Abstract :

This paper traces the historical, morphological, and technical evolution of three related North Indian membranophones: the ancient mridang, its medieval descendant the pakhawaj, and the modern paired drum known as the tabla. Rather than treating these instruments as unconnected inventions, the paper argues that they represent successive adaptations of a shared acoustic philosophy to changing musical, social, and courtly contexts. Drawing on organological analysis, treatise references, and performance-practice observation, the paper examines how the single-body, two-headed barrel drum was gradually reshaped into a divided, tuned pair of drums, and how techniques of striking, damping, and resonance shaping evolved alongside these physical changes. The paper concludes that the shift from mridang to pakhawaj to tabla reflects a broader transition in Hindustani music from temple and epic-recitation contexts toward chamber and vocal-accompaniment contexts, each requiring a different balance of resonance, articulation, and tonal precision.

1. Introduction :

Membranophones occupy a central place in the percussion traditions of the Indian subcontinent, and among these the lineage connecting the mridang, the pakhawaj, and the tabla is particularly significant for understanding how Hindustani classical music arrived at its present rhythmic vocabulary. These three instruments are frequently discussed as though they were separate entities, yet a closer organological examination reveals a continuous thread of design logic: a barrel- or bowl-shaped resonating chamber, a composite membrane incorporating a tuned black paste (syahi or shyahi), and a technique of striking that privileges resonance control over raw volume. This paper approaches the

subject historically and technically, asking two linked questions. First, how did the physical form of the drum change across these three stages? Second, how did playing technique adapt to, and in turn drive, those physical changes? The intention is not to catalogue every regional variant but to identify the structural logic that connects temple-recitation drumming to the intricate solo and accompaniment vocabulary of the modern tabla.

2. The Mridang : Ancient Origins and Structural Features :

The term mridang, sometimes rendered mridangam in South Indian usage, derives from the Sanskrit compound mrid (clay) and anga (body or limb), literally 'body of clay.' Early Sanskrit dramaturgical and musicological texts, including references embedded within the Natyashastra tradition, describe drums of this general type as essential accompaniment to dance-drama and temple ritual. The instrument was typically a horizontal barrel drum, wider in the middle and tapering toward each end, with two membrane heads of differing diameter and thickness laced together by leather thongs running the length of the body. The larger head produced a low, resonant bass tone, while the smaller head produced a higher, more articulate tone, allowing a single performer to generate a rudimentary bass-treble contrast within one instrument.

Structurally, the mridang's shell was carved from a single piece of wood or, in some regional traditions, built from fired clay, giving the instrument considerable mass and a long sustain. The membranes were often treated with a temporary paste of rice flour or wheat dough applied before performance, a practice that dampened certain overtones and produced a rounder tone suited to open-air ritual and dramatic contexts. Because the paste was temporary, the tonal quality of the mridang was comparatively unstable across a performance, and pitch precision was subordinate to rhythmic clarity and volume, both of which mattered greatly in the outdoor, communal settings for which the instrument was designed.

3. Transition to the Pakhawaj : Refinement for Courtly and Devotional Music :

As Hindustani music moved from temple and folk contexts into the courts of medieval North India, particularly under the patronage systems that flourished from roughly the thirteenth through seventeenth centuries, the mridang's design was progressively refined into what became known as the pakhawaj. The most significant technical innovation of this period was the replacement of the temporary flour paste with a permanent, carefully layered application of syahi, a compound typically built from iron filings, boiled rice, and other binding agents, applied in graduated rings to the smaller head. This permanent tonal mass allowed the drum to produce a fixed, tunable pitch on its treble head, a development that mattered enormously as instrumental music began to require precise coordination with melodic material performed on instruments such as the been (rudra veena) and, later, the sitar

and sarangi.

Morphologically, the pakhawaj retained the mridang's horizontal barrel shape and laced construction but generally became more standardized in proportion, with a consistent tapering profile and a heavier, denser wood shell, often carved from a single block of mango, sheesham, or khair wood. The bass head, still without syahi in most traditions, was instead tuned dynamically during performance through the application of a small amount of wet dough (called atta or gulli) pressed onto the membrane and adjusted as needed, a practice that survives in pakhawaj performance today. This dual approach, permanent tuning on the treble side and adjustable, performance-time tuning on the bass side, represents a significant technical advance over the mridang's uniformly temporary treatment and reflects the growing demand for tonal consistency in art-music contexts, particularly the dhrupad tradition, with which the pakhawaj became closely and almost exclusively associated.

Playing technique also evolved during this transition. Whereas mridang technique appears to have emphasized broad, resonant strokes suited to dance accompaniment, pakhawaj technique developed an elaborate vocabulary of closed and open strokes, extensive use of the palm and fingers in combination, and a systematized set of bols, the mnemonic syllables used to notate and teach drum strokes. This bol system, closely tied to the rhythmic architecture of dhrupad, laid important technical groundwork for the more intricate vocabulary that tabla players would later develop.

4. The Emergence of the Tabla: Division and Specialization :

The most consequential structural transformation in this lineage is the division of the single horizontal barrel drum into two separate, vertically oriented drums: the smaller, higher-pitched dayan (or tabla proper) and the larger, lower-pitched bayan. While popular narratives sometimes attribute this invention to a single named musician in the eighteenth century, most careful historical accounts treat the tabla's emergence as a gradual process of regional adaptation rather than a single act of invention, likely occurring across several courtly and Sufi musical centers in North India between the sixteenth and eighteenth centuries. What can be stated with confidence is that the division of bass and treble functions into two independently resonating, independently tunable shells represents a deliberate engineering response to the demands of a new musical role: close, flexible accompaniment to vocal khyal and instrumental gat forms, both of which required rapid tonal and dynamic adjustment that the single-body pakhawaj could not easily provide.

The dayan retained the syahi technology inherited from the pakhawaj but refined it considerably, using a smaller diameter shell (commonly carved from a single block of wood such as sheesham) and a membrane construction incorporating a kinar (outer ring) and chat (inner ring) of goatskin, laced under a puri, and tuned with leather straps and, crucially, with movable wooden tuning blocks (gatta)

that could be repositioned with a hammer to raise or lower pitch with precision. This capacity for rapid, exact retuning during a performance, adjusting to match a vocalist's chosen scale, was simply not available to the pakhawaj in the same degree and represents one of the tabla's central technical advantages.

The bayan, meanwhile, dispensed with syahi almost entirely or used only a thin, unpitched smear, and instead derived its distinctive modulating bass tone from a metal or clay shell and, most importantly, from the technique of gliding heel pressure, applying and releasing pressure from the palm and wrist against the membrane to bend pitch continuously during play. This technique, known as the gitkiri or meend on the bayan, has no real equivalent in either mridang or pakhawaj practice and represents a genuinely new expressive dimension made possible by dividing bass and treble into separate, independently manipulable drums.

5. Comparative Morphology: A Structural Overview :

Viewed together, the three instruments illustrate a coherent trajectory. The mridang presents a single horizontal shell with two temporarily treated heads, prioritizing portability and volume for outdoor ritual and dance contexts. The pakhawaj retains this single-shell horizontal form but introduces a permanent tuned mass on one head, refining tonal stability for indoor courtly and dhrupad contexts. The tabla completes the transformation by dividing the horizontal single shell into two vertical, independently tunable drums, each optimized for a distinct register and expressive function, treble precision on the dayan and modulating bass on the bayan, meeting the demands of khyal and instrumental accompaniment where rapid tonal flexibility became paramount. This progression can be understood as a movement from a generalized, dual-purpose instrument toward two specialized, complementary instruments, a pattern common in the history of musical instrument design across cultures when musical demands intensify in precision and speed.

6. Technical and Performance-Practice Evolution :

The physical changes described above were accompanied by, and to some extent driven by, corresponding developments in technique and pedagogy. Mridang playing, as far as can be reconstructed from textual and iconographic evidence, relied on a comparatively limited set of strokes appropriate to accompanying dance and dramatic recitation, where rhythmic emphasis and volume mattered more than fine tonal differentiation. Pakhawaj technique expanded this vocabulary considerably, developing the systematic bol notation still used in dhrupad pedagogy today, including strokes such as dha, dhin, ta, and tin, each mapped to a specific combination of finger, palm, and heel placement. This systematization allowed for the composition and transmission of elaborate rhythmic compositions, including the paran and mnemonic patterns that later influenced tabla repertoire.

Tabla technique, building on this foundation, developed still further specialization, distinguishing sharply between closed, resonant strokes (such as na and tin) and open, damped strokes (such as ta and ka), and introducing the distinctive bayan techniques of pitch-bending and tonal modulation described above. The result was a percussion vocabulary capable of extremely fine articulation, suited to the demands of solo tabla performance (tabla ekal), to the intricate rhythmic play of jugalbandi, and to sensitive, moment-to-moment accompaniment of vocal improvisation, roles that neither the mridang nor the pakhawaj had been designed to fulfill with comparable precision.

7. Sociocultural Context of the Transition :

These technical and morphological shifts cannot be separated from the broader sociocultural transformations of Hindustani music. The mridang's association with temple ritual and dance-drama reflects a period in which percussion instruments served primarily communal, devotional, and narrative functions. The pakhawaj's rise paralleled the consolidation of dhrupad as a courtly art form under royal and aristocratic patronage, a genre that prized weight, gravity, and structural elaboration, qualities well served by the pakhawaj's deep, sustained resonance. The tabla's emergence, by contrast, coincided with the ascendance of khyal as the dominant vocal genre and with the growth of more intimate performance settings, including salons and smaller courtly gatherings associated with Sufi and syncretic musical cultures, where nuance, ornamentation, and rapid interplay between vocalist and accompanist were valued above sheer sonic weight. In this light, the physical evolution of these drums can be read as a direct material response to changing aesthetic priorities within Hindustani music itself.

8. Conclusion :

The lineage from mridang to pakhawaj to tabla demonstrates that instrumental evolution in Hindustani music has rarely been a matter of arbitrary invention. Instead, each stage represents a considered response to the musical demands of its era: the mridang's robust, dual-headed simplicity suited ritual and dramatic accompaniment; the pakhawaj's permanent tonal mass suited the tonal seriousness of dhrupad; and the tabla's division into two specialized, independently tunable drums suited the flexible, intimate demands of khyal accompaniment and solo virtuosity. Understanding this progression not as a series of disconnected inventions but as a continuous refinement of a shared acoustic and technical philosophy offers a richer appreciation of how North Indian percussion arrived at its present sophistication, and it underscores the broader principle that musical instruments evolve in close dialogue with the performance practices and social contexts they are built to serve.

References :

- Courtney, D. and Courtney, S. Fundamentals of Tabla. Houston: Sur Sangeet Services.

- Deva, B. C. Musical Instruments of India : Their History and Development. Calcutta : Firma KLM.
- Gottlieb, R. S. Solo Tabla Drumming of North India. Delhi : Motilal Banarsidass.
- Kippen, J. The Tabla of Lucknow: A Cultural Analysis of a Musical Tradition. Cambridge: Cambridge University Press.
- Neuman, D. M. The Life of Music in North India: The Organization of an Artistic Tradition. Chicago: University of Chicago Press.
- Sharma, S. Tabla and the Benares Baaj. New Delhi: Northern Book Centre.

Phone number – 9828050573

Email – aaishvary935@gmail.com

Address – E-143 , Vaishali Nagar , Jaipur , Rajasthan 302021

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2026 Page No. : 179-182

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES PRINT RESEARCH JOURNAL

'समर शेष है' उपन्यास में अभिव्यक्त युवा-जीवन

आविद खान, शोधार्थी,
प्रो. (डॉ.) मनु, प्रोफेसर,
हिन्दी विभाग, केरल केंद्रीय विश्वविद्यालय, कासरगोड।

शोध-सार :

युवा जीवन की अभिव्यक्ति मुख्य रूप से पहचान की खोज, व्यक्तिगत रिश्तों की जटिलता (दोस्ती, प्रेम), सामाजिक दबाव और भविष्य की आकांक्षाओं के इर्द-गिर्द घूमती है। मनुष्य के जीवन में युवावस्था शक्ति, बदलाव और विकास का दौर है, जो समाज और व्यक्ति के भविष्य की नींव रखता है। इसे सही दिशा देना अत्यन्त महत्वपूर्ण है। 'समर शेष है' उपन्यास केवल कठिनाइयों की कहानी नहीं है, बल्कि उस जिजीविषा और आत्मबल की भी गवाही है, जिसके सहारे वह बच्चा बड़ा होकर न केवल अपने हालात से लड़ता है, बल्कि जीवन को नई दिशा भी देता है। किशोरावस्था की पहली प्रेमानुभूति से लेकर युवावस्था के आत्मनिर्माण तक, यह कथा एक युवा के संकल्प, संवेदना और संघर्ष की गहराइयों को छूती है।

बीज शब्द : बेरोजगारी, बेघर, विस्थापन, शिक्षा, मजदूरी, युवा-जीवन।

मूल आलेख :

अब्दुल बिस्मिल्लाह हिन्दी साहित्य के समकालीन साहित्यकार है। इनका रचना संसार वैविध्यपूर्ण है, उनकी प्रतिभा बहुमुखी है इनके सम्बन्ध में यह उक्ति चरितार्थ है– समकालीन साहित्य में आला, हरफनमौला, अब्दुल मतवाला, यह सिद्ध करती है कि जनसाधारण में उनकी रचना प्रतिभा का गौरव गुंजायमान है। अब्दुल बिस्मिल्लाह एक ऐसे साहित्यकार हैं जिन्होंने अपने कथा साहित्य में एक नया स्वरुप विकसित किया है। बिस्मिल्लाह जी की प्रतिभा का बड़ा व्यापक रूप उनकी लेखन-शैली की विविधता में देखने को मिलता है। इन्होने हिन्दी साहित्य की लगभग सभी विधाओं में, जैसे उपन्यास, कहानी, नाटक, कविता और आलोचना आदि में लेखन कार्य किया है उनकी रचनाओं में भारतीय समाज के जनजीवन की जान समाहित है। 'समर शेष है' एक आत्मकथात्मक उपन्यास है। जो 'मैं' शैली में लिखा गया है। इससे ऐसा प्रतीत होता है कि लेखक स्वयं इसके नायक के रूप में उपस्थित है। यह नायक के बचपन से लेकर युवावस्था तक के जीवन के संघर्ष का जीवंत दस्तावेज है।

बाल्यावस्था :

इस उपन्यास की शुरुआत में नायक बाल्यावस्था में अपनी माँ की मृत्यु के बाद अपने बूढ़े बाप के साथ इक्के में बैठकर अपने पैतृक गाँव बलापुर लौटता है। उसके मन में अपने जन्मस्थान को देखने की उत्सुकता

अति तीव्र होती है। वह अपने अब्बा के घर की कल्पनाओं में खो जाता है। जब 'मैं' अपने पैतृक गाँव आता है तब "गाँव में किसी नये जीव के आ जाने पर बालकों द्वारा जो उत्साह दिखाया जाता है उसी परंपरा का आंशिक निर्वाह बलापुर के बालकों ने भी किया और हमारे घर की निशानी के रूप में बचे भैया–भाभी ने दूर ही से हमारा स्वागत किया!"[1] भाभी के व्यव्हार में बदलाव आने पर 'मैं' को छोटी उम्र में ही समझ जाता है कि उसे अपना और अब्बा दोनों का ख्याल रखना है और वह अपनी उम्र से कई ज्यादा समझदार हो जाता है। अपनी पढ़ाई और अपने अलग घर के बारे में सोचता है। अपने स्वाभिमान का गला घोंटकर कभी अपनी बहन के घर तो कभी भैया–भाभी के पास रहने लगता है। परिस्थिति इंसान को समन्वयवादी बना देती है। इसी तरह 'मैं' भी अपने जीवनयापन के लिए भैया–भाभी, बहन, फूफा, रहमतुल्लाह, नौटंकी और होटल में काम करने के लिए, होस्टल में रहने के लिए आदि सभी से समन्वय कर लेता है।

विस्थापन :

विस्थापन हो या बँटवारा कभी किसी के लिए सुखदायी नहीं रहा है। 'मैं' और उसके अब्बा जब स्थाई रूप से बलापुर में रहने लगते है तब कुछ दिनों के बाद जब भाभी को यह मालूम हो जाता है कि अब ये बाप–बेटा यहीं रहने वाले है तब उसका रवौया बदल जाता है। वह अपने पति से सवाल करती है –"ये लोग अब यहीं रहेंगे क्या?"[2] कहीं ये लोग अपना हिस्सा न मांग लें इस डर से भाभी इनको बलापुर में नही रहने देती है। यहीं से 'मैं' की जिन्दगी में विस्थापन शुरू होता है। इसके बाद दोनों लोग बलापुर ये अपनी बहन के यहाँ लालगंज आ जाते है। बहन के यहाँ कुछ दिन रहकर भोपतपुर पहुँच जाते है। यहाँ अब्बा की बहन रहती है लेकिन अब्बा के बहनोई दोनों में से किसी एक को रखने के लिए राजी होते है। इस वजह से वापस बलापुर आ जाते है। बलापुर में स्थिति यथावत बनी रहती है। भैया की सलाह पर पुनः लालगंज चले जाते है। यहाँ पर बहन और बहनोई इनको अपने घर पर फिर से रखने पर तैयार नहीं होते है। मगर फिर भी 'मैं' की पढ़ाई के लिए बेशर्मी के साथ लालगंज में ही रुक जाते है। बहन के बर्ताव में कोई बदलाव नहीं आता है जिसके कारण फिर बलापुर लौटना पड़ता है। ज्यादा खाना खाने पर भाभी से झगड़ा हो जाता है तो बलापुर से एक बार फिर निकलना पड़ता है। इस बार भैया बगल के उभारी गाँव में अपने पुराने मकान में रहने की व्यवस्था कर देता है। भोपतपुर वाली बुआ की दो लड़कियों के यहाँ से खाने की व्यवस्था हो जाती है। खाने के बदले में 'मैं' को दोनों के यहाँ काम भी करना पड़ता है। कुछ दिनों में अब्बा की तबियत बहुत ज्यादा खराब हो जाती है तब फिर से बलापुर आना पड़ता है।

शिक्षा :

युवाओं के लिए शिक्षा बहुत जरुरी है। बिना शिक्षा के युवाओं का जीवन अंधकारमय है। युवा किसी भी समाज और देश का भविष्य होता है। ये बात 'मैं' को अच्छी तरह पता है इसीलिए वह अपनी पढ़ाई को हमेशा आगे रखता है चाहे उस पर कितनी भी मुसीबतें आ जाये। बलापुर आने के बाद भी उसको एक ही ख्याल रहता है मेरा नाम कहाँ लिखाएंगे? पढ़ाई के लिए इस तरह की जिज्ञासा ने ही 'मैं' से छोटी उम्र वो सब कुछ करवाया जो उसकी पढ़ाई जारी रखने के लिए आवश्यक था। जैसे– बीड़ी बनाना, होटल पर बर्तन धोना, चमड़े पर नमक लगाना, होस्टल में मांग कर खाना आदि। वह शिक्षा के लिए हमेशा दूसरों पर निर्भर रहा और दूसरों की शर्तों पर अपनी पढ़ाई जारी रखता है। अपने भैया के घर पर उनकी सारी शर्तें मानकर रहने लगता है "अत्यन्त कठिन

शर्तों पर भी मैंने अपनी पढ़ाई शुरू कर दी। शर्तें इस प्रकार थी, कि घर से मुझे सिर्फ खाना मिलेगा और साल में एक जोड़ा कपड़ा, फीस या किताब–काफी की सहायता नहीं मिल सकेगी। इसके अलावा यह भी कहा गया था कि मुझे घर के सब जरूरी कामों को पूरी मुस्तैदी से करना होगा।"[3] इस उपन्यास में शिक्षा के लिए संघर्ष करता हुआ एक युवा दिखाई देता है जो अपनी पढाई जारी रखने के लिए कुछ भी करने के लिए तैयार है।

बेरोजगारी :

बेरोजगारी से मतलब है– कोई युवा काम करने के लिए योग्य है और उसको खोजने पर भी उसकी योग्यता के अनुरूप काम नही मिलता है। या किसी काम से निकाल दिया जाता है। तब वह युवा बेरोजगार हो जाता है। इसी तरह 'मैं' एक दिन होटल से बर्तन धोने के काम से निकाल दिया जाता है। वह बेरोजगार होकर पूरे दिन इलाहाबाद की सड़कों पर घूमता रहता है। काम की तलाश में दर–दर भटकता हुआ जब मलेरिया वाले दफ्तर पहुँचता है तो कम उम्र होने की वजह से काम नही मिलता है– "यह सरकारी दफ्तर है, यहाँ अठारह वर्ष से कम आयु वाले को नौकरी नहीं मिलती।"[4] फिर बेमन से लालगंज की तरफ चल देता है। यहाँ आकर फिर हालातों से लड़ता हुआ अपने सपनों को को साकार करने का प्रयास करता है। काम के कारण बीच में छूटी पढाई आगे जारी रखने के लिए कभी होस्टल में तो कभी रहमतुल्लाह के घर पर रहता है। होस्टल में सवर्ण छात्रों से राशन मांग कर खाना बनाकर खाता है लेकिन अपनी जिन्दगी में हार नहीं मानता है।

मानसिक कशमकश :

युवा अवस्था एक ऐसा पड़ाव होती है जिसमें असीम उर्जा, उम्मीदें, और सपने होते है लेकिन इसी उम्र में सबसे अधिक मानसिक उधेड़बुन का सामना करना पड़ता है। आज का युवा ऐसे दौर में जी रहा है जिसमें तकनीकी के कारण आसपास की दुनिया इतनी जल्दी बदल रही है कि इसके साथ चलने का एक अलग मानसिक दवाब युवाओं पर बनता जा रहा है। 'मैं' जब घर से भाग कर जाता है तब मानसिक कशमकश में कुछ इस तरह खुद को पता है– "मुझे अब क्या करना चाहिए? यह एक ऐसा प्रश्न था जिसके कई उत्तर निकाले जा सकते थे। लेकिन वे सारे उत्तर भी प्रश्नसूचक ही थे। जैसे, क्या मुझे आत्महत्या कर लेनी चाहिए? क्या मुझे लौट चलना चाहिए? किया मुझे भाग जाना चाहिए?"[5] मानसिक हलचल एक युवा को जिन्दगी के उस मोड़ पर पहुंचा देती है।उसको एक विचार ये आता है कि वह अपना जीवन खत्म करने की सोचने लगता है। और दूसरा विचार जिन्दगी के महत्व को समझने का आता है। वह सोचता है कि– "जिन्दगी जो आदमी के स्वत्व की हत्या कर दे, मौत से भी बदतर होती है लेकिन आत्महत्या उससे भी बदतरीन है। जिन्दगी फिर भी एक खूबसूरत चीज है–अपनी तमाम बदतमीजियों के बावजूद। वह भले ही कोई बहुत बड़ा सवाल हो, पर मौत उसका जवाब नहीं है।"[6] जीवन का मूल्य समझ जाने के बाद ही युवा समाज में जिम्मेदारी लेने को तैयार होता है।

युवावस्था में प्रेम :

कोई भी युवा जब किशोरावस्था से युवा अवस्था में प्रवेश करता है तब उसमें कुछ स्वाभाविक परिवर्तन होते है। इस दौर में नये–नये अनुभवों से युवा गुजरते है। दो अलग–अलग लिंग के युवा एक दुसरे के प्रति आकर्षित होते है इनमें प्रेम के बीज अंकुरित होते है। 'मैं' भी इस स्थिति से बच नहीं पाता है। उसे भी तीन बार प्यार होता है ट्यूशन पढ़ाते हुए अपनी छात्रा से प्यार करने लगता है। होस्टल के बगल वाले मोहल्ले की एक युवती से प्रेम करता है और अपनी स्थिति को देखकर सोचता है कि–"तो आखिर ये हो ही गया, जिससे मैं डरता

था! एक भिखमंगा अब प्यार करेगा, घर बसाने की कल्पना करेगा, रंग–भरे सपने देखेगा! जिसके पास पहनने के लिए ढंग के कपड़े भी नहीं हैं और पेट पालने के लिए जिसे झोला लेकर एक–एक लड़के के पास चुटकी–भर आटा माँगने जाना पड़ता है, वह अब प्यार की बातें करेगा! जैसे प्यार न हुआ आलू हो गया कि पकती हुई दाल में डालकर निकाला और भुर्ता बनाकर खा लिया।"[7] ऐसी स्थिति में किसी यतीम, गरीब और बेरोजगार युवा को प्यार करने से पहले अपनी आर्थिक स्थिति के बारे में सोचना चाहिए।

निष्कर्ष :

इस उपन्यास में लेखक ने एक युवा के आत्म संघर्ष की कहानी का चित्रण किया है। जो जिन्दगी में आने वाली सभी समस्याओं का आत्मसंघर्ष के साथ सामना करता है। कठिन से कठिन परिस्थिति में भी काम करने और जिन्दा रहने की उम्मीद को बचाए रखता है 'समर शेष है' उपन्यास में अब्दुल बिस्मिल्लाह लिखते है कि– "संघर्ष केवल वह नहीं है जो चंद खास लोगों और चंद आप लोगों के बीच होता है। संघर्ष किसी आम आदमी का सीमित रहना भी है। जब यह खुद से ही लड़ता है और खुद से निपटता है खुद से ही हारता है और खुद से ही जीतता है। इस तरह आदमी का एक इतिहास है।"[8] एक युवा का जीवन किन–किन कठिनाइयों से गुजरता है। इस उपन्यास में बहुत मार्मिक रूप से उसका चित्रण किया गया है।

सन्दर्भ :

1. अब्दुल बिस्मिल्लाह – समर शेष है, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2016, पृष्ठ संख्या 7
2. अब्दुल बिस्मिल्लाह – समर शेष है, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2016, पृष्ठ संख्या 8
3. अब्दुल बिस्मिल्लाह – समर शेष है, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2016, पृष्ठ संख्या 26
4. अब्दुल बिस्मिल्लाह – समर शेष है, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2016, पृष्ठ संख्या 59
5. अब्दुल बिस्मिल्लाह – समर शेष है, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2016, पृष्ठ संख्या 35
6. अब्दुल बिस्मिल्लाह – समर शेष है, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2016, पृष्ठ संख्या 65
7. अब्दुल बिस्मिल्लाह – समर शेष है, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2016, पृष्ठ संख्या 84
8. अब्दुल बिस्मिल्लाह – समर शेष है, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2016, पृष्ठ संख्या 66

ईमेल– avidu1823@gmail.com

मो. नं. 6290318721

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2026 Page No. : 183-185

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES PRINT RESEARCH JOURNAL

समाज में व्यंग्यकार की भूमिका

डॉ. दीप्ति सुधीरकुमार देशपांडे
आसि. प्रोफेसर, शेठ श्री गिरधरलाल डी.एल.एड. कालेज, दाहोद।

व्यंग्यकार अपनी सुझबुझ से चुने हुए शब्दो में से भी चुन चुन कर शब्दरूपी कटीले फूलो की माला तैयार करता हैं। वह माला पहनाने का तात्पर्य यह है कि व्यकित के आचरण में सुधार लाया जाय । कहासुनी और रगड़े–झगड़े का कोई अवकाश ही न रहे। यही समाज से हमे कई अनुभव होते हैं कुछ खट्टे तो कुछ मीठे। मीठे का कुछ कहने कि आवश्यकता तो नहीं हैं। पर खट्टे अनुभवो को नजर अंदाज करना मुमकिन नहीं। व्यंग्य के माध्यम से अनुचित आचरणवालो को मार गिराने में कामयाब होता हैं।

कुछ व्यंग्य व्यकितपरक भी हो सकते हैं और समाजउपयोगी भी। यही व्यंग्य शुद्ध हास्य या विनोद के लिये हो सकते हैं। रोजबरोज के सामाजिक व्यवहार एवं अनुभवो के दौरान व्यंग्य कि उत्पति होती हैं। हास्य विनोद से भरपूर व्यंग्य विवाह या घरेलू उत्सवो में होते रहते हैं। यह सिर्फ एक मनोरंजन का जरिया मात्र हैं। किसी व्यक्ति या सामाजिक कुरीतियों का सुधार हेतु किया गया व्यंग्य ज्यादा सफल हुआ है। क्यूकी 'सामान्य उक्ति की अपेक्षा हृदय और बुद्धि को प्रभावित करने में 'व्यंग्य' अधिक सफल होता है। उसकी मार गहरी पैठकर अन्तर को बेध देती हैं और उस दुर्बलता का वास्तविक बोध करा देती है जिसको लक्ष्य कर व्यंग्य किया गया हैं। व्यंग्य, साहित्यकार के साथ का वह सचेतक चाबुक हैं, जिसकी मार से व्याकुल होकर व्यक्ति, संस्था अथवा समाज सही मार्ग पर चलने को बाध्य हो जाता है। वह नीति का कोरा उपदेश मात्र नहीं होता कि जिसे सुनो और तुरन्त भुला दो। वह तीखे बाण की ऐसी अणी हैं, जो मर्म में घुस कर सालती हैं, जिससे उसका लक्ष्य असहाय होकर तिलमिला उठता हैं।

हरिशंकर परसाई अपनी एक रचना में लिखते हैं 'एक बहुत वृद्ध पक्के गायक ने आँखे बंद करके दो घण्टे गाया। मैं सोचने लगा, इनकी इतनी लम्बी और ऐसे अच्छे स्वास्थ्य का कारण क्या हैं? समझ में आया, वे आँखे बन्द करके गाते हैं। अगर आँखे खोलकर गाते तो अपने श्रोताओं का हाल देखकर जवानी में ही वे हाय खाकर मर जाते।

भारत देश में बढ़ती आबादी को लेकर कई व्यंग्य किये गये है जिसमें परसाईजी द्वारा कुछ सुझाव के तौर पर दिया गया व्यंग्य अधिक असरकारक नजर आता है। बढ़ती जनसंख्या को रोकने के कई प्रयास आज भी चल रहे है पर ज्यादा फर्क नजर आया नहीं। जनता खुद जिम्मेदारी न लेकर सरकार को कुछ नये नियम लगाने का दबाव देती रहती है। सिर्फ आबादी ही नहीं गरीबी, बेकारी, साक्षरता आदी कई प्रश्न आज भी ज्यों के त्यों ही हैं। यहाँ देश की आबादी की और नजर करे तो 'भारत में जिस हिसाब से बच्चे पैदा हो रहे है, उस

हिसाब से मकान नहीं बन रहे हैं। सरकार को कानून बना देना चाहिए फिर हर बच्चा पैदा होने पर बाप को एक मकान बनवाकर देना होगा। इससे सन्तति–नियमन एकदम हो जायेगा और कुछ बन मकान भी जायेगे। कुछ लोग तो ऐसे निकलेगे जो मकान क्या, अनाथालय बनवा देंगे, पर सन्तति–निरोध नहीं करेगें। परसाई की इस रचना में व्यंग्य के माध्यम से बढ़ती आबादी को रोकने का प्रयास किया गाया हैं।

हमारे देश की संस्कृति त्योहारो से जूड़ी है जहाँ कई त्योहार तो मध्यमवर्गीय के लिये खुशी कम परेशानी ज्यादा लाते है। कुछ मध्यमवर्गीय को उच्चवर्गीय दिखावा करने की आदत है जिसकी परेशानी तो दुगुनी हो जाती है एसा कहना कुछ गलत भी नहीं क्यूकी कुछ त्योहार तो चंदे पर ही चलते है सभी में चंदे की रकम बराबर से त्योहार में ही खर्च होती होंगी यह एक सवाल हैं। पर जन्माष्टमी, होली, गणेश चतुर्थी आदी त्योहार चंदे पर निर्भर रहते है। परसाईजी चंदे को लेकर कुछ इस प्रकार लिखते है 'हम उनके पास चंदा मांगने गए थे। चंदे के पुराने अभ्यासी का चेहरा बोलता है। वे हमें भाँप गए। हम भी उन्हें भाँप गए। चंदा माँगनेवाले और देनेवाले एक दूसरे के शरीर कि गंध बखूबी पहचानते हैं। लिनेवाला गंध से जान लेता है कि यह देगा या नहीं। देनेवाला भी माँगनेवाले के शरीर की गंध से समझ लेता है कि यह बिना लिए टल जाएगा या नहीं। हमें बैठते ही समझ में आ गया कि ये नहीं देंगे। वे भी शायद समझ गए कि ये टल जाएंगे। फिर भी हम दोनों पक्षों को अपना कर्तव्य तो निभाना ही था। हमने प्राथना की तो वे बोले – आपको चंदे की पड़ी है, हम तो टेकसों के मारे मर रहे हैं।' यहाँ बात सिर्फ चंदे की नहीं बल्कि उन धनवानो की है जो चंदा देने से कतराते हैं। और भारीभरखम टैक्स भर भर कर मर रहे हैं। टैक्स बीमारी से मर रहे है फिर भी मजा आता हैं इस बीमारी का कोई इलाज भी नहीं हो सकता। शायद उसकी चिकित्सा पद्धति अलग हैं।

कई रूढ़िवादी समाज आज भी अपनी संतान को समाज से बाहर शादी की अनुमति नहीं देता। चाहे वह पात्र कितना ही सुशील क्यूं न हो। अड़चन सिर्फ एक है जो पत्थर की लकीर वन बेठती हैं। माता–पिता अपनी ही जाती का वर या कन्या होने का वजन अपने संतान पर ठोक बिठाते है। परसाई जी 'प्रेम की बिरादरी' रचना के माध्यम से हमें अपने विचार प्रगट करते हुए कहते है 'माता पिता की भावनाओं को मैं जानता हूँ। विश्वास और परम्परा के टूटने में बड़ा दर्द होता है। जब शेरपा तेनसिंह गौरीशंकर की चोटी पर होकर आया था तब उससे किसी ने पूछा कि क्या वहाँ शंकर भगवान हैं? तो उसने कहा था कि नहीं हैं। एक सज्जन बड़े दर्द से मुझसे बोले, 'तेनसिंह को ऐसा नहीं कहना चाहिए था।' मैंने कहा, वहाँ शंकर भगवान उसे नहीं दिखे तो उसने कह दिया कि नहीं हैं।' वे बोले, 'फिर भी उसे ऐसा नहीं कहना चाहिए था।' मैंने कहा, 'जब हैं ही नहीं तो...'।

हमारे समाज में कुछ चिजे तो ऐसी ही जो सभी जानते है कि केवल छल है फिर भी करने से कतई कतराते नहीं। क्यूकी यही जुनून बन चुका हैं। जैसे प्रसिद्ध व्यकित अपनी प्रसिद्धि को बढ़ाव देने की फिराक में यह भूल चूका है कि जनता बेवकूफ नहीं हैं। वह सब जानती हैं। वृक्षारोपण करते हुए कई ख्यातनाम व्यक्ति अखबार में दिखते है सभी जानते है उस वृक्ष का आगे क्यां भविष्य है यह ज्यादातर लोग समझते है जानते भी है। यह तो एक बात हुई वैसी कई बाते है जैसे भिखारी की मदद करना पर यही भिखारी के रहने की क्या व्यवस्था है यह कोई पूछता तक नहीं क्युंकी यह जानकारी लेना आवश्यक नहीं समझता।

अनाथालय में जाकर नये मकान का भूमि पूजन करने से लेकर रीबन काटने तक की प्रसिद्धि बटोरी

जाती है। वहाँ की तकलीफ या परेशानी की जानकारी का कोई उदेश्य नजर नहीं आता। परसाईजी कहते है – 'हर अच्छी चीज बैरंग हो जाती है। पिछले साल सफाई सप्ताह का उद्घाटन मेरे घर के पास ही हुआ था। अच्छी 'साइट' थी। वहाँ कचरे का एक बड़ा ढेर लगाया गया। फोटोग्राफर कोण और आकाश देख गया और तय कर गया कि मन्त्रीजी आये और दो चार फावड़े चलाकर सफाई सप्ताह का उद् घाटन होगा और हर साल चार फावड़े मारने से लगभग एक शताब्दी में यह कचरा साफ हो जायेगा। मैं इन्तजार कर सकता हूँ, पर इस साल दूसरी जगह चुन ली गयी।

कुछ व्यंग्य रचनाओं के माध्यम से यहाँ हम समझ सकते है कि समाज में बसे झूठे भ्रष्टाचारी, छल–कपट वाले लोग समाज को खोखला करते जा रहे है जिनको समझना है परखना है एवं सम्हल कर चलना हैं।

सन्दर्भ सूचि :

1. व्यंग्य और भारतेन्दु युगीन गध, डॉ. मांगीलाल उपाध्याय, पृ. 98
2. परसाई रचनावली – 1, सत्य साधक मण्डल, पृ. 190
3. परसाई रचनावली – 3, माना कि रहेंगे दिल्ली, पृ. 171
4. अपनी अपनी बीमारी, हरीशंकर परसाई, पृ. 7
5. परसाई रचनावली 3, प्रेम की बिरादरी, पृ. 50
6. परसाई रचनावली – 3, बैरंग शुभकामना और जनतंत्र, पृ. 59

मो. नं. 9429292766

E-MAIL : devasyaonline@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2026 Page No. : 186-193

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES PRINT RESEARCH JOURNAL

शासकीय प्राथमिक विद्यालय के बालक एवं बालिकाओं की आत्म –अवधारणा एवं अधिगम अभिप्रेरणा का तुलनात्मक अध्ययन

रूपानंद बारिक, शोधकर्ता
डॉ. सुषमा पांडे, निर्देशक
सहा प्राध्यापक, शिक्षा संकाय,
आई एस बी एम विश्वविद्यालय, छुरा, गरियाबंद (छत्तीसगढ़)

शोधसार :

प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य शासकीय प्राथमिक विद्यालयों में अध्ययनरत कक्षा पाँचवीं के बालक एवं बालिकाओं की आत्म-अवधारणा एवं अधिगम अभिप्रेरणा का तुलनात्मक एवं सहसंबंधात्मक अध्ययन करना था। अध्ययन हेतु छत्तीसगढ़ राज्य के बसना एवं सरायपाली विकासखंडों की शासकीय प्राथमिक शालाओं से कुल 230 विद्यार्थियों का न्यादर्श चयन किया गया, जिसमें 115 बालक एवं 115 बालिकाएँ सम्मिलित थे। अध्ययन में आत्म-अवधारणा एवं अधिगम अभिप्रेरणा के मापन हेतु मानकीकृत उपकरणों का प्रयोग किया गया। प्राप्त आँकड़ों का विश्लेषण मध्यमान, मानक विचलन, स्वतंत्र न्यादर्श t-परीक्षण तथा पियर्सन के गुणनफल सहसंबंध द्वारा किया गया। अध्ययन के परिणामों से ज्ञात हुआ कि बालक एवं बालिकाओं की आत्म-अवधारणा में सार्थक अंतर नहीं पाया गया। इसी प्रकार, अधिगम अभिप्रेरणा में भी दोनों समूहों के मध्य सार्थक अंतर नहीं पाया गया। आत्म-अवधारणा एवं अधिगम अभिप्रेरणा के मध्य सार्थक धनात्मक संबंध पाया गया। अतः निष्कर्षतः विद्यार्थियों की सकारात्मक आत्म-अवधारणा उनके अधिगम के प्रति अभिप्रेरणा से सकारात्मक रूप से संबंधित है। अध्ययन प्राथमिक स्तर पर विद्यार्थियों के समग्र विकास हेतु सकारात्मक शैक्षिक वातावरण एवं निरंतर प्रोत्साहन की आवश्यकता को रेखांकित करता है।

मुख्य शब्द : आत्म-अवधारणा, अधिगम अभिप्रेरणा, बालक, बालिका, शासकीय प्राथमिक विद्यालय

प्रस्तावना :

शिक्षा बालक के सर्वांगीण विकास की आधारभूत प्रक्रिया है। प्राथमिक स्तर पर बालक के व्यक्तित्व, व्यवहार, भावनाओं तथा सीखने की प्रवृत्तियों का क्रमिक विकास होता है। इस अवस्था

की मनोवैज्ञानिक विशेषताएँ उसके भावी शैक्षिक एवं सामाजिक जीवन को प्रभावित करती हैं। अतः प्राथमिक विद्यार्थियों के विकास को समझने में **आत्म-अवधारणा एवं अधिगम अभिप्रेरणा** का विशेष महत्व है। आत्म-अवधारणा व्यक्ति द्वारा अपने संबंध में निर्मित धारणाओं, विचारों एवं भावनाओं का समुच्चय है। अपनी क्षमताओं के प्रति विश्वास तथा स्वयं के व्यक्तित्व और कार्यक्षमता का मूल्यांकन इसके प्रमुख पक्ष हैं। सकारात्मक आत्म-अवधारणा बालक में आत्मविश्वास एवं सकारात्मक दृष्टिकोण के विकास में सहायक होती है। वहीं अधिगम अभिप्रेरणा वह आंतरिक एवं बाह्य प्रेरक शक्ति है, जो विद्यार्थी को सीखने, प्रयास करने तथा शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए सक्रिय करती है। सीखने में रुचि, लगन और कठिनाइयों का सामना करने की प्रवृत्ति इसके प्रमुख संकेतक हैं। बालक एवं बालिकाओं के सामाजिक, पारिवारिक अनुभवों तथा परिवेश में अंतर के कारण उनकी आत्म-अवधारणा एवं अधिगम अभिप्रेरणा में भिन्नता संभव है। अतः प्राथमिक स्तर पर दोनों के इन मनोवैज्ञानिक पक्षों का तुलनात्मक अध्ययन शैक्षिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है। प्रस्तुत अध्ययन में बालक एवं बालिकाओं की आत्म-अवधारणा तथा अधिगम अभिप्रेरणा के स्तर में पाए जाने वाले अंतर का अध्ययन किया गया है।

अध्ययन की आवश्यकता एवं महत्व :

प्राथमिक शिक्षा में विद्यार्थियों के व्यक्तित्व विकास एवं प्रभावी अधिगम के लिए आत्म-अवधारणा और अधिगम अभिप्रेरणा महत्वपूर्ण हैं। विद्यार्थियों की क्षमताओं के प्रति दृष्टिकोण तथा सीखने के प्रति उनकी रुचि और प्रयास उनके विद्यालयीन व्यवहार एवं अधिगम को प्रभावित करते हैं। बालक एवं बालिकाओं की सामाजिक एवं पारिवारिक परिस्थितियों में संभावित अंतर को देखते हुए इन दोनों समूहों की तुलना आवश्यक है। प्रस्तुत अध्ययन से शासकीय प्राथमिक विद्यालयों में बालक एवं बालिकाओं की मनोवैज्ञानिक विशेषताओं को समझने तथा उनके शैक्षिक विकास हेतु उपयुक्त मार्गदर्शन एवं सकारात्मक अधिगम वातावरण के निर्माण में उपयोगी आधार प्राप्त हो सकता है।

शोध की सीमाएँ :

- प्रस्तुत अध्ययन का क्षेत्र छत्तीसगढ़ राज्य के महासमुंद जिले के बसना 10 शासकीय प्राथमिक शालाओं एवं सरायपाली 10 शासकीय प्राथमिक शालाओं कुल 20 शालाओं की कक्षा पाँचवीं में अध्ययनरत विद्यार्थियों को सम्मिलित किया गया है।
- अध्ययन में कुल 230 कक्षा पाँचवीं 5-14 वर्ष आयु वर्ग के विद्यार्थियों का न्यादर्श लिया गया है, जिसमें बालक एवं बालिकाएँ सम्मिलित हैं।
- अध्ययन का केंद्र विद्यार्थियों की आत्म-अवधारणा एवं अधिगम अभिप्रेरणा के तुलनात्मक अध्ययन तक सीमित रखा गया है।
- आत्म-अवधारणा के मापन हेतु एस. पी. अहलूवालिया एवं एच. एस. सिंह द्वारा विकसित Children's Self Concept Scale (CSCS–AS) तथा अधिगम अभिप्रेरणा के मापन हेतु टी. आर. शर्मा द्वारा विकसित Academic Achievement Motivation Test (AAMT–ST), उपकरणों का प्रयोग किया गया है।

- प्राप्त आँकड़ों के विश्लेषण हेतु मध्यमान, मानक विचलन तथा स्वतंत्र न्यादर्श 't' परीक्षण जैसी उपयुक्त सांख्यिकीय विधियों का प्रयोग किया गया है।

प्रकार्यात्मक परिभाषा :

आत्मअवधारणा- –आत्मअवधारणा से आशय कक्षा पाँचवीं के विद्यार्थियों द्वारा अपने - व्यक्तित्व, क्षमताओं, योग्यताओं, व्यवहार तथा स्वयं के प्रति धारणाओं के संबंध में निर्मित समग्र धारणा से है।

अधिगम अभिप्रेरणा – अधिगम अभिप्रेरणा से आशय कक्षा पाँचवीं के विद्यार्थियों में सीखने के प्रति रुचि, उत्साह, प्रयास तथा सीखने की प्रक्रिया में सक्रिय रूप से संलग्न रहने की आंतरिक एवं बाह्य प्रेरक शक्ति से है।

बालक – प्रस्तुत अध्ययन में बालक से आशय चयनित शासकीय प्राथमिक शालाओं में कक्षा पाँचवीं में अध्ययनरत पुरुष विद्यार्थियों से है।

बालिका – प्रस्तुत अध्ययन में बालिका से आशय चयनित शासकीय प्राथमिक शालाओं में कक्षा पाँचवीं में अध्ययनरत महिला विद्यार्थियों से है।

शासकीय प्राथमिक शाला – शासकीय प्राथमिक शाला से आशय राज्य शासन द्वारा संचालित एवं मान्यता प्राप्त उन प्राथमिक शालाओं से है, जिनमें कक्षा पाँचवीं तक अध्ययन की व्यवस्था है।

आत्म-अवधारणा से संबंधित शोधों का समीक्षात्मक अध्ययन :

हुंडेकर (2011) ने प्राथमिक विद्यालयीन बच्चों की आत्म-अवधारणा एवं सामाजिक परिपक्वता का अध्ययन किया। अध्ययन में आत्म-अवधारणा का संबंध बच्चों की आयु, स्वास्थ्य संबंधी धारणा, आकांक्षा, पालन-पोषण की शैली तथा पारिवारिक परिस्थितियों से पाया गया। **सिंह एवं सरकार (2015)** ने प्राथमिक विद्यालय के बच्चों की शैक्षणिक आत्म-अवधारणा एवं गणितीय उपलब्धि के संबंध का अध्ययन किया। परिणामों से स्पष्ट हुआ कि शैक्षणिक आत्म-अवधारणा एवं गणितीय उपलब्धि के मध्य **सार्थक धनात्मक संबंध** पाया गया। **कुमारी एवं सांगवान (2022)** ने प्राथमिक स्तर के 400 बच्चों पर पारिवारिक संरचना के शैक्षणिक आत्म-अवधारणा पर प्रभाव का अध्ययन किया। अध्ययन में पारिवारिक संरचना एवं क्षेत्र के आधार पर आत्म-अवधारणा में अंतर पाया गया। **बर्नेट (1994)** ने प्राथमिक विद्यालयीन विद्यार्थियों में आत्म-अवधारणा एवं आत्म-सम्मान का अध्ययन किया तथा आत्म-अवधारणा को विद्यार्थियों की स्वयं के संबंध में धारणाओं से संबंधित पाया।

गुंटर एवं अन्य (2023) ने प्राथमिक कक्षाओं के विद्यार्थियों में शैक्षणिक आत्म-अवधारणा के निर्माण का अध्ययन किया और पाया कि उपलब्धि, रुचि तथा सामाजिक तुलना आत्म-अवधारणा के निर्माण से संबंधित हैं। पूर्ववर्ती भारतीय एवं विदेशी अध्ययनों से स्पष्ट होता है कि विद्यार्थियों की आत्म-अवधारणा उनके पारिवारिक परिवेश, विद्यालयीन वातावरण, रुचि, उपलब्धि एवं सामाजिक अनुभवों से संबंधित महत्वपूर्ण मनोवैज्ञानिक चर है। तथापि, बसना एवं सरायपाली विकासखंडों की शासकीय प्राथमिक शालाओं में कक्षा पाँचवीं के बालक एवं बालिकाओं की आत्म-अवधारणा का तुलनात्मक अध्ययन सीमित है, इसलिए वर्तमान अध्ययन का विशेष महत्व है।

अधिगम अभिप्रेरणा से संबंधित शोधों का समीक्षात्मक अध्ययन :

कुमारी एवं सांगवान (2022) ने प्राथमिक विद्यालयीन बच्चों में शैक्षणिक अभिप्रेरणा का अध्ययन किया। परिणामों से स्पष्ट हुआ कि पारिवारिक संरचना एवं क्षेत्र के आधार पर विद्यार्थियों की शैक्षणिक अभिप्रेरणा में अंतर पाया गया। **अल्फिया, इस्तियाती एवं मुल्योनों (2021)** ने कक्षा पाँचवीं के विद्यार्थियों में अधिगम अभिप्रेरणा को प्रभावित करने वाले कारकों का अध्ययन किया। अध्ययन में विषयवस्तु की अधिकता, सीखने की गतिविधियों में कम रुचि तथा शिक्षण विधि की कम आकर्षकता को अभिप्रेरणा को प्रभावित करने वाले प्रमुख कारकों के रूप में पाया गया **मिनो एवं अन्य (2011)** ने प्राथमिक विद्यार्थियों में अधिगम अभिप्रेरणा का अध्ययन किया और कक्षा स्तर बढ़ने के साथ अभिप्रेरणा में कमी तथा जिज्ञासा एवं आनंद का अभिप्रेरणा से सकारात्मक संबंध पाया। **कार्डिनल एवं अन्य (2013)** ने कक्षा 3 से 6 के विद्यार्थियों में अधिगम अभिप्रेरणा का अनुदैर्ध्य अध्ययन किया तथा कार्य-अभिमुखता, आत्म-प्रभावकारिता एवं विद्यालयीन संलग्नता में परिवर्तन पाया। **जोस एवं अन्य (2017)** ने प्राथमिक विद्यार्थियों में भाषा-अधिगम अभिप्रेरणा का अध्ययन किया और शिक्षक के सहयोग, अधिगम वातावरण एवं विद्यार्थियों की संलग्नता को अभिप्रेरणा से संबंधित पाया। पूर्ववर्ती भारतीय एवं विदेशी अध्ययनों से स्पष्ट होता है कि अधिगम अभिप्रेरणा विद्यार्थियों की रुचि, आत्म-प्रभावकारिता, पारिवारिक वातावरण, शिक्षक सहयोग तथा विद्यालयीन वातावरण से संबंधित महत्वपूर्ण कारक है। बसना एवं सरायपाली विकासखंडों की शासकीय प्राथमिक शालाओं में कक्षा पाँचवीं के बालक एवं बालिकाओं की अधिगम अभिप्रेरणा का तुलनात्मक अध्ययन सीमित है, इसलिए वर्तमान अध्ययन का विशेष महत्व है।

अध्ययन के उद्देश्य :

प्रस्तुत अध्ययन के निम्नलिखित उद्देश्य हैं—

- कक्षा पाँचवीं के शासकीय प्राथमिक शालाओं के बालकों की आत्मअवधारणा का अध्ययन - करना।
- कक्षा पाँचवीं की शासकीय प्राथमिक शालाओं की बालिकाओं की आत्मअवधारणा का - अध्ययन करना।
- कक्षा पाँचवीं के शासकीय प्राथमिक शालाओं के बालकों एवं बालिकाओं की आत्म-अवधारणा में अंतर का अध्ययन करना।
- कक्षा पाँचवीं के शासकीय प्राथमिक शालाओं के बालकों की अधिगम अभिप्रेरणा का अध्ययन करना।
- कक्षा पाँचवीं की शासकीय प्राथमिक शालाओं की बालिकाओं की अधिगम अभिप्रेरणा का अध्ययन करना।
- कक्षा पाँचवीं के शासकीय प्राथमिक शालाओं के बालकों एवं बालिकाओं की अधिगम अभिप्रेरणा में अंतर का अध्ययन करना।

परिकल्पनाएँ :

H□□ कक्षा पाँचवीं के शासकीय प्राथमिक शालाओं के बालकों एवं बालिकाओं की आत्म-अवधारणा के मध्यमान प्राप्तांकों में सार्थक अंतर नहीं पाया जाएगा।

H□□ कक्षा पाँचवीं के शासकीय प्राथमिक शालाओं के बालकों एवं बालिकाओं की अधिगम अभिप्रेरणा के मध्यमान प्राप्तांकों में सार्थक अंतर नहीं पाया जाएगा।

H□□ कक्षा पाँचवीं के शासकीय प्राथमिक शालाओं के विद्यार्थियों की आत्म-अवधारणा एवं अधिगम अभिप्रेरणा के मध्य सार्थक संबंध नहीं पाया जाएगा।

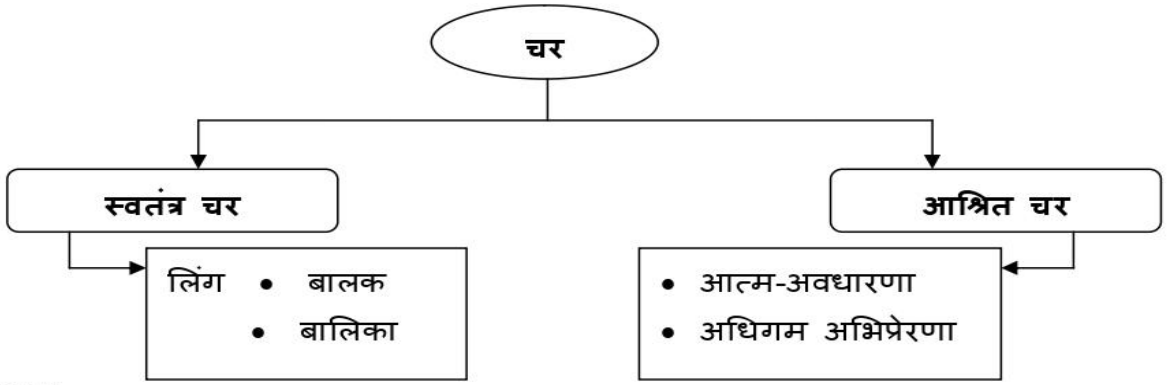
जनसंख्या :

प्रस्तुत अध्ययन की जनसंख्या में महासमुंद जिले के बसना एवं सरायपाली विकासखंडों की शासकीय प्राथमिक शालाओं में अध्ययनरत कक्षा पाँचवीं के समस्त विद्यार्थी सम्मिलित होंगे।

न्यादर्श :

अध्ययन हेतु बसना विकासखंड की **10** तथा सरायपाली विकासखंड की 10, कुल 20 शासकीय प्राथमिक शालाओं का चयन किया जाएगा। इन शालाओं से कक्षा पाँचवीं के कुल 230 विद्यार्थियों को न्यादर्श के रूप में सम्मिलित किया जाएगा, जिसमें बालक एवं बालिकाएँ दोनों शामिल होंगे।

चर :



उपकरण

क्रम	चर	उपकरण एवं निर्माता	वर्ष	विश्वसनीयता	वैधता
1	आत्म-अवधारणा	चिल्ड्रन्स सेल्फ-कॉन्सेप्ट स्केल (सी.एस.सी.एस.) एस. पी. अहलूवालिया	1986	परीक्षण-पुनःपरीक्षण विश्वसनीयता 0.88	विभिन्न उपमापों की वैधता 0.384 से 0.540 के मध्य
2	अधिगम अभिप्रेरणा	एकेडमिक अचीवमेंट मोटिवेशन टेस्ट (ए.ए.एम.टी.) टी. आर. शर्मा	1984	विभाजित-अर्ध 0.697, तार्किक समतुल्यता 0.75, परीक्षण-पुनःपरीक्षण 0.795 (बालक) एवं 0.80 (बालिका)	विषय-वस्तु, मानदंड-संबंधी एवं संरचना वैधता स्थापित

Bottom of Form

सांख्यिकीय विधियाँ :

प्राप्त आँकड़ों के विश्लेषण हेतु मध्यमान, मानक विचलन, स्वतंत्र न्यादर्श 't' परीक्षण तथा पियर्सन का गुणनफल सहसंबंध गुणांक का प्रयोग किया जाएगा। परिकल्पनाओं का परीक्षण 0.05 सार्थकता स्तर पर किया गया।

परिकल्पनाओं का परीक्षण :

परिकल्पना 1 : आत्म-अवधारणा :

समूह	N	मध्यमान	मानक विचलन	t	df	सार्थकता
बालक	115	51.39	8.61	0.033	228	0.974
बालिका	115	51.36	7.20			

निष्कर्ष: $p > 0.05$ होने के कारण H□□ **स्वीकृत** की गई। अतः बालक एवं बालिकाओं की आत्म-अवधारणा के मध्यमान प्राप्तांकों में **सार्थक अंतर नहीं पाया गया।**

परिकल्पना 2 : अधिगम अभिप्रेरणा :

समूह	N	मध्यमान	मानक विचलन	t	df	सार्थकता
बालक	115	19.89	4.86	-0.750	228	0.454
बालिका	115	20.34	4.27			

निष्कर्ष: $p > 0.05$ होने के कारण H□□ **स्वीकृत** की गई। अतः बालक एवं बालिकाओं की अधिगम अभिप्रेरणा के मध्यमान प्राप्तांकों में **सार्थक अंतर नहीं पाया गया।**

परिकल्पना 3 : आत्म-अवधारणा एवं अधिगम अभिप्रेरणा का संबंध :

चर	N	मध्यमान	मानक विचलन	Pearson r	df	सार्थकता
आत्म-अवधारणा	230	51.37	7.92	**0.434**	228	<0.001
अधिगम अभिप्रेरणा	230	20.11	4.57			

निष्कर्ष: $r = \mathbf{0.434}$, $p < 0.001$ होने के कारण H□□ **अस्वीकृत** की गई। अतः आत्म-अवधारणा एवं अधिगम अभिप्रेरणा के मध्य **सार्थक धनात्मक संबंध पाया गया।**

परिणामों की व्याख्या

आत्म-अवधारणा :

बालकों का मध्यमान 51.39 तथा बालिकाओं का मध्यमान 51.36 पाया गया। $t = 0.033$ तथा $p = 0.974$, जो 0.05 सार्थकता स्तर से अधिक है। अतः बालक एवं बालिकाओं की आत्म-अवधारणा में **सार्थक अंतर नहीं पाया गया।**

अधिगम अभिप्रेरणा :

बालकों का मध्यमान 19.89 तथा बालिकाओं का मध्यमान 20.34 पाया गया। $t = -0.750$ तथा $p = 0.454$ पाया गया, जो 0.05 से अधिक है। अतः बालक एवं बालिकाओं की अधिगम अभिप्रेरणा में **सार्थक अंतर नहीं पाया गया।**

आत्म-अवधारणा एवं अधिगम अभिप्रेरणा का संबंध :

दोनों चरों के मध्य $r = 0.434$ तथा $p < 0.001$ पाया गया। अतः आत्म-अवधारणा एवं अधिगम अभिप्रेरणा के मध्य **सार्थक धनात्मक संबंध पाया गया।** अर्थात् आत्म-अवधारणा का स्तर बढ़ने के साथ अधिगम अभिप्रेरणा में भी वृद्धि देखी गई।

उपसंहार :

प्रस्तुत अध्ययन में शासकीय प्राथमिक विद्यालयों में अध्ययनरत कक्षा पाँचवीं के 230 विद्यार्थियों की आत्मअभिप्रेरणा अवधारणा एवं अधिगम- का तुलनात्मक एवं सहसंबंधात्मक अध्ययन किया गया। अध्ययन में बालक एवं बालिकाओं की आत्मअवधारणा तथा अधिगम - साथ दोनों चरों के मध्य संबंध का भी अध्ययन किया गया।-अभिप्रेरणा की तुलना करने के साथ अध्ययन के परिणामों से स्पष्ट हुआ कि बालक एवं बालिकाओं की आत्मअवधारणा में कोई - सार्थक अंतर नहीं पाया गया। इसी प्रकार, दोनों समूहों की अधिगम अभिप्रेरणा में भी कोई सार्थक अंतर नहीं पाया गया। दूसरी ओर, आत्मअवधारणा एवं अधिगम अभिप्रेरणा के मध्य- सार्थक धनात्मक संबंध पाया गया। इससे स्पष्ट होता है कि विद्यार्थियों की सकारात्मक आत्म- अवधारणा उनके अधिगम के प्रति रुचि एवंअभिप्रेरणा से संबंधित है। अतः प्राथमिक स्तर पर विद्यार्थियों में सकारात्मक आत्मअवधारणा विकसित करने-, उनकी क्षमताओं पर विश्वास बढ़ाने तथा अधिगम के लिए उन्हें निरंतर प्रोत्साहित करने पर विशेष ध्यान दिया जाना आवश्यक है।

शैक्षिक उपादेयता :

प्रस्तुत अध्ययन से प्राप्त निष्कर्षों का उपयोग शिक्षकों, अभिभावकों एवं विद्यालय प्रशासन द्वारा विद्यार्थियों की सकारात्मक आत्मअवधारणा तथा अधिगम अभिप्रेरणा के विकास - में किया जा सकता है। विद्यार्थियों को प्रोत्साहन, समान अवसर एवं अपनी क्षमताओं को व्यक्त करने के अवसर प्रदान करने से उनके अधिगम को प्रभावी बनाया जा सकता है। अध्ययन के निष्कर्ष शिक्षकों को विद्यार्थियों की व्यक्तिगत आवश्यकताओं को समझने तथा उनके लिए अनुकूल शिक्षण वातावरण विकसित करने में सहायक होंगे।

संदर्भ-ग्रंथ :

- हुंडेकर, एस. (2011)। *प्राथमिक विद्यालयीन बच्चों की आत्म-अवधारणा एवं सामाजिक परिपक्वता का अध्ययन*। धारवाड़ विश्वविद्यालय।
- सिंह, आर., एवं सरकार, आर. (2015)। *प्राथमिक विद्यालय के बच्चों की शैक्षणिक आत्म-अवधारणा एवं गणितीय उपलब्धि का अध्ययन*। आंध्र प्रदेश।
- कुमारी, एवं सांगवान। (2022)। प्राथमिक विद्यालयीन बच्चों में पारिवारिक संरचना, शैक्षणिक अभिप्रेरणा एवं शैक्षणिक आत्म-अवधारणा का अध्ययन। *जर्नल ऑफ कंटेंट, कम्युनिटी एंड कम्युनिकेशन*।
- कादुगोल्ला जनजातीय समुदाय संबंधी अध्ययन। (2019)। प्राथमिक स्तर के विद्यार्थियों में आत्म-अवधारणा का अध्ययन। *जर्नल ऑफ इमर्जिंग टेक्नोलॉजीज एंड इनोवेटिव रिसर्च*।
- बर्नेट, पी. सी. (1994)। बच्चों में आत्म-अवधारणा एवं आत्म-सम्मान का अध्ययन। *ऑस्ट्रेलियन जर्नल ऑफ एजुकेशनल साइकोलॉजी, 4*(1), 1–10।
- सोतिरियू, सी. (2002)। किंडरगार्टन से प्राथमिक विद्यालय में संक्रमण के दौरान बच्चों की आत्म-अवधारणा का अनुदैर्ध्य अध्ययन। *शैक्षिक मनोविज्ञान संबंधी शोध*।

- वाडिंगटन, जे. (2019)। प्राथमिक विद्यालय के बच्चों में विदेशी भाषा संबंधी आत्म-अवधारणा का अध्ययन। *सिस्टम, 84*, 1–12।
- गुंटर, ए., एवं अन्य। (2023)। प्राथमिक विद्यालय के विद्यार्थियों में शैक्षणिक आत्म-अवधारणा का विकास। *लर्निंग एंड इंडिविजुअल डिफरेंसेस, 101*।
- अल्फिया, एन., इस्तियाती, एस., एवं मुल्योनों, डब्ल्यू. (2021)। कक्षा पाँचवीं के विद्यार्थियों में अधिगम अभिप्रेरणा को प्रभावित करने वाले कारकों का अध्ययन। *जर्नल ऑफ डिडैक्टिक्स एंड डिडैक्टिकल इनोवेशन*।
- कुमारी, एवं सांगवान। (2022)। प्राथमिक विद्यालयीन बच्चों में शैक्षणिक अभिप्रेरणा एवं पारिवारिक संरचना का अध्ययन। *जर्नल ऑफ कंटेंट, कम्युनिटी एंड कम्युनिकेशन*।
- मिनो, वाई., एवं अन्य। (2011)। जापानी प्राथमिक विद्यालयीन विद्यार्थियों में अधिगम अभिप्रेरणा एवं अंग्रेज़ी सीखने की अभिप्रेरणा का अध्ययन। *सिस्टम, 39*(4)।
- कार्डिनल, बी. जे., एवं अन्य। (2013)। प्राथमिक विद्यालयीन विद्यार्थियों में अभिप्रेरणा एवं विद्यालयीन संलग्नता का अनुदैर्ध्य अध्ययन। *लर्निंग एंड इंडिविजुअल डिफरेंसेस, 27*।
- जोस, जे., एवं अन्य। (2017)। प्राथमिक विद्यालयीन विद्यार्थियों में विदेशी भाषा अधिगम की अभिप्रेरणा एवं संलग्नता में परिवर्तन का अध्ययन। *लर्निंग एंड इंडिविजुअल डिफरेंसेस, 53*।

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2026 Page No. : 194-203

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES PRINT RESEARCH JOURNAL

Positive Learning Environments and Student Success : A Review of Equity, Diversity, and Inclusion in Education

Dimpi Singh

Research Scholar (Department of Education)

Pt. Ravishankar Shukla University, Raipur.

Abstract :

Positive education becomes evident when all students, teachers, and staff experience a safe, healthy, caring, and nurturing environment. It is a continuous process that, although demanding, is equally rewarding. Such an environment should emphasize the inherent dignity and value of every individual and ensure that equality is practiced in a manner that makes teaching and learning inclusive, dynamic, and progressive for all participants.

Equality promotes a positive learning atmosphere, where students and teachers become motivated and energized, both internally and externally, to maximize their potential. They take responsibility for their own learning while remaining sensitive to the needs of others. Such a climate enables differences to be respected and valued. A positive physical environment helps students feel healthy, safe, and protected. Classrooms should be free from harmful substances and unsafe materials. In addition, they should provide adequate lighting, proper ventilation, and freedom from unnecessary noise.

Schools should create an environment that is socially beneficial for teaching and learning. Students and adults should be familiar with behavioral expectations and their consequences. Within the school setting, learners should feel emotionally prepared to learn and express themselves freely. Continuous encouragement in the classroom can help students become flexible, independent learners who view challenges as opportunities for growth and development rather than obstacles. In a positive educational environment, learners can express their needs, emotions, goals, values, and aspirations effectively.

Keywords : Positive Education, Learning Environment, Diversity, Equity, Inclusion.

Introduction :

What qualities contribute to the creation of a positive educational environment? What does a positive learning environment mean? What elements does it include? Does it encompass diversity, equity, and inclusion? Who benefits from such an environment? These are important questions that deserve careful consideration.

Published research indicates that there is still a need for greater understanding of this subject. Professional literature has consistently highlighted the importance of positive educational environments and classroom settings. The present review examines a wide range of research papers, journal articles, and books related to this topic. Through a comparative review of different studies, the paper seeks to understand the significance and characteristics of positive learning environments. Researchers generally agree that creating positive learning spaces is essential. Such environments support and strengthen the teaching-learning process and contribute to educational effectiveness. Therefore, teachers, educational professionals, policymakers, and other stakeholders should carefully consider the importance of establishing positive educational settings.

Although creating and maintaining a positive learning environment is a challenging process, the literature strongly suggests that all members of society should make their best efforts to promote and sustain such environments. Positive educational settings not only enhance academic learning but also contribute to the overall well-being, growth, and development of students and educators alike.

Characteristics of the Learning Environment :

A positive and growth-oriented learning environment plays a vital role in promoting effective learning. According to Madden et al. (2019), positive emotions and constructive self-talk are important elements of the learning process and contribute significantly to educational growth. Similarly, Paekrun et al. (2017) argued that such environments stimulate metacognitive self-regulation during teaching and learning. Therefore, creating a positive learning environment is essential for meaningful educational experiences.

Fraser et al. (2007) and Sandilos et al. (2017) emphasized that the learning environment influences children's academic and social development. In addition, students perform more effectively when they feel physically and psychologically secure. A physically safe environment is free from unnecessary hazards and risks, such as broken glass or other dangerous materials. Psychological safety, on the other hand, enables students to participate confidently without fear of humiliation, embarrassment, or negative treatment by peers or teachers.

Uzor-Olson et al. (2017) maintained that students need to feel that they belong in the classroom

and that their presence is valued. When learners experience a sense of belonging, they become more engaged in learning activities. Cohen and Huppert (2018) further noted that students who feel appreciated and valued are more motivated to learn and participate actively, thereby improving learning outcomes.

An effective learning environment should also promote diversity, equity, and inclusion. These concepts form an integral part of educational settings that support all learners. Cortelyou et al. (2021) argued that social diversity and inclusion are closely connected and should be viewed as complementary elements. One of the primary goals of a positive learning environment is to reduce prejudice and discrimination while fostering mutual respect among individuals.

Diversity, Equity, and Inclusion in Education :

According to Cortelyou et al. (2021), diversity encompasses a wide range of human differences, including race, ethnicity, gender, sexual orientation, age, social class, physical abilities, religious beliefs, moral values, nationality, and political perspectives. Diversity acknowledges both the similarities and differences among individuals. A diverse environment is important because it encourages the acceptance of varied backgrounds and viewpoints while fostering creativity, innovation, and independent thinking.

The Annie E. Casey Foundation (2021) defines equity as a condition in which every individual is provided with fair opportunities for growth and development. Equity ensures that all people are treated justly and that individuals and groups receive the support necessary to succeed. It involves addressing barriers and ensuring that opportunities are accessible to everyone.

The foundation further describes inclusion as the process of ensuring that all individuals feel welcomed, respected, and valued within a shared environment. Inclusion allows people to participate fully and meaningfully in activities and decision-making processes. According to Cohen and Fuller (2021), inclusive environments recognize the inherent dignity and value of every individual and provide the support, encouragement, and resources necessary for them to reach their full potential.

Cortelyou et al. (2021) suggested that inclusion involves creating spaces where every person feels accepted and appreciated. Such environments can only be established when individuals become aware of their own unconscious biases and learn strategies to manage them effectively. Inclusive educational institutions are therefore essential because they help ensure that all students feel welcomed, respected, and capable of succeeding.

However, some researchers have pointed out that true inclusion has not yet been achieved in many educational systems. As a result, students from minority groups often continue to experience feelings of exclusion, isolation, and lower academic performance. This highlights the continuing

need to strengthen inclusive practices in educational settings.

Building Positive and Inclusive Educational Environments :

Zingilecki et al. (2023) suggested that teachers should use inclusive language, such as the pronoun "we," to build stronger and more immediate connections with students. Such language fosters a deeper sense of belonging and reinforces the social and emotional dimensions of learning. They further argued that collaborative learning environments encourage active participation and shared responsibility among learners.

Research has also shown that inclusive teaching incorporates diversity and equity, thereby enriching both teaching and learning experiences. Diversity provides opportunities for students and teachers to appreciate social and cultural differences. Cultural understanding can be promoted through discussions, digital projects, presentations, and celebrations of religious, national, and cultural traditions. Such practices allow students to share their cultural identities and learn to respect those of others.

Ohio State University (2023) emphasized the importance of using positive language in curricular materials and ensuring that diverse identities are represented within educational resources. Teaching materials should reflect multiple perspectives and experiences so that students can see themselves represented and develop a stronger sense of belonging. Inclusive curricula should also highlight the experiences and contributions of individuals from different racial, ethnic, and cultural backgrounds. Teachers can further support diversity, equity, and inclusion by incorporating case studies, vignettes, videos, and other resources that represent diverse viewpoints. Such practices encourage mutual respect among social groups and allow learners to share their own perspectives and experiences. Inclusive educational engagement can also be strengthened when students participate in establishing classroom expectations and community norms.

Special attention should be given to ensuring that underrepresented and marginalized groups are appropriately represented in educational content. Research suggests that certain groups, including young African males in some contexts, have historically faced educational disadvantages because of social and systemic factors. Highlighting stories of achievement and success from underrepresented communities can help challenge stereotypes and empower learners.

The principles of Universal Design for Learning (UDL) provide useful guidance for designing curricula that meet the needs of diverse learners. UDL emphasizes representation, engagement, and expression, ensuring that educational experiences remain accessible and meaningful for all students. Inclusive education is not merely an instructional concern but also an issue of social justice. Consequently, curriculum design and educational resources should be developed with accessibility

and inclusion in mind.

The Web Accessibility Initiative also recommends that digital learning materials adhere to accessibility principles. According to these guidelines, online content should be perceivable, operable, understandable, and robust (POUR). For example, alternative text should be provided for non-text content, layouts should be adaptable, and interfaces should be easy to navigate without creating unnecessary physical or cognitive barriers.

Adequate Teaching Classrooms :

It is essential that teachers, students, parents, and other stakeholders remain actively involved in the continuous process of creating and sustaining positive educational environments. Establishing positive relationships in education requires meaningful and effective communication, including an understanding of students' diverse personalities, backgrounds, and individual characteristics. These interactions may occur both individually and within groups.

Teachers should consistently emphasize positive aspects of learning and present challenges as opportunities for growth and development rather than focusing on negative outcomes. They can foster a strong sense of belonging and establish caring classroom communities that encourage student participation and engagement. According to Bergin (2016), teachers should remain attentive to students' voices and experiences, listening thoughtfully and respectfully to what learners communicate.

Classroom expectations and rules should be clearly explained and reinforced. Students need to understand not only the rules themselves but also the consequences associated with following or violating them. Thornton (2018) observed that a positive classroom climate significantly influences relationships among students, the learning process, and the overall school environment. Therefore, teachers are encouraged to avoid negative language whenever possible and instead use constructive, encouraging forms of communication.

For example, rather than saying, "Do not disrespect other students," a teacher might say, "Please treat all students with respect." Although this difference may appear minor, research suggests that positively framed language often has a stronger impact on student behavior and classroom culture. Such communication promotes unconditional respect for all learners and strengthens students' internal motivation. As a result, positive interactions contribute to a supportive atmosphere in which students feel encouraged to participate and succeed.

Researchers have also noted that encouraging students during challenging situations can be highly beneficial. Sufficient time should be devoted to celebrating learning, recognizing effort, and reinforcing positive behaviors. It is important to remember that every classroom is unique because students bring diverse experiences, abilities, and perspectives into the learning environment.

Inclusive Classrooms :

UNESCO (2017) emphasized that inclusive education involves integrating values, ideas, and practices that ensure all students receive meaningful and effective educational opportunities. Inclusion guarantees that every learner is provided with equitable access to learning and is able to participate fully in educational experiences. Furthermore, inclusive education recognizes and appreciates the unique contributions of every student.

When inclusive classrooms function effectively, students learn and grow together. UNESCO (2019) further highlighted that learners from diverse backgrounds—including students with disabilities, those with special educational needs, women, minority groups, and learners at risk of exclusion—should all be educated within supportive and inclusive classroom environments.

According to Dalton (2017), intercultural sensitivity includes emotional awareness, behavioral competence, and cognitive understanding. These qualities help educators recognize and respond to cultural differences effectively. Intercultural awareness is essential for supporting students from varied cultural backgrounds and promoting effective teaching practices across diverse educational contexts. Educational policies should therefore acknowledge not only students' identities and cultural backgrounds but also the broader communities to which they belong.

Dalton (2017) also argued that one of the primary goals of inclusion is to value the cultural knowledge and experiences that students bring into the classroom. Teachers who adopt inclusive practices accept and respect all learners while ensuring that different social and cultural perspectives are represented in curriculum activities and discussions. It is therefore important for educators to establish classroom environments that actively promote diversity, equity, and inclusion.

Teachers should eliminate prejudice from learning resources and incorporate literature and materials that promote fairness and equality. This can be achieved by listening to students, supporting their participation, validating their experiences, and encouraging them to engage confidently in classroom activities. Inclusive classrooms are strengthened when teachers critically examine their own assumptions and beliefs and remain willing to challenge stereotypes and discriminatory attitudes.

Creating an inclusive environment also requires teachers to learn about their students personally, address them respectfully by name, acknowledge their presence, and value their viewpoints. Such practices encourage students to perform at their best and develop stronger connections with their learning community. Meaningful communication, student voice, and opportunities for self-expression are therefore central components of inclusive education.

Teachers can further support inclusion by incorporating the principles of diversity, equity, and inclusion into lesson planning and classroom management. Schools, classrooms, and teaching practices

should reflect the interests and needs of all learners. Educational decision-making should be participatory and responsive to student experiences. Research suggests that students become more engaged when they feel their voices are heard and their experiences are valued. Such engagement helps reduce barriers related to diversity, equity, and inclusion while contributing to more effective educational policies and practices.

Group work and collaborative projects also contribute to inclusive learning. Studies indicate that students tend to become more involved, motivated, and enthusiastic when they participate in cooperative learning experiences. Collaboration encourages peer support, improves preparation for academic and professional life, and helps students develop social and interpersonal skills. When learners feel appreciated and respected, they are more likely to perform successfully and participate actively in educational activities.

Diversity-Centered and Relationship-Based Teaching :

Julian (2021) observed that education becomes more meaningful when students experience greater autonomy and freedom in their learning. Such learners are more likely to become self-motivated, creative, independent, and self-directed. Educators should therefore consider teaching approaches that promote student agency while maintaining inclusive and supportive learning environments.

Researchers have proposed several approaches for promoting diversity and inclusion within higher education and school settings. One important recommendation is that teachers critically reflect on how their own social and cultural experiences influence their teaching practices. Through this process, educators can better understand how curriculum content may either support or hinder inclusion. Teachers may even share aspects of their own social identities and experiences when appropriate, helping students understand diversity through authentic examples.

A diversity-centered approach encourages educators to view culture as an important factor influencing behavior, communication, and learning. Such an approach helps teachers examine how cultural assumptions shape educational practices and curriculum development. Curriculum descriptions should explicitly acknowledge diversity and inclusion, and educational institutions should provide opportunities for faculty and staff to develop competencies related to inclusive teaching.

Researchers have further argued that developing strong relationships may be one of the most important aspects of inclusive education. Inclusion fundamentally involves communication, understanding, and appreciation of others. Becoming aware of different perspectives and valuing individual experiences contributes significantly to creating educational environments where all students feel respected and supported.

Ideal Classrooms :

An ideal classroom is one in which every student feels safe, respected, valued, and supported in the learning process. Such classrooms are characterized by positive interactions, mutual respect, and meaningful participation. The learning environment should encourage students to express their ideas, ask questions, and engage actively in educational activities without fear of criticism or discrimination.

In an ideal classroom, diversity is viewed as a strength rather than a challenge. Students from different social, cultural, linguistic, and educational backgrounds are welcomed and encouraged to contribute their unique perspectives. Teachers create opportunities for collaboration, communication, and shared learning experiences that help students appreciate and respect one another's differences.

Effective classrooms also provide opportunities for students to develop social, emotional, and academic competencies. Teachers act as facilitators who guide learning, encourage critical thinking, and support the overall development of learners. Positive teacher-student relationships form the foundation of such classrooms, helping students feel connected, motivated, and confident in their abilities.

The literature reviewed in this study indicates that ideal classrooms are inclusive, equitable, and learner-centered. These classrooms support the development of positive attitudes, self-confidence, cooperation, and lifelong learning skills. When students experience belongingness and acceptance, they are more likely to engage actively in learning and achieve academic success.

Methodology :

The present study adopted a review-based research approach. Relevant literature related to positive educational environments, diversity, equity, inclusion, and classroom culture was collected from various sources, including research articles, academic journals, books, reports, and online educational resources.

The collected literature was carefully examined and analyzed to identify major themes, concepts, and findings related to positive learning environments. Comparative analysis was used to understand similarities and differences among various studies and to synthesize key ideas presented by different researchers.

The review focused on understanding the characteristics of positive educational environments, the role of diversity, equity, and inclusion, and the strategies that can be adopted to create supportive and effective classrooms. Through this review process, the study aimed to develop a comprehensive understanding of factors that contribute to successful educational experiences.

Results and Discussion :

The review of literature reveals that positive educational environments have a significant influence on student learning, participation, motivation, and overall development. Research consistently demonstrates that students perform more effectively when they feel physically safe, emotionally secure, and socially accepted within the educational setting.

The findings further indicate that diversity, equity, and inclusion are essential components of positive learning environments. Educational settings that recognize and respect individual differences contribute to stronger student engagement, improved relationships, and greater academic achievement. Inclusive practices help eliminate barriers that may prevent students from participating fully in learning experiences.

The reviewed studies also emphasize the important role of teachers in shaping classroom culture. Teachers who use positive communication, encourage collaboration, respect student diversity, and foster supportive relationships contribute significantly to the creation of effective learning environments. Their actions influence not only academic achievement but also students' emotional well-being and social development.

Another important finding is that educational institutions must move beyond merely acknowledging diversity and actively implement policies and practices that support equity and inclusion. Curriculum design, instructional methods, classroom management practices, and educational resources should all reflect inclusive values and provide opportunities for meaningful participation by all learners.

The literature also highlights the importance of accessibility in education. Universal Design for Learning and accessible educational technologies can help ensure that students with diverse needs are able to participate effectively in learning activities. As educational environments become increasingly diverse, institutions must continue adapting their practices to meet the needs of all learners.

Overall, the findings suggest that positive educational environments contribute not only to academic success but also to the development of responsible, confident, and socially aware individuals. Such environments promote personal growth, mutual respect, and lifelong learning.

Conclusion :

A positive educational environment is fundamental to effective teaching and learning. The literature reviewed in this study demonstrates that positive classroom culture, diversity, equity, and inclusion are closely interconnected and collectively contribute to student success. Educational environments that prioritize safety, belongingness, respect, and support create conditions that enable all learners to thrive.

The review further indicates that inclusive educational practices benefit not only students but also teachers, institutions, and society as a whole. By recognizing and valuing diversity, educational communities can create learning spaces that promote fairness, participation, and equal opportunities for all.

Teachers play a central role in fostering positive classroom cultures. Through respectful communication, inclusive teaching practices, collaborative learning opportunities, and supportive relationships, educators can help students reach their full potential. Educational institutions should therefore continue investing in policies, professional development, and resources that strengthen positive and inclusive learning environments.

In conclusion, positive classroom culture serves as a foundation for student success. When educational environments are designed to be inclusive, equitable, accessible, and supportive, students are better equipped to achieve academic excellence, develop social responsibility, and become lifelong learners.

References :

- Altman, S., Bean, C., Irvin, A., & Jungels, A. (2018). Inclusive teaching guide: Resources and technology. Columbia University Center for Teaching and Learning. https://ctl.columbia.edu/resources-and-technology/resources/inclusive-teaching-guide/
- Ariyani, D., Suyatno, & Zuhaery, M. (2021). Principal's innovation and entrepreneurial leadership to establish a positive learning environment. European Journal of Educational Research, 10(1), 63–74. https://doi.org/10.12973/eu-jer.10.1.63
- Coplan, C., & Kaye, T. (2020). Using education technology to support learners with special educational needs and disabilities in low- and middle-income countries. EdTech Hub. https://doi.org/10.53832/edtechhub.0021
- Cohen, L., & Huppert, J. D. (2018). Positive emotions and social anxiety: The role of pride. Cognitive Therapy and Research, 42, 524–538. https://doi.org/10.1007/s10608-018-9900-2
- Dalton, E. M. (2017). Universal design for learning: Guiding principles to reduce barriers in digital and media literacy competence. Journal of Media Literacy Education, 9(2), 17–29. https://doi.org/10.23860/JMLE-2019-09-02-02
- Ertmer, P. A., & Newby, T. J. (1993). Behaviorism, cognitivism, constructivism: Comparing critical features from an instructional design perspective. Performance Improvement Quarterly, 6(4), 50–72. https://doi.org/10.1111/j.1937-8327.1993.tb00605.x
- Fraser, B. J., Pekrun, R., & Goetz, T. (2007). Learning environments and students' emotional experiences: A multilevel analysis of mathematics classrooms. Learning and Instruction, 17(5), 478–493.
- UNESCO. (2017). A guide for ensuring inclusion and equity in education. UNESCO.
- World Wide Web Consortium. (2018). Web content accessibility guidelines (WCAG) 2.1. W3C. https://www.w3.org/TR/WCAG21/

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2026 Page No. : 204-209

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES PRINT RESEARCH JOURNAL

छायावाद : उद्भव, विकास, प्रमुख प्रवृत्तियाँ और हिंदी काव्य में उसका योगदान

श्याम लाल

(एम.ए.हिन्दी) जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय – जोधपुर।

NET – UGC (हिन्दी)

सारांश :-

छायावाद : उद्भव, विकास, प्रमुख प्रवृत्तियाँ और हिंदी काव्य में उसका योगदान सारांष हिन्दी साहित्य के आधुनिक काल में छायावाद एक ऐसी महत्वपूर्ण काव्यधारा है जिसने हिंदी कविता को नवीन संवेदना, कल्पना, सौंदर्य–बोध, प्रकृति–चेतना, आत्मानुभूति और भाषिक अभिव्यक्ति प्रदान की। सामान्यतः छायावाद का विकास बीसवीं शताब्दी के आरंभिक दषकों में माना जाता है और लगभग 1918 से 1936 तक इसका प्रभाव विशेष रूप से दिखाई देता है। जयशंकर प्रसाद, सुमित्रानंदन पंत, सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' और महादेवी वर्मा को छायावाद के चार प्रमुख स्तंभ माना जाता है। इन कवियों ने हिंदी कविता को केवल विषय की दृष्टि से ही नहीं, बल्कि भाषा, बिंब, प्रतीक, छंद और काव्य–दृष्टि की दृष्टि से भी नया रूप प्रदान किया। छायावाद के केंद्र में मनुष्य का अंतर्जगत है। व्यक्ति की अनुभूति, कल्पना, प्रेम, सौंदर्य, प्रकृति और रहस्य के माध्यम से कवियों ने जीवन के गहरे प्रश्नों को अभिव्यक्त किया। साथ ही छायावादी कविता को केवल पलायनवादी या रहस्यवादी कविता मानना पर्याप्त नहीं है। इसके भीतर राष्ट्रीय चेतना, सामाजिक संवेदना, मानवीय स्वतंत्रता और व्यक्ति की गरिमा के स्वर भी उपस्थित हैं। नामवर सिंह ने छायावाद की काव्यगत विशेषताओं के साथ उसमें निहित सामाजिक मूल्य को समझने पर विशेष बल दिया है। उनकी पुस्तक 'छायावाद' पहली बार 1955 में प्रकाशित हुई थी और बाद के संस्करणों में लगभग 154 पृष्ठ हैं।

बीज शब्द : छायावाद, जयशंकर प्रसाद, सुमित्रानंदन पंत, निराला, महादेवी वर्मा, प्रकृति, रहस्यवाद, सौंदर्यबोध, आत्मानुभूति, हिंदी कविता।

हिंदी साहित्य का आधुनिक काल अनेक साहित्यिक आंदोलनों और प्रवृत्तियों के विकास का काल है। भारतेंदु युग ने आधुनिक चेतना का आरंभ किया, द्विवेदी युग ने भाषा, राष्ट्रीयता, नैतिकता और सामाजिक उपयोगिता को महत्व दिया और इसके बाद हिंदी कविता में एक ऐसी काव्यधारा का विकास हुआ जिसमें मनुष्य के बाह्य जीवन की अपेक्षा उसके अंतर्मन, कल्पना और अनुभूति को विशेष महत्व मिला। यही काव्यधारा आगे चलकर छायावाद के नाम से प्रसिद्ध हुई। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने आधुनिक हिंदी कविता की प्रवृत्तियों के संदर्भ

में छायावाद का विश्लेषण करते हुए उसके दो प्रमुख अर्थों की ओर संकेत किया हैकृएक ओर रहस्यमय अनुभूति और दूसरी ओर एक विशेष काव्य–शैली या प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति। (हिंदी साहित्य का इतिहास, रामचंद्र शुक्ल, पृ. 650–654) छायावाद ने हिंदी कविता को परंपरागत वर्णनात्मकता से मुक्त करके अनुभूति और कल्पना की ओर उन्मुख किया। कवि ने प्रकृति को केवल बाहरी दृश्य के रूप में नहीं देखा, बल्कि उसे अपने मन की संवेदनाओं का प्रतीक बनाया। इसलिए छायावादी कविता में प्रकृति और मानव–मन का गहरा संबंध दिखाई देता है।

- **छायावाद : अर्थ और परिभाषा :**

'छायावाद' शब्द अपने आप में बहुअर्थी है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल के अनुसार इसका एक अर्थ ऐसी काव्य–पद्धति से है जिसमें प्रस्तुत के स्थान पर उसकी व्यंजना करने वाली छाया के रूप में अप्रस्तुत का कथन किया जाता है। इस दृष्टि से प्रतीक, बिंब और संकेत छायावादी अभिव्यक्ति के महत्वपूर्ण साधन बन जाते हैं। छायावाद को केवल रहस्यवाद मानना भी उचित नहीं है। छायावादी कविता में रहस्यमयता अवश्य है, किंतु उसके साथ प्रकृति–प्रेम, सौंदर्य–बोध, प्रेम, आत्म–संघर्ष, राष्ट्रीय चेतना और मानवीय संवेदना भी जुड़ी हुई है। नामवर सिंह ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'छायावाद' में इस काव्यधारा को व्यापक ऐतिहासिक और सामाजिक संदर्भ में देखने का प्रयास किया। पुस्तक 1955 में प्रकाशित हुई थी और इसमें छायावादी कविता की सामान्य प्रवृत्तियों के साथ उसके सामाजिक आधार की भी व्याख्या की गई है।

- **छायावाद का उद्‌भव :**

छायावाद के उद्‌भव के पीछे अनेक साहित्यिक, सामाजिक और सांस्कृतिक कारण थे। द्विवेदी युग की कविता में भाषा की शुद्धता, नैतिकता, राष्ट्रीयता और उपयोगिता को विशेष महत्व प्राप्त था। इसके परिणामस्वरूप कविता में व्यक्तिगत अनुभूति और कल्पना के लिए अपेक्षाकृत कम स्थान बचा था। छायावाद ने इसी स्थिति के विरुद्ध एक नवीन काव्यात्मक प्रतिक्रिया प्रस्तुत की। पाश्चात्य साहित्य में स्वच्छंदतावाद, प्रतीकवाद और रहस्यवाद की धाराओं का भी हिंदी के साहित्यिक वातावरण पर प्रभाव पड़ा। साथ ही बंगाल के साहित्यिक नवजागरण और रवींद्रनाथ ठाकुर की काव्य–चेतना ने हिंदी के नए कवियों को प्रभावित किया। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने छायावाद के संदर्भ में बंगाल, रहस्यवादी काव्य और यूरोपीय प्रतीकवाद के प्रभावों की चर्चा की है। (हिंदी साहित्य का इतिहास, पृ. 650–653)। फिर भी छायावाद को केवल विदेषी प्रभाव का परिणाम मानना उचित नहीं होगा। भारतीय दार्षनिक परंपरा, भक्ति– काव्य, संस्कृत काव्यशास्त्र, प्रकृति–संवदेना और भारतीय सांस्कृतिक चेतना ने भी इसके निमार्ण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

- **छायावाद की प्रमुख विशेषताएँ :**

आत्मानुभूति छायावादी कविता की सबसे प्रमुख विशेषता आत्मानुभूति है। कवि बाहरी संसार का वर्णन करने के स्थान पर अपने भीतर घटित होने वाले भावों को व्यक्त करता है। सुख–दुःख, प्रेम–विरह, आशा–निराशा और जीवन के रहस्य की अनुभूति उसके काव्य का आधार बनती है। छायावादी कवि का 'मैं' केवल निजी अहं नहीं है। अनेक स्थानों पर व्यक्तिगत अनुभूति व्यापक मानवीय अनुभूति में बदल जाती है। इसीलिए छायावादी कविता की आत्मपरकता पाठक के लिए भी संवेदनात्मक अनुभव बन जाती है। प्रकृति–प्रेम छायावाद में प्रकृति का अत्यंत महत्त्वपूर्ण स्थान है। प्रकृति केवल दृश्य–वर्णन का विषय नहीं है; वह कवि के मन की संवेदना की

सहचरी है। पर्वत, नदी, बादल, चाँद, उषा, संध्या, पवन और फूलों के माध्यम से कवि अपने मन की विभिन्न अवस्थाओं को व्यक्त करता है। सुमित्रानंदन पंत की कविता में प्रकृति का सौंदर्य विशेष रूप से दिखाई देता है। पंत के लिए प्रकृति जीवन और सौंदर्य की महान शक्ति है। उनकी आरंभिक कविता में प्रकृति के प्रति आकर्षण इतना व्यापक है कि उन्हें प्रकृति का सुकुमार कवि कहा गया। रहस्यवाद छायावाद में रहस्यात्मक अनुभूति भी महत्त्वपूर्ण है। अज्ञात, अनंत और अदृश्य सत्ता के प्रति आकर्षण अनेक छायावादी कविताओं में दिखाई देता है।

विशेष रूप से महादेवी वर्मा की कविता में अज्ञात प्रियतम की खोज और विरह की अनुभूति रहस्यात्मक स्वर ग्रहण करती है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने छायावाद और रहस्यवाद के संबंध को स्पष्ट करते हुए बताया है कि रहस्यवाद में कवि अज्ञात या अनंत प्रियतम को आलंबन बनाकर प्रेम और अनुभूति की अभिव्यक्ति करता है। (हिंदी साहित्य का इतिहास, पृ. 650–653) सौंदर्य–बोध छायावादी कविता में सौंदर्य की व्यापक चेतना है। यह सौंदर्य केवल शारीरिक या प्राकृतिक सौंदर्य तक सीमित नहीं है। उसमें भावों, कल्पना, मानवीय संबंधों और जीवन के सूक्ष्म अनुभवों का सौंदर्य भी सम्मिलित है। जयशंकर प्रसाद की कविता में सौंदर्य और दर्शन का सुंदर समन्वय मिलता है। पंत के यहाँ प्रकृति–सौंदर्य प्रमुख है, निराला के यहाँ सौंदर्य जीवन–संघर्ष से जुड़ता है और महादेवी के यहाँ सौंदर्य करुणा एवं विरह की अनुभूति से जुड़ जाता है। कल्पना और प्रतीक छायावादी कवियों ने कल्पना को काव्य का प्रमुख साधन बनाया। सीधे कथन की अपेक्षा संकेत, प्रतीक और बिंब के माध्यम से भाव व्यक्त किए गए। इस कारण छायावादी कविता में अर्थ की अनेक परतें दिखाई देती हैं। आचार्य शुक्ल ने छायावादी शैली में अप्रस्तुत के माध्यम से प्रस्तुत को व्यक्त करने की प्रवृत्ति की ओर संकेत किया है। यही प्रवृत्ति प्रतीकात्मक और चित्रात्मक भाषा को जन्म देती है। (हिंदी साहित्य का इतिहास, पृ. 650–654) भाषा और शिल्प छायावाद ने हिंदी काव्य–भाषा को अत्यंत समृद्ध किया। कोमल, संगीतात्मक, चित्रात्मक और व्यंजना–प्रधान भाषा छायावादी कविता की पहचान बनी। संस्कृतनिष्ठ शब्दावली के साथ–साथ लोकप्रचलित शब्दों का भी प्रयोग मिलता है। निराला ने भाषा और छंद के क्षेत्र में विशेष प्रयोग किए। उनकी कविता ने परंपरागत छंद–व्यवस्था को चुनौती दी और मुक्त छंद के विकास में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। नामवर सिंह की छायावाद में रूप–विन्यास, पद–विन्यास और छंद के विकास पर विशेष चर्चा मिलती है।

- **छायावाद के चार प्रमुख कवि :**

जयशंकर प्रसाद जयशंकर प्रसाद छायावाद के प्रमुख कवि, नाटककार और कथाकार थे। उनकी काव्य–दृष्टि में इतिहास, संस्कृति, दर्शन, प्रेम और सौंदर्य का समन्वय मिलता है। कामायनी उनकी सर्वाधिक प्रसिद्ध कृति है। प्रसाद की काव्य–चेतना में मानव जीवन के संघर्ष और उसके मानसिक विकास का व्यापक चित्रण है। कामायनी में मनु, श्रद्धा और इड़ा के माध्यम से मानव जीवन की विभिन्न शक्तियों और मानसिक अवस्थाओं का प्रतीकात्मक चित्रण किया गया है। प्रसाद की विशेषता यह है कि वे छायावादी सौंदर्य और रहस्य को दार्शनिक गहराई से जोड़ते हैं। उनकी भाषा संस्कृतनिष्ठ होते हुए भी अत्यंत काव्यात्मक है। सुमित्रानंदन पंत सुमित्रानंदन पंत को प्रकृति और सौंदर्य का कवि कहा जाता है। उनकी आरंभिक रचनाओं में हिमालय, पर्वत, बादल, फूल, पवन और आकाश के माध्यम से प्रकृति का अत्यंत मनोहारी चित्रण मिलता है। पंत की कविता में प्रकृति धीरे–धीरे मानवीय चेतना से जुड़ती जाती है। आगे चलकर उनकी काव्य–दृष्टि में सामाजिकता, मानवतावाद और प्रगतिशील विचार भी विकसित हुए। इस प्रकार पंत का साहित्य छायावाद की सीमाओं से आगे

बढ़कर व्यापक मानवीय चेतना का प्रतिनिधित्व करता है। सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' निराला छायावादी युग के सबसे विद्रोही और प्रयोगशील कवियों में गिने जाते हैं। उनकी कविता में आत्मानुभूति, प्रकृति, प्रेम और सौंदर्य के साथ सामाजिक विषमता तथा मानवीय संघर्ष भी उपस्थित हैं। निराला ने हिंदी कविता को मुक्त छंद और नई अभिव्यक्ति का साहस दिया। उनकी कविता में व्यक्ति की स्वतंत्रता और रूढ़ियों के विरोध की चेतना दिखाई देती है। इस कारण वे केवल छायावादी कवि न रहकर आधुनिक हिंदी कविता के संक्रमणकारी और परिवर्तनकारी कवि बन जाते हैं। 5.4 महादेवी वर्मा महादेवी वर्मा छायावाद की प्रमुख कवयित्री हैं। उनकी कविता में वेदना, विरह, करुणा, रहस्य और आध्यात्मिक अनुभूति का अद्वितीय समन्वय है। उनकी कविता का 'प्रिय' अक्सर अनाम और अज्ञात है। इसी कारण उनकी कविता में प्रतीक्षा और विरह की अनुभूति व्यापक रूप लेती है। महादेवी की भाषा अत्यंत संगीतात्मक और कोमल है। उनके काव्य में नारी–संवेदना और मानवीय करुणा का भी महत्वपूर्ण स्थान है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने छायावादी शैली के संदर्भ में महादेवी वर्मा की विशिष्ट स्थिति का उल्लेख किया है और पंत, प्रसाद तथा निराला को प्रतीक–पद्धति और चित्रभाषा की दृष्टि से छायावादी कवियों के रूप में देखा है। (हिंदी साहित्य का इतिहास, पृ. 694 के आसपास)

- **छायावाद और राष्ट्रीय चेतना :**

छायावाद को केवल व्यक्तिगत भावुकता का साहित्य समझना उसके व्यापक स्वरूप को सीमित करना होगा। इस युग में भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन की पृष्ठभूमि थी। इसलिए अनेक छायावादी रचनाओं में प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से राष्ट्रीय चेतना दिखाई देती है। जयशंकर प्रसाद की रचनाओं में भारतीय इतिहास और संस्कृति के प्रति गौरव की भावना मिलती है। निराला की कविता में स्वतंत्रता, विद्रोह और सामाजिक न्याय के स्वर अधिक स्पष्ट हैं। पंत की कविता में भी आगे चलकर मानवतावादी और राष्ट्रीय चेतना विकसित हुई। इस प्रकार छायावादी आत्मानुभूति सामाजिक और राष्ट्रीय जीवन से पूरी तरह अलग नहीं थी। व्यक्ति की स्वतंत्रता की आकांक्षा व्यापक स्तर पर राष्ट्र और समाज की स्वतंत्रता की आकांक्षा से जुड़ती है।

- **छायावाद और नारी–संवेदना :**

छायावाद के अध्ययन में नारी–संवेदना विशेष महत्व रखती है। महादेवी वर्मा ने नारी के जीवन, उसकी पीड़ा, स्वतंत्रता और अस्तित्व को अपने गद्य और काव्य में अभिव्यक्त किया। महादेवी की काव्य–भाषा में विरह और करुणा की प्रधानता है। किंतु उनकी संवेदना को केवल व्यक्तिगत प्रेम–विरह तक सीमित करना उचित नहीं होगा। उनकी रचनाओं में मानवीय करुणा और नारी के आत्मसम्मान का व्यापक भाव मिलता है। इस दृष्टि से छायावाद हिंदी साहित्य में व्यक्ति की आंतरिक स्वतंत्रता और संवेदनात्मक स्वायत्तता की स्थापना करने वाली महत्वपूर्ण काव्यधारा सिद्ध होता है।

- **छायावाद और सामाजिक यथार्थ :**

छायावाद की आलोचना में यह आरोप लगाया गया कि छायावादी कवि वास्तविक सामाजिक जीवन से दूर होकर कल्पना और रहस्य की दुनिया में चले गए। यह आरोप आंशिक रूप से सही हो सकता है, लेकिन पूरे छायावाद पर इसे लागू करना उचित नहीं है। निराला की कविता में शोषित और वंचित मनुष्य का जीवन दिखाई देता है। उनकी रचनाएँ सामाजिक विषमता और रूढ़ियों के विरुद्ध आवाज उठाती हैं। महादेवी के गद्य में भी समाज और स्त्री–जीवन के प्रश्न उपस्थित हैं। नामवर सिंह की आलोचना का महत्व इसी बात में है कि

वे छायावादी कविता को केवल भावुकता की दृष्टि से नहीं देखते, बल्कि उसके भीतर छिपे सामाजिक सत्य को सामने लाने का प्रयास करते हैं। उनकी पुस्तक में छायावादी कविता की समूहन प्रवृत्तियों और उसके सामाजिक अर्थों का विश्लेषण किया गया है।

- **छायावाद की उपलब्धियाँ :**

छायावाद की सबसे बड़ी उपलब्धि हिंदी कविता को आधुनिक संवेदना प्रदान करना है। इसने कविता के विषयों को विस्तृत किया और कवि को अपनी व्यक्तिगत अनुभूति व्यक्त करने की स्वतंत्रता दी। दूसरी बड़ी उपलब्धि भाषा और शिल्प के क्षेत्र में हुई। छायावादी कवियों ने हिंदी की अभिव्यक्ति–क्षमता का विस्तार किया। बिंब, प्रतीक, मानवीकरण, लाक्षणिकता और संगीतात्मकता के माध्यम से कविता अधिक व्यंजक बनी। तीसरी उपलब्धि प्रकृति और मनुष्य के संबंध को नई व्याख्या है। प्रकृति बाहरी दृश्य न रहकर मानव–मन का दर्पण बन गई। चौथी उपलब्धि व्यक्ति की प्रतिष्ठा है। छायावाद ने व्यक्ति के अंतर्जगत को साहित्य के केंद्र में स्थापित किया। पाँचवीं उपलब्धि आधुनिक कविता के लिए नए मार्ग खोलना है। छायावाद के बाद प्रगतिवाद, प्रयोगवाद और नई कविता जैसी धाराओं का विकास हुआ। इन धाराओं के लिए छायावाद ने भाषा और काव्य–षिल्प के स्तर पर महत्वपूर्ण आधार तैयार किया।

- **छायावाद की सीमाएँ :**

छायावाद की कुछ सीमाएँ भी हैं। उसकी अत्यधिक प्रतीकात्मकता कभी–कभी कविता को दुर्बोध बना देती है। संस्कृतनिष्ठ और अलंकारिक भाषा सामान्य पाठक के लिए कठिन हो सकती है। कुछ छायावादी कविताओं में व्यक्तिगत वेदना और रहस्यात्मकता इतनी अधिक है कि सामाजिक यथार्थ पीछे चला जाता है। यही कारण है कि बाद में प्रगतिशील आलोचना ने छायावाद की इस प्रवृत्ति की आलोचना की। फिर भी इन सीमाओं को उसके ऐतिहासिक संदर्भ में देखना चाहिए। छायावाद जिस समय विकसित हुआ, उस समय हिंदी कविता को नई संवेदना और नई भाषा की आवश्यकता थी। इसलिए उसकी सीमाएँ भी उसके प्रयोगशील स्वरूप से जुड़ी हुई हैं।

- **छायावाद का साहित्यिक महत्व :**

हिंदी साहित्य के इतिहास में छायावाद का महत्व संक्रमणकारी और रचनात्मक दोनों रूपों में है। इसने परंपरा और आधुनिकता के बीच एक पुल का कार्य किया। भारतेन्दु और द्विवेदी युग से प्राप्त आधुनिक चेतना को छायावाद ने व्यक्तिगत अनुभूति और सौंदर्य–बोध से जोड़ा। नामवर सिंह की छायावाद इस साहित्यिक आंदोलन के अध्ययन में एक महत्वपूर्ण आलोचनात्मक ग्रंथ है। पुस्तक का प्रथम प्रकाशन 1955 में हुआ और उपलब्ध पुस्तक–सूचनाओं के अनुसार इसके राजकमल प्रकाशन संस्करण में 154 पृष्ठ हैं। नामवर सिंह ने छायावाद की सामूहिक प्रवृत्तियों के साथ उसके प्रमुख कवियों की काव्यगत विशेषताओं पर विचार किया। बाद में उनकी छायावाद रू प्रसाद, निराला, महादेवी और पंत नामक पुस्तक में इन चारों कवियों के वैशिष्ट्य पर विशेष ध्यान दिया गया। उपलब्ध विवरण के अनुसार इसका 2018 का राजकमल प्रकाशन संस्करण 200 पृष्ठों का है।

- **निष्कर्ष :**

छायावाद हिंदी साहित्य की केवल एक काव्य–प्रवृत्ति नहीं, बल्कि आधुनिक हिंदी काव्य के विकास का एक निर्णायक चरण है। इसने कविता को बाहरी वर्णन और उपदेशात्मकता से निकालकर मनुष्य की आंतरिक

अनुभूति, कल्पना और सौंदर्य–बोध से जोड़ा। जयशंकर प्रसाद ने छायावाद को दार्शनिक और सांस्कृतिक गहराई दी; सुमित्रानंदन पंत ने प्रकृति और सौंदर्य को नया आयाम दिया; सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' ने विद्रोह, स्वतंत्रता और प्रयोगशीलता को स्वर दिया; तथा महादेवी वर्मा ने वेदना, करुणा और रहस्यात्मक अनुभूति को अत्यंत प्रभावशाली अभिव्यक्ति प्रदान की। छायावाद की सबसे बड़ी उपलब्धि यह है कि उसने हिंदी कविता को आधुनिक आत्मचेतना प्रदान की। उसके बाद आने वाली साहित्यिक धाराओं ने उसमें सहमति–असहमति दोनों के माध्यम से अपनी राह बनाई। इसलिए छायावाद को समझे बिना आधुनिक हिंदी कविता के विकास को पूरी तरह समझना कठिन है। अंततः कहा जा सकता है कि छायावाद ने हिंदी कविता को केवल नई विषय–वस्तु नहीं दी, बल्कि देखने, अनुभव करने और अभिव्यक्त करने की नई दृष्टि भी दी। यही उसकी स्थायी साहित्यिक उपलब्धि है।

- **संदर्भ-सूची :**

1. शुक्ल, रामचंद्र – हिंदी साहित्य का इतिहास, आधुनिक काल, काव्य खंड : छायावाद संबंधी विवेचन, लगभग पृ. 650–654; छायावादी कवियों के विवेचन में प्रसाद पृ. 678 से, पंत पृ. 694 से, निराला पृ. 714 से तथा महादेवी वर्मा पृ. 719 से आगे।
2. सिंह, नामवर –छायावाद, राजकमल प्रकाशन, प्रथम प्रकाशन 1955; उपलब्ध संस्करण 154 पृष्ठ संख्या।
3. सिंह, नामवर – छायावाद : प्रसाद, निराला, महादेवी और पंत, राजकमल प्रकाशन, 2018 संस्करण, 200 पृष्ठ संख्या।
4. सिंह, नामवर – इतिहास और आलोचना, राजकमल प्रकाशन, 2018 संस्करण, 178 पृष्ठ संख्या।

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2026 Page No. : 210-216

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES PRINT RESEARCH JOURNAL

From Oppression to Awakening : Women's Status and Social Reforms in Colonial India

Anjali Sachan, Research Scholar, History
Ashok Kumar Yadav, Research Scholar, Department of Lifelong Learning And Extension
Chhatrapati Shahu Ji Maharaj University, Kanpur.

Abstract :

The social, educational, legal and political position of women in colonial India had undergone major changes in the nineteenth and twentieth centuries. Women who had been constrained by patriarchal customs, caste hierarchies, lack of access to education, child marriage, sati, forced widowhood, purdah, dowry and other social practices, began to enter new arenas of education, public debate, social reform and political activism. But this transformation was not linear or uniform. British colonial policies were ambiguous: laws such as the Bengal Sati Regulation of 1829 and the Hindu Widows' Remarriage Act of 1856 contested some of the oppressive practices, but colonial legal and administrative policies also reproduced aspects of patriarchal authority. Thus, the transformation was at the core of indigenous reformers, socio-religious movements, women writers, and political activists. Raja Rammohan Roy, Ishwar Chandra Vidyasagar, Savitribai Phule, Pandita Ramabai, Swarnakumari Devi, Rokeya Sakhawat Hossain and Tarabai Shinde challenged established gender norms through education, legislation, and activism. Participation in the nationalist movement widened women's public and political roles. In this paper, I argue that the "awakening" of Indian women was produced through the interaction of colonial modernity, indigenous reform and women's agency, but was circumscribed by caste, class, region, patriarchy and nationalist priorities.

Keywords : Colonial India; Women's Status; Social Reform; Women's Education; Nationalist Movement

1. Introduction :

The history of women in colonial India is a history of oppression and change. Women's lives before and during the colonial period were shaped by a range of religious, social, caste and regional traditions. The research project uploaded highlights that women's position changed a lot through

historical periods and regions, while patriarchal structures increasingly limited women's autonomy, education, mobility, and participation in public life. This resulted in the nineteenth century reform debates focussing on practices like sati , child marriage, enforced widowhood, purdah, dowry, female infanticide and limited access to education.

The arrival and consolidation of British rule brought with it new legal institutions, educational systems, print culture and intellectual influences. But colonialism did not only liberate Indian women. British authorities often justified social reform as part of a "civilizing mission," while maintaining patriarchal personal laws and avoiding reforms that might provoke conservative opposition. Thus, colonial rule created a paradox: some reforms were possible, but at the same time the existing inequalities were consolidated.

At the same time Indian reformers were more and more questioning social practices that concerned women. The Brahmo Samaj, Arya Samaj, Satyashodhak Samaj, Women's Educational Institutions, Journals and later women's organizations provided new spaces for debate and activism. Significantly, women were not just the object of reform, but slowly became active agents in shaping the nature of reform.

The central argument of this paper is that women's awakening in colonial India was not the result of British legislation alone. It emerged from the interaction of state intervention, indigenous reform movements, women's education, print culture, organizational activity, and participation in nationalism. The transformation was significant but uneven, particularly across caste, class, region, and rural-urban divisions.

2. Literature Review :

The historiography of women and social reform in colonial India has moved from male-centric narratives to sophisticated feminist and intersectional perspectives. Previous scholarship has often focused on 'great male reformers' like Raja Rammohan Roy and Ishwar Chandra Vidyasagar and analyzed their intellectual engagement with Western liberalism and Christian ethics.

Scholars like Sangari and Vaid and Anagol have discussed the ways in which women like Pandita Ramabai and Rokeya Sakhawat Hossain negotiated colonial and patriarchal structures. Further subaltern and feminist interventions challenged the assumption that all women benefited equally from reform. The literature also offers competing interpretations of colonialism and gender. One method is to show how British officials employed the subjugation of Indian women as a justification for colonial rule. Other points out how colonial legal systems could cement patriarchal structures through codification of personal laws. Both approaches are complicated by the subaltern perspective that reveals how women's voices were silenced in colonial and nationalist discourse.

Liberal feminist readings highlight political participation, suffrage, organizational leadership, and mass protest, whereas critical perspectives point out the limited institutional power granted to women despite their widespread participation. Regional and class studies show that nationalism was often experienced differently by women of the peasant and working class than by educated urban women.

Hence, this paper takes a multidimensional approach of reform and resistance, and explores women not only as beneficiaries of reform but as historical agents.

3. Methodology :

It is based largely on the research materials within the uploaded project, and is supplemented by the secondary scholarship cited in its bibliography.

The main sources identified in the project are colonial administrative records, legislative documents, writings of reformers, autobiographies and speeches of women activists, newspapers and journals such as Bamabodhini Patrika, Indian Mirror and Stri Dharma. Secondary literature comprises academic books, journal articles, regional studies, and feminist historiography.

Three analytical approaches are of particular importance. The first is the historical-comparative method, which considers changes in the position of women over time. Second, discourse analysis is employed to examine colonial, reformist, conservative and nationalist representations of women. Third, an intersectional approach considers caste, class, region and urban-rural divide. This approach is necessary because the benefits of reform were not equally distributed.

4. Results and Discussion

4.1 Colonialism and the Paradox of Reform :

Among the major findings is that colonialism had contradictory consequences for women. The abolition of sati in 1829 was an important step against a negative social custom. The Hindu Widows' Remarriage Act of 1856 likewise formed a legal precedent for the remarrying of the widows. The colonial authorities actively promoted women's education through various institutions and educational measures. However, the above-mentioned reforms should not be seen as unambiguous colonial project aimed at the liberation of women. The British officials often resorted to conservative interpretations of Indian family law. The colonial administration was also reluctant to interfere with customs such as early marriage and dowry when reform was likely to cause a backlash. Therefore, laws often had little relation to the actual state of affairs.

The research project describes this as a "colonial paradox": colonial intervention challenged certain customs while simultaneously reinforcing patriarchal structures.

4.2 Education as an Instrument of Awakening :

One of the most important pillars of women's awakening is education. The establishment of girls' schools provided women with the opportunity to gain not only literacy but also mental confidence. Schools such as the Bethune School in Calcutta made a substantial contribution to women's education although it was generally available only to those classes of women who belonged to big cities and were socially privileged.

The role of local reformers was quite important too. Jyotiba Phule and Savitribai Phule fought against the restrictions imposed by the caste systems and gender in regard to education for girls from lower castes. The work of these people against the monopoly of privileged social groups on knowledge is worth noting.

The transformation of women into writers, teachers, professionals, activists, politicians, and other active individuals took place gradually, whereas the level of literacy among women was very low for most of the colonial period, with significant regional discrepancies. As it can be concluded from the statistical information given by the researchers, in 1941 the level of female literacy was approximately 6.4% in Bengal, 8.1% in Bombay, 9.7% in Madras, and only 3.2% in Punjab.

4.3 Indigenous Reform Movements and Women's Agency :

Social reform movements in India contributed significantly to women's liberation. The Brahmo Samaj started questioning practices like sati and called for education for women as well as for remarriage of widows. The Arya Samaj, too, supported reforms concerning education and child marriage. In Maharashtra, the Satyashodhak movement linked caste oppression with that of women.

Most importantly, women emerged as a force in society. For instance, Pandita Ramabai criticized the patriarchal interpretation of religion and demanded education and social services for women. Rokeya Sakhawat Hossain used literature to expose the issues faced by Muslim women. Tarabai Shinde's Stri Purush Tulana attacked the discrimination implemented against both men and women. Swarnakumari Devi used literature, journalism, and social work to enhance the position of women.

4.4 Women and the Nationalist Movement :

Women's involvement in public life increased with the nationalist movement's growth. Women participated in protests, strikes, as well as promotion of indigenous products during the Swadeshi movement. Women were involved in protests during Gandhian revolts too by participating in picketing, producing khadi, and performing civil disobedience.

The Quit India and Civil Disobedience movements gave women the chance to showcase their organizational and political know-how. Figures like Sarojini Naidu, Usha Mehta, etc. were involved in

various mass non-violent movements and insurgency. Even so, there were discrepancies in the role of women in nationalism. They were valued as symbols of sacrifice and virtue, but not given leadership positions.

4.5 Emergence of Women's Organizations :

The emergence of women's associations signified a shift from personal struggle to collective action of women. The establishment of bodies such as the Women's Indian Association, the National Council of Women in India, and the All India Women's Conference provided opportunities for women to discuss matters related to education, suffrage, property right, marriage reforms, and social welfare. Founded in 1927, the All India Women's Conference played a key role in combining women's social issues with legislation. The organizational data of the project reveals that the number of women's associations grew significantly between 1917 and 1947.

At the same time, these associations demonstrate the limitations of early feminism. The leaders of the organizations represented educated and privileged women, while the women of lower classes and castes were not represented adequately.

4.6 Resistance and Uneven Transformation :

The development of social change was thwarted by orthodox groups, various strains of nationalist feelings, and traditional social institutions. Moreover, the objections against widow remarriage, the education of women, and the enactment of the Age of Consent revealed the power of male-centered structures. Moreover, the women reformers experienced discrimination and social exclusion.

Consequently, the effects of reforms were not uniform across the population. Thus, educated women in the cities had much better access to education, professions, organizations, and public life than women from rural areas and disadvantaged women. Also, the caste influenced the access to reforms. As stated in the articles reviewed for the purpose of this project, the ideas of the reformers were grounded on the ideas of the upper castes and did not take into account the issues women from lower strata experienced.

5. Conclusion :

The changes in women's status in colonial India were a complicated historical process that remains inconclusive. Women were able to gain new positions in society due to innovative legislation, proper education, introduction of print media, social reform movements, formation of women's organizations, and involvement of women in nationalist movements. The attempts to abolish sati, to legalize remarriage of widows, to implement girl education, and to create women-oriented publications were important factors in gradually changing women's place in the society.

At the same time, it is clear that the change was incompletely and unevenly done. The colonial

government made reforms in a selective way, while the local reformers operated in patriarchal environments. Those forms of political activism that helped women enter politicized society did not ensure equal political rights for women. The limitations of the caste system, classes, geographical differences, and division into urban and rural areas made the process of reform slower.

Thus, the main transformation was not just the enactment of particular laws but the rise of women as historical agents. Women have been increasingly writing, organizing, educating, protesting, pursuing careers, engaging in nationalist politics, and asserting their rights in their own voice. The colonial period established important institutional and intellectual groundwork for future feminist movements, even if inequality prevailed. Thus, the process of women's awakening in colonial India must be seen not merely as the move from oppression to liberation, but rather as a complicated phenomenon in which colonial power, indigenous reform, nationalism, and women's agency have interacted continuously over time. The legacy of this period includes the institutions, ideas, and forms of political participation which made it possible for the following generations to carry on the struggle for gender equality.

References

- Anagol, P. (2005). *The emergence of the new woman: Feminism and women's education in colonial India*. Ashgate.
- Banerjee, S. (2004). *Men, women and domestics: Articulating middle-class culture in colonial Bengal*. Oxford University Press.
- Basu, A. (1974). *The growth of education and political development in India, 1898–1920*. Oxford University Press.
- Borthwick, M. (1981). The changing role of women in Bengal. *Journal of Asian Studies*.
- Burton, A. (1994). *Burdens of history: British feminists, Indian women, and imperial culture, 1865–1915*. University of North Carolina Press.
- Chandra, S. (1998). *Enslaved daughters: Colonialism, law and women in India*. Oxford University Press.
- Engels, D. (1999). The limits of gender ideology: Reform and women in colonial India. *Modern Asian Studies*.
- Forbes, G. (1996). *Women in modern India*. Cambridge University Press.
- Gupta, C. (2001). *Sexuality, obscenity, community: Women, Muslims, and the Hindu public in colonial India*. Permanent Black.
- Heimsath, C. H. (1964). *Indian nationalism and Hindu social reform*. Princeton University

Press.

- Patel, V. (1988). *The women's movement in India*.
- Rao, A. (2009). *Gender and caste: Issues in contemporary Indian feminism*. Kali for Women.
- Sangari, K., & Vaid, S. (Eds.). (1989). *Recasting women: Essays in Indian colonial history*. Kali for Women.
- Sarkar, T. (2001). *Hindu wife, Hindu nation: Community, religion, and cultural nationalism*. Indiana University Press.
- Sinha, M. (1999). Gender in the critiques of colonialism. *American Historical Review*.
- Spivak, G. C. (1988). Can the subaltern speak? In C. Nelson & L. Grossberg (Eds.), *Marxism and the interpretation of culture*. University of Illinois Press.
- Tharu, S., & Lalita, K. (Eds.). (1993). *Women writing in India: 600 B.C. to the present*. Feminist Press.
- Raman, S. (2021). *Women's rights and law in colonial India*. Routledge.

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2026 Page No. : 217-223

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES PRINT RESEARCH JOURNAL

Saptanga Theory and Its Contemporary Relevance in India

Yashna Singh
Ph.d, Research Scholar

Abstract :

The Saptanga Theory of the State, developed by Kautilya in the *Arthashastra*, is a significant contribution to ancient Indian political thought. It describes the state as an organic entity consisting of seven interdependent elements: *Swami* (ruler), *Amatya* (ministers and officials), *Janapada* (territory and population), *Durga* (fortification), *Kosha* (treasury), *Danda* (force and authority), and *Mitra* (ally). Kautilya regarded these elements as essential for the stability, prosperity and security of the state. Although his political system was monarchical and differs fundamentally from India's constitutional democracy, the functional principles of the seven elements remain relevant to contemporary public policy. This paper examines their modern interpretation in relation to political leadership, administration, human development, infrastructure, economic capacity, national security and foreign relations. It argues that Saptanga Theory offers an indigenous framework for understanding state capacity and policy coordination, provided it is adapted to constitutionalism, fundamental rights, democratic accountability and modern international norms.

Keywords : Saptanga Theory, Kautilya, Arthashastra, Indian Political Thought, Public Policy, Governance, State Capacity, National Security, Foreign Policy

1. Introduction :

Ancient Indian political thought developed a sophisticated understanding of governance, administration, economy, security and diplomacy. Kautilya, traditionally associated with the *Arthashastra*, provided an extensive account of statecraft covering administration, taxation, defence, diplomacy and foreign policy. One of his central ideas is the Saptanga Theory of the State, which identifies seven interrelated elements or *Prakritis*: *Swami, Amatya, Janapada, Durga, Kosha, Danda* and *Mitra*.

The contemporary value of Saptanga lies in its holistic conception of state capacity. Modern states require effective leadership, competent administration, productive citizens, infrastructure, financial resources, security institutions and international partnerships. These functions broadly correspond to the seven limbs.

As a constitutional democracy, India faces interconnected challenges involving development, welfare, national security, infrastructure, technology and international relations. The Saptanga framework provides an indigenous lens for examining these dimensions and their relationship.

2. The Seven Elements of Saptanga Theory :

Kautilya's seven elements can be briefly understood in contemporary terms. *Swami*, the ruler, corresponds to political leadership. *Amatya*, the ministers and officials, represents administration and institutional capacity. *Janapada*, territory and population, can be related to citizens, human capital and development. *Durga*, or fortification, corresponds to infrastructure and national resilience. *Kosha*, the treasury, represents economic and fiscal capacity. *Danda*, force and authority, relates to defence, policing and rule of law. *Mitra*, the ally, corresponds to diplomacy and strategic partnerships.

The importance of Saptanga lies in the interaction among these elements. Military strength cannot compensate for weak institutions, poor infrastructure or an unhealthy economy. Likewise, economic growth cannot produce durable state capacity without effective administration, human development and security. Saptanga is therefore an early framework for understanding state power.

3. Saptanga Theory and Contemporary Indian Policy

3.1 Swami : Political Leadership :

Swami traditionally refers to the ruler. Kautilya emphasized discipline, education, judgement and responsibility in leadership. In contemporary India, political authority operates through constitutional and democratic institutions rather than monarchy. Nevertheless, leadership remains important for setting policy priorities, coordinating institutions and responding to crises.

Economic reforms, disasters, national security and technological transformation require informed decisions and expert advice. The modern *Swami* is therefore responsible and accountable political leadership rather than personal sovereignty.

3.2 Amatya : Administration and Institutional Capacity :

Amatya refers to ministers, advisers and officials who assist governance. Kautilya recognized the importance of capable personnel and effective institutional structures. This principle has direct relevance to India, where policies are implemented through ministries, civil services, state governments, local bodies and specialized institutions.

Digital governance, taxation, welfare delivery, infrastructure projects and social programmes depend on administrative capacity. The contemporary *Amatya* therefore represents professional bureaucracy, expertise and institutional effectiveness. Kautilya's emphasis on selecting capable officials is especially relevant when policymaking requires knowledge of economics, technology, environment, security and data.

3.3 Janapada : People and Human Development :

Janapada refers to territory and population. Kautilya considered productive land, resources and people essential to state strength. In contemporary India, the concept can be interpreted through citizens, human capital and regional development. Education, healthcare, employment, skills and economic opportunities influence both social well-being and national capacity.

Policies concerning poverty reduction, rural development, education, employment and skill development therefore strengthen the modern *Janapada*. A large population becomes a strategic and economic asset only when supported by adequate investment in human capabilities and opportunities.

3.4 Durga : Infrastructure and Resilience :

Durga traditionally meant fortification and defensive structures. In the modern context, it can be understood as strategic infrastructure and national resilience. Roads, railways, ports, airports, energy networks, communication systems and border infrastructure support economic activity as well as security.

Strong infrastructure improves connectivity, productivity, disaster preparedness and national security. *Durga* can consequently be reinterpreted as the physical and digital foundations that enable a resilient state.

3.5 Kosha : Economic and Fiscal Capacity :

Kosha, or treasury, was a crucial foundation of state power. A government requires financial resources for administration, defence and public welfare. In contemporary India, revenue, taxation, public expenditure, investment and economic growth determine the resources available for development and security.

Economic strength also supports strategic autonomy. A strong economy enables investment in infrastructure, defence, technology and human development while reducing excessive dependence on external resources. India's economic diplomacy demonstrates the connection between economic capacity and international influence through trade, investment, technology, energy security and diversified markets. *Kosha* can therefore be understood as economic strength, fiscal capacity and financial resilience.

3.6 Danda : Defence, Security and Rule of Law :

Danda refers to coercive authority, punishment and military power. Kautilya considered maintaining order and protecting the state essential to governance. In contemporary India, *Danda* can be associated with the armed forces, police, intelligence institutions, border management and the justice system.

However, modern state power is constrained by the Constitution, fundamental rights and rule of law. Security challenges now include terrorism, cyber threats, border tensions and vulnerabilities in critical infrastructure. Therefore, *Danda* should not signify unrestricted coercion; it should represent lawful security and legitimate authority exercised within constitutional limits.

3.7 Mitra : Diplomacy and Strategic Partnerships :

Mitra means ally or friend. Its inclusion among the seven elements shows that Kautilya regarded external relations as integral to state strength. This principle remains highly relevant to India. National prosperity and security increasingly depend on relationships with other countries and international institutions.

India's diplomacy includes strategic partnerships, defence cooperation, trade, technology, energy security and multilateral engagement. The modern *Mitra* therefore represents diplomatic relationships, strategic partnerships and international cooperation. Kautilya's emphasis on alliances offers a useful historical perspective on India's efforts to expand strategic and economic partnerships.

4. Saptanga as a Framework for Indian State Capacity :

The greatest contemporary value of Saptanga Theory lies in its integrated approach. Modern public policy often separates economic, defence, infrastructure and foreign policies, although these areas are closely connected. Kautilya's framework encourages policymakers to consider them together.

A strong economy (*Kosha*) provides resources for infrastructure (*Durga*) and defence (*Danda*). Infrastructure supports economic development and connects citizens (*Janapada*). Effective administration (*Amatya*) ensures that policies and resources reach citizens, while diplomacy (*Mitra*) can generate economic, technological and security opportunities. Political leadership (*Swami*) coordinates these dimensions.

The seven elements can thus be viewed as a network of leadership, administration, human development, infrastructure, economic capacity, security and international influence. MP-IDSA similarly presents Saptanga as useful for understanding state capacity beyond military power, incorporating leadership, expertise, economic resources, people, territorial protection and alliances.

5. Contemporary Relevance and Limitations :

Saptanga Theory offers several lessons for contemporary India. It highlights institutional capacity, connects economic resources with national power, recognizes people and resources as foundations of state strength, and gives importance to both internal security and external relations.

Kautilya's framework was developed for monarchy and cannot be directly transferred to constitutional democracy. The ancient ruler's position differs

fundamentally from that of an elected government. His approaches to coercion, intelligence and political strategy must therefore be assessed against democratic values, fundamental rights and constitutional safeguards.

Modern challenges such as climate change, artificial intelligence, pandemics and cyber warfare also fall outside the historical context of the *Arthashastra*. Saptanga should consequently not be treated as a ready-made policy manual. Its usefulness lies in selective adaptation and reinterpretation.

6. Conclusion :

Kautilya's Saptanga Theory presents the state as an interconnected system of political, administrative, social, economic, security and diplomatic capabilities. Its seven elements-*Swami, Amatya, Janapada, Durga, Kosha, Danda* and *Mitra*-offer a useful framework for examining the foundations of state capacity.

Although contemporary India differs fundamentally from Kautilya's monarchical state, the functional significance of the seven elements remains relevant. *Swami* can represent political leadership; *Amatya*, administrative and institutional capacity; *Janapada*, citizens and human development; *Durga*, infrastructure and resilience; *Kosha*, economic and fiscal strength; *Danda*, defence, security and rule of law; and *Mitra*, diplomacy and strategic partnerships.

The theory's central contemporary contribution is its holistic understanding of state capacity. Economic development, security, infrastructure, administration, human development and foreign policy cannot be considered independently. The strength of one element can reinforce the others, while weakness in one can undermine the whole system.

Saptanga Theory is therefore best understood as an indigenous analytical framework that can enrich debates on public policy, state capacity and national strategy. Reinterpreted through constitutional democracy and contemporary values, Kautilya's insight that a strong state depends upon the strength and coordination of its constituent elements remains relevant to modern Indian statecraft.

References :

- Kautilya. *Arthashastra*. Various English translations and editions.

- Sethy, P., & Ray, P. K. (2020). "Theorizing Kautilya's Perception of State: The Saptanga Theory and State Formation." *Journal of Asiatic Society for Social Science Research*, 2(2), 29–38.
- Liebig, M. (2014). "Kautilya's Arthashastra: A Classic Text of Statecraft and an Untapped Political Science Resource." *Heidelberg Papers in South Asian and Comparative Politics*.
- Prasain, I. D. (2024). "Saptanga Theory of the State in Kautilya's Arthasastra." *TUTA Journal*, 11–12(1).
- Sarkar, S. K., & Saha Roy, M. (2026). "Kautilya's Saptanga Theory of State and Its Relevance to the Contemporary Indian State." *Integrated Journal for Research in Arts and Humanities*, 6(1), 267–273.
- Chandra, S., Kumar, G., & Nigam, A. (2026). "Understanding Saptāṅga Theory as the Art of Governance: A Dharmaśāstric Approach to Polity and Statecraft." *The Continuum*, 1, 17–36.
- Medha Bisht. "What is the Contemporary Relevance of Kautilya's Saptang Theory?" *Manohar Parrikar Institute for Defence Studies and Analyses*.
- University of Calicut, School of Distance Education. *Political Thought: Saptanga Theory*.

PRINTED MATTER/PRINTING BOOK CLAUSE 121 (A) P & T GUIDE

गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वैलफेयर सोसायटी (रजि.)
द्वारा भिवानी (हरियाणा), काठमाण्डू (नेपाल) से प्रकाशित

ISSN : 2395-7115
Impact Factor : 8.642

बोहल शोध मंजूषा

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL MULTI DISCIPLINARY, MULTIPLE LANGUAGES
PEER REVIEWED, REFREED RESEARCH JOURNAL

Website :
www.bohalshodhmanjusha.com
Email : grsbohal@gmail.com

Editor :
Dr. Naresh Sihag, Adv.
M. : 8708822674, 9466532152

गीना देवी शोध संस्थान
द्वारा श्रीगंगानगर, (राजस्थान), पटियाला (पंजाब) व नेपाल से प्रकाशित

ISSN : 2321-8037
Impact Factor : 7.834

Gina Shodh SANGAM

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

Website : www.ginajournal.com
Email : grngobwn@gmail.com
Office : 8708822674

Editor :
Dr. Rekha Soni, Vice Principal
Education, Tantia University
M. 9828531975

गिरधारीलाल घासीराम शोधपीठ
द्वारा नई दिल्ली, आगरा, गाजियाबाद एवं नेपाल से प्रसारित

ISSN : 2348-5639
Impact Factor : 6.521

SHODH SAMALOCHAN

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES QUARTERLY RESEARCH JOURNAL

Website : https://ginajournal.com/shodh-samalochan/
Executive Editor : Dr. Varsha Rani M. 9671904323
Managing Editor : Dr. Mukesh Verma M. 9627912535

Editor :
Dr. Naresh Sihag, Advocate
M. 8708822674

गिना प्रकाशन द्वारा
जयपुर, भिवानी एवं नेपाल से प्रसारित

ISSN : 2321-0540
Impact Factor : 5.621

KANCHANLATA

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES HALF YEARLY RESEARCH JOURNAL

Managing Editor :
Dr. Mukesh Verma
M. 9627912535

Editor :
Dr. Naresh Sihag, Advocate
M. 8708822674

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक गुगनराम सोसायटी रजि. के लिए डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट ने मनभावन प्रिन्टर्ज, भिवानी से छपवाकर गीना प्रकाशन, 202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड भिवानी-127021 (हरि.) से वितरित की।

ISSN 2395:7115

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES PRINT JOURNAL

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Certificate of Publication

is awarded to

Dr. Prem Singh Chouhan

Associate Professor,
SPC. GOVT. COLLEGE, BHIM (RAJSAMAND)

for the paper titled

Biochemical and Geotechnical Structure of Mud Nests with Special Reference to the Indian Cliff Swallow (Petrochelidon fluvicola)

Published in Bohal Shodh Manjusha, ISSN : 2395-7115

Sept. 2026, Vol. 24, Issue -3, Part-2, Page No. 12-17

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES PRINT JOURNAL

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ. रश्मि पाण्डेय

for the paper titled

पंचायतीराज व्यवस्था में महिलाओं पर वैश्वीकरण का प्रभाव

Published in Bohal Shodh Manjusha, ISSN : 2395-7115

Sept. 2026, Vol. 24, Issue -3, Part-2, Page No. 18-29

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES PRINT JOURNAL

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ. रेखा रावत

सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र)

शासकीय महाविद्यालय, सुल्तानपुर, जिला रायसेन (मध्य प्रदेश)

for the paper titled

डिजिटल युग में सोशल मीडिया का युवाओं की सामाजिक पहचान और पारस्परिक संबंधों पर प्रभाव : एक समाजशास्त्रीय विश्लेषण

Published in Bohal Shodh Manjusha, ISSN : 2395-7115

Sept. 2026, Vol. 24, Issue -3, Part-2, Page No. 30-36

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES PRINT JOURNAL

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Certificate of Publication

is awarded to

श्रीमती प्रियंका यादव

सहायक प्राध्यापक, वाणिज्य,
शासकीय महाविद्यालय, खजराना, इंदौर।

for the paper titled

भारतीय कंपनियों में ईएसजी प्रकटीकरण और निवेशकों के विश्वास के बीच संबंध : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

Published in Bohal Shodh Manjusha, ISSN : 2395-7115

Sept. 2026, Vol. 24, Issue -3, Part-2, Page No. 37-43

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES PRINT JOURNAL

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Certificate of Publication

is awarded to

Amirah Kaisar Parvez Bagwan, Research Scholar

Dr. Radha Rani Sain, Research Guide,

DEPARTMENT OF PSYCHOLOGY

SHRI KHUSHAL DAS UNIVERSITY, HANUMANGARH, RAJASTHAN.

for the paper titled

Influence of Social Media Usage Patterns on Subjective Well-Being and Happiness among Young Adults

Published in Bohal Shodh Manjusha, ISSN : 2395-7115

Sept. 2026, Vol. 24, Issue -3, Part-2, Page No. 44-50

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES PRINT JOURNAL

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Certificate of Publication

is awarded to

पूजा शर्मा, शोधार्थी

डॉ. राकेश रोहिल्ला, मार्गदर्शक

बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय, रोहतक।

for the paper titled

हरियाणा में डिजिटल कल्याणकारी शासन और नागरिक–राज्य संबंध : परिवार पहचान पत्र के संदर्भ में एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

Published in Bohal Shodh Manjusha, ISSN : 2395-7115

Sept. 2026, Vol. 24, Issue -3, Part-2, Page No. 51-57

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES PRINT JOURNAL

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Certificate of Publication

is awarded to

कुलवीर सिंह, शोधार्थी

पंडित दीनदयाल उपाध्याय शेखावाटी विश्वविद्यालय, सीकर, राजस्थान।

प्रो. डॉ. मनोज कुमार, शोध–निर्देशक

भूगोल विभाग, एस.एन.एम.टी. राजकीय कन्या महाविद्यालय, झुंझुनूं।

for the paper titled

चूरू जिले में ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना की आवश्यकता एवं प्रगति : एक भौगोलिक एवं सामाजिक–आर्थिक विश्लेषण

Published in Bohal Shodh Manjusha, ISSN : 2395-7115

Sept. 2026, Vol. 24, Issue -3, Part-2, Page No. 58-64

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES PRINT JOURNAL

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Certificate of Publication

is awarded to

मनोज कुमार यादव, शोधार्थी,

डॉ. विनोद कुमार शर्मा, शोध निर्देशक व प्राध्यापक,

हिन्दी विभाग, डॉ. सी. वी. रमन विश्वविद्यालय, वैशाली, बिहार।

for the paper titled

प्रेमचंद की रचनाओं में नारी अधिकार एवं स्वाधीनता का अध्ययन

Published in Bohal Shodh Manjusha, ISSN : 2395-7115

Sept. 2026, Vol. 24, Issue -3, Part-2, Page No. 65-75

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES PRINT JOURNAL

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Certificate of Publication

is awarded to

सतीश कुमार दूबे

शोधार्थी, रक्षा एवं स्त्रातेजिक अध्ययन
गनपत सहाय पी. जी. कॉलेज, सुल्तानपुर।

for the paper titled

भारत–नेपाल सम्बन्ध : राष्ट्रीय सुरक्षा की वर्तमान स्थिति

Published in Bohal Shodh Manjusha, ISSN : 2395-7115

Sept. 2026, Vol. 24, Issue -3, Part-2, Page No. 76-80

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES PRINT JOURNAL

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Certificate of Publication

is awarded to

Dr. Priya Jain

Assistant professor (Commerce)
PMCoE Shri Atal Bihari Vajpayee Govt Arts and Commerce College Indore M.P.

for the paper titled

The Role of Online Customer Reviews in Building Consumer Trust in Indian E-Commerce : A Review-Based Study

Published in Bohal Shodh Manjusha, ISSN : 2395-7115

Sept. 2026, Vol. 24, Issue -3, Part-2, Page No. 81-87

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES PRINT JOURNAL

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Certificate of Publication

is awarded to

चुडासमा जयेशकुमार आठमभाई

शोधार्थी, इतिहास विभाग,

महाराजा कृष्णकुमारसिंहजी भावनगर यूनिवर्सिटी, भावनगर (गुजरात)

for the paper titled

बौद्धधर्म में प्रतीक महिमा

Published in Bohal Shodh Manjusha, ISSN : 2395-7115

Sept. 2026, Vol. 24, Issue -3, Part-2, Page No. 88-93

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES PRINT JOURNAL

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Certificate of Publication

is awarded to

आभा एस वी

शोधार्थी, हिंदी विभाग,
श्री शंकराचार्य संस्कृत विश्वविद्यालय, कालडी।

for the paper titled

'गंगूबाई काठियावाड़ी' : नारी शक्ति की गाथा

Published in Bohal Shodh Manjusha, ISSN : 2395-7115

Sept. 2026, Vol. 24, Issue -3, Part-2, Page No. 94-98

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES PRINT JOURNAL

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Certificate of Publication

is awarded to

भागवत माणिकराव भांगे, संशोधक

डॉ. तिक्षा म. श्यामकुल, मार्गदर्शक

पदव्युत्तरशिक्षणशास्त्र विभाग, राष्ट्रसंत तुकडोजी महाराज नागपूर विद्यापीठ, नागपूर।

for the paper titled

कोविड काळातील ग्रामीण व शहरी भागातील माध्यमिक स्तरावरील शिक्षकांच्या मानसिक आरोग्याचा तुलनात्मक अभ्यास

Published in Bohal Shodh Manjusha, ISSN : 2395-7115

Sept. 2026, Vol. 24, Issue -3, Part-2, Page No. 99-107

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES PRINT JOURNAL

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ. शारदा वर्मा, अतिथि प्राध्यापक–अर्थशास्त्र,

चन्दुलाल चन्द्राकर शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, धमधा, जिला–दुर्ग (छ.ग.)

अर्चना सिन्हा, पूर्व छात्रा–वाणिज्य,

भिलाई महिला महाविद्यालय, हॉस्पिटल सेक्टर, भिलाई, जिला–दुर्ग (छ.ग.)

for the paper titled

बेमेतरा जिले की ग्रामीण महिलाओं की वित्तीय साक्षरता एवं वित्तीय निर्णय क्षमता का अध्ययन

Published in Bohal Shodh Manjusha, ISSN : 2395-7115

Sept. 2026, Vol. 24, Issue -3, Part-2, Page No. 108-116

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES PRINT JOURNAL

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ० मौ० मुजफ्फर अंसारी

राजनीति विज्ञान,

घिस्सुपुरा–हरिद्वार, उत्तराखण्ड।

for the paper titled

लोकतंत्र का चार सूत्रीय मॉडल वर्तमान राजनीतिक परिप्रेक्ष्य में

Published in Bohal Shodh Manjusha, ISSN : 2395-7115

Sept. 2026, Vol. 24, Issue -3, Part-2, Page No. 117-124

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES PRINT JOURNAL

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Certificate of Publication

is awarded to

प्रेम रोशन एक्का

शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग,
मधुपुर महाविद्यालय, मधुपुर, देवघर।

for the paper titled

झारखण्ड में विस्थापन विरोधी आंदोलन एवं पुनर्वास नीति

Published in Bohal Shodh Manjusha, ISSN : 2395-7115

Sept. 2026, Vol. 24, Issue -3, Part-2, Page No. 125-131

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES PRINT JOURNAL

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Certificate of Publication

is awarded to

प्रिया जायसवाल

रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर।

for the paper titled

सोशल मीडिया का भारतीय राजनीति और मतदाता व्यवहार पर प्रभाव

Published in Bohal Shodh Manjusha, ISSN : 2395-7115

Sept. 2026, Vol. 24, Issue -3, Part-2, Page No. 132-135

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES PRINT JOURNAL

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Certificate of Publication

is awarded to

Monika Sahai

Department of Psychology,
S. N. Sen B. V. P. G. College, Kanpur.

for the paper titled

A META-ANALYTIC REVIEW OF INTERVENTIONS FOR THE PREVENTION AND REDUCTION OF BURNOUT AMONG EMPLOYEES IN THE CORPORATE SECTOR

Published in Bohal Shodh Manjusha, ISSN : 2395-7115

Sept. 2026, Vol. 24, Issue -3, Part-2, Page No. 136-142

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES PRINT JOURNAL

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ. पुनीता गिरि

शोधार्थी (शिक्षा)

सोना देवी विश्वविद्यालय, घाटशिला।

for the paper titled

युवा और दीर्घकालिक नेतृत्व

Published in Bohal Shodh Manjusha, ISSN : 2395-7115

Sept. 2026, Vol. 24, Issue -3, Part-2, Page No. 143-150

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES PRINT JOURNAL

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ० अजय सिंह चौहान, शोध निर्देशक,
असिस्टेन्ट प्रोफेसर, हिंदी विभाग, फीरोज़ गाँधी कॉलेज, रायबरेली

अनूप कुमार, शोध छात्र,
हिंदी तथा आधुनिक भारतीय भाषा विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ।

for the paper titled

कुरूक्षेत्र के व्यक्तिवाची सांस्कृतिक शब्दों का अर्थतात्विक विवेचन

Published in Bohal Shodh Manjusha, ISSN : 2395-7115

Sept. 2026, Vol. 24, Issue -3, Part-2, Page No. 151-160

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES PRINT JOURNAL

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Certificate of Publication

is awarded to

Aayush Chawla

Independent Researcher,
UGC-NET (Geography)

for the paper titled

Geospatial Delineation of Low-Grade Ore Zones and Their Metallurgical Amenability to Beneficiation : Field and Laboratory Evidence from the Noamundi and Kiriburu Sectors, Jharkhand

Published in Bohal Shodh Manjusha, ISSN : 2395-7115

Sept. 2026, Vol. 24, Issue -3, Part-2, Page No. 161-172

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES PRINT JOURNAL

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Certificate of Publication

is awarded to

Aishvary Arya, Research Scholar,

Prof. Arti Bhatt Tailang, Supervisor

Department of Music, Faculty of Performing Arts,
University of Rajasthan

for the paper titled

From Mridang to Pakhawaj to Tabla : Tracing the Morphological and Technical Evolution of North Indian Membranophones
A Study in Organological and Performance-Practice History

Published in Bohal Shodh Manjusha, ISSN : 2395-7115

Sept. 2026, Vol. 24, Issue -3, Part-2, Page No. 173-178

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES PRINT JOURNAL

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Certificate of Publication

is awarded to

आविद खान, शोधार्थी,

प्रो. (डॉ.) मनु, प्रोफेसर,

हिन्दी विभाग, केरल केंद्रीय विश्वविद्यालय, कासरगोड।

for the paper titled

'समर शेष है' उपन्यास में अभिव्यक्त युवा-जीवन

Published in Bohal Shodh Manjusha, ISSN : 2395-7115

Sept. 2026, Vol. 24, Issue -3, Part-2, Page No. 179-182

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES PRINT JOURNAL

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ. दीप्ति सुधीरकुमार देशपांडे

आसि. प्रोफेसर,

शेठ श्री गिरधरलाल डी.एल.एड. कालेज, दाहोद।

for the paper titled

समाज में व्यंग्यकार की भूमिका

Published in Bohal Shodh Manjusha, ISSN : 2395-7115

Sept. 2026, Vol. 24, Issue -3, Part-2, Page No. 183-185

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES PRINT JOURNAL

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Certificate of Publication

is awarded to

रूपानंद बारिक, शोधकर्ता

डॉ. सुषमा पांडे, निर्देशक

सहा प्राध्यापक, शिक्षा संकाय,

आई एस बी एम विश्वविद्यालय, छुरा, गरियाबंद (छत्तीसगढ़)

for the paper titled

शासकीय प्राथमिक विद्यालय के बालक एवं बालिकाओं की आत्म –अवधारणा एवं अधिगम अभिप्रेरणा का तुलनात्मक अध्ययन

Published in Bohal Shodh Manjusha, ISSN : 2395-7115

Sept. 2026, Vol. 24, Issue -3, Part-2, Page No. 186-193

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES PRINT JOURNAL

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Certificate of Publication

is awarded to

Dimpi Singh

Research Scholar (Department of Education)
Pt. Ravishankar Shukla University, Raipur.

for the paper titled

Positive Learning Environments and Student Success : A Review of Equity, Diversity, and Inclusion in Education

Published in Bohal Shodh Manjusha, ISSN : 2395-7115

Sept. 2026, Vol. 24, Issue -3, Part-2, Page No. 194-203

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES PRINT JOURNAL

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Certificate of Publication

is awarded to

श्याम लाल

(एम.ए.हिन्दी) जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय – जोधपुर।

NET – UGC (हिन्दी)

for the paper titled

छायावाद : उद्भव, विकास, प्रमुख प्रवृत्तियाँ और हिंदी काव्य में उसका योगदान

Published in Bohal Shodh Manjusha, ISSN : 2395-7115

Sept. 2026, Vol. 24, Issue -3, Part-2, Page No. 204-209

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES PRINT JOURNAL

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Certificate of Publication

is awarded to

Anjali Sachan, Research Scholar, History

Ashok Kumar Yadav, Research Scholar, Department of Lifelong Learning And Extension
Chhatrapati Shahu Ji Maharaj University, Kanpur.

for the paper titled

From Oppression to Awakening : Women's Status and Social Reforms in Colonial India

Published in Bohal Shodh Manjusha, ISSN : 2395-7115

Sept. 2026, Vol. 24, Issue -3, Part-2, Page No. 210-216

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES PRINT JOURNAL

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Certificate of Publication

is awarded to

Yashna Singh

Ph.d, Research Scholar

for the paper titled

Saptanga Theory and Its Contemporary Relevance in India

Published in Bohal Shodh Manjusha, ISSN : 2395-7115

Sept. 2026, Vol. 24, Issue -3, Part-2, Page No. 217-223

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152